MAST – 119 (N)
आधुनिक संस्कृत नाट्य एवं कथा

उ० प्र० राजर्षि टण्डन
मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

खण्ड–क नाट्यकाव्य (एकांकी)

इकाई–1	प्रो0 अभिराज–राजेन्द्रमिश्रकृत 'प्रतिभापरीक्षणम्'	3
इकाई–2	प्रो0 राधावल्लभत्रिपाठीकृत 'प्रतीक्षा'।	24
इकाई–3	प्रो0 हरिदत्तशर्माकृत ''वधूदहनम्''	46
इकाई–4	प्रो0 शिवजीउपाध्यायकृत 'यौतकम्'।	78

खण्ड–ख कथाकाव्य

इकाई–1	कथा–साहित्य	101
इकाई–2	देवर्षि कलानाथशास्त्रीकृत ''दम्भज्वरः''	110
इकाई–3	प्रो0 प्रभुनाथद्विवेदीकृत ''कनकलोचनः''	118
इकाई–4	डॉ0 महेशगौतमकृत 'अपर्णा'	128
इकाई–5	डॉ0 नारायणदाशकृत 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्'	148
इकाई–6	प्रो0 बनमालीविश्वालकृत 'बुभुक्षा'	155

MAST-119 (N)
आधुनिक संस्कृत नाट्य एवं कथा

परामर्श–समिति

आचार्य सत्यकाम — मा0 कुलपति, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

आचार्य सत्यपाल तिवारी — निदेशक, मानविकी विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

विशेषज्ञ समिति

प्रो0 विनोद कुमार गुप्त — आचार्य, संस्कृत उपनिदेशक मानविकी विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 हरिदत्त शर्मा — पूर्व आचार्य एवं अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 कौशलेन्द्र पाण्डेय — आचार्य एवं अध्यक्ष, साहित्य संस्कृत विद्या, धर्मविज्ञान, सकांय, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

प्रो0 उमेश प्रताप सिंह — पूर्व आचार्य एवं अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

डॉ0 स्मिता अग्रवाल — सहा–आचार्य, संस्कृत, मानविकी विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

सम्पादक

प्रो0 हरिदत्त शर्मा — पूर्व आचार्य एवं अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

समन्वयक / परिमापक

प्रो0 विनोद कुमार गुप्त — आचार्य, उपनिदेशक, संस्कृत मानविकी विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ0 दीप्ति विष्णु — सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग, सी.एम.पी. पी.जी. कॉलेज, प्रयागराज

मुद्रित– अक्टूबर, 2024

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज – (2024)

ISBN- 978-93-48270-86-3

सर्वाधिक सुरक्षित। इस पाठ्यसामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की ओर से श्री विनय कुमार, कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित, 2024.

मुद्रक – के0 सी0 प्रिटिंग एण्ड एलाइड वर्क्स, पंचवटी, मथुरा – 281003.

खण्ड–क नाट्यकाव्य (एकांकी)
इकाई–1 अभिराज–राजेन्द्रमिश्रकृत ''प्रतिभापरीक्षणम्''

इकाई–1 प्रो0 अभिराज–राजेन्द्रमिश्रकृत 'प्रतिभापरीक्षणम्'

इकाई की रूपरेखा

उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 कवि का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व

1.3 एकांकी की कथावस्तु

1.4 अभिनेयता

1.5 एकांकी का अनुवाद

1.6 एकांकी में युगबोध

1.7 बोधप्रश्न

उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई नाट्य–काव्य या एकांकी पर आधारित है। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप–

1. त्रिवेणीकवि राजेन्द्रमिश्र के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व से परिचित हो सकेंगे।
2. उनके द्वारा लिखित एकांकी 'प्रतिभापरीक्षणम्' की कथावस्तु और उसके अनुवाद को समझ सकेंगे।
3. एकांकी के युगबोध के विषय में ज्ञान प्राप्त कर लेंगे।
4. प्रश्न उत्तर के माध्यम से कवि एवं उनकी रचना के विषय में अवगत हो सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

वैश्विक स्तर पर यह सर्वमान्य है कि संस्कृत प्राचीनतम् भाषा है और भाषा की जीवन्तता तभी तक बनी रहती है, जब तक उस भाषा में साहित्य–लेखन सतत रूप से होती हैं। इस दृष्टि से संस्कृत एक जीवान्त भाषा है, जिसमें वेद, पुराण, स्मृति, दर्शन आदि से सम्बन्धित अनेक प्राचीनतम ग्रन्थ समय–समय पर प्रणीत होते रहें। परवर्ती संस्कृत–साहित्य सतत रूप से सर्जनायें होती रहीं। महाकाव्य, खण्डकाव्य, गीतिकाव्य, नाट्यकाव्य, कथाकाव्य आदि विविधाओं में संस्कृत–साहित्य में लेखन होता आ रहा है। वाल्मीकि, व्यास, कालिदास भारवि, माघ, श्रीहर्ष, भवभूति, विशाखदत्त आदिकों ने अपने काव्यग्रन्थ लिखकर संस्कृत–साहित्य को समृद्ध किया। संस्कृत–नाट्यकाव्य–लेखन समुलब्ध संस्कृत नाट्यग्रन्थों के आधार पर महाकवि भास से लेकर निरन्तर हो रहा है। संस्कृत–लेखन की महत्वपूर्ण विधा है– नाट्य–लेखन। नाट्य की उत्पत्ति के सन्दर्भ में आधुनिक विद्वान अनेक मत प्रस्तुत किये है। भारतीय मनीषा देवी उत्पत्ति के सिद्धान्त का पक्षधर है, जिसके विषय में भरतमुनि ने 'नाट्य

शास्त्र' में स्पष्टतः उल्लेख किया है। महाकवि कालिदास के बाद भवभूति, भट्ट नारायण, विशाखदत्त, शूद्रक, हर्षदेव आदिकों ने विविध स्वरूपात्मक नाट्य–लेखन में अनेक परिवर्तन हुए।

आधुनिक संस्कृत–साहित्य के लेखन के अन्तर्गत नाट्य–लेखन भी एक महत्त्वपूर्ण विधा है। प्राचीन संस्कृत–नाटकों की अपेक्षा आधुनिक संस्कृत–नाटकों में अनेक परिवर्तन आये हैं। प्राचीन नाटक प्रसिद्ध पौराणिक एवं ऐतिहासिक हुआ करते थे, परन्तु आधुनिक नाटक, आज जो समाज में हो रहा है उन सामाजिक विसंगतियों को लेकर लिखे जा रहे हैं। वे सच्चे अर्थों में अर्वाचीन संस्कृत–रचनाधर्मिता के एकमात्र पर्याय हैं। प्रस्तुत खण्ड–क की चार इकाइयाँ विभिन्न एकांकियों के अध्ययन पर आधारित हैं।

नाट्यकाव्य नामक इस खंड 'क' में स्वातंत्र्योत्तर अथवा आधुनिक काल में विभिन्न लेखकों की रचनाओं द्वारा समाज को शिक्षित एवं जागरूक करने का प्रयास किया गया है।

इकाई एक से चार तक चार विभिन्न विषयों पर यहाँ एकांकी प्रस्तुत हैं। जिनमें **प्रतिभापरीक्षणम्** नामक प्रथम एकांकी में आधुनिक छात्रों के अंदर गंभीर शैक्षिक ज्ञान के अभाव को बताया गया है। द्वितीय एकांकी **प्रतीक्षा** में एक मध्यम परिवार की युवा कन्या, जो कार्यरत है, की सुरक्षा को लेकर उसके माता–पिता की चिंता को दिखाया गया है। तृतीय और चतुर्थ एकांकी **वधूदहनम्** तथा **यौतकम्** में समाज की एक प्रचलित सामाजिक समस्या दहेज प्रथा को उठाकर उसके उन्मूलन का भी प्रस्तुतीकरण किया गया है।

1.2 कवि का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व

प्रबुद्ध जीवन के प्रत्येक क्षण को सार्थक भाव से जीने वाले, वीणापाणि के चरणों में नैवेद्यवत् समर्पित, अर्वाचीन संस्कृत रचनाधर्मिता, जीवन्तता तथा युगापेक्षी, सारस्वत अध्यवसाय के समर्थ प्रतीक, संस्कृत–हिन्दी–भोजपुरी की त्रिवेणी में परिस्नात रससिद्ध सुकवि एवं तात्त्विक समीक्षक त्रिवेणीकवि प्रो० अभिराज राजेन्द्रमिश्र उन स्थापित साहित्यकारों में हैं, जिन्हें जन–जन का कण्ठहार कहना अत्युक्तिपूर्ण नहीं होगा।

जौनपुर जनपद के स्यन्दिका (सई) नदी के तट पर स्थित द्रोणीपुर नामक ग्राम में प्रो० अभिराज राजेन्द्रमिश्र का जन्म 2 जनवरी, 1943 ई० की ब्रह्मवेला में हुआ था। माता महीयसी अभिराजी देवी तथा पिता पं० दुर्गाप्रसाद मिश्र जी स्मृतिशेष हैं।

प्रारंभिक शिक्षा गांव के विद्यालय से पूर्ण करने के बाद इलाहाबाद विश्वविद्यालय से बी0ए0, एम0ए0 तथा डी0फिल्0 उपाधियां प्राप्त की। शोध कार्य संपन्न करने के साथ ही आपने संस्कृत विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय में 10 दिसंबर 1966 ई से अध्यापन प्रारंभ किया तथा जनवरी 1991 तक लेक्चरर एवं रीडर के रूप में वही कार्यरत रहे। इसी बीच भारत सरकार ने उन्हें बाली द्वीप इंडोनेशिया के उदयन विश्वविद्यालय में विज़िटिंग प्रोफेसर नियुक्त कर दिया, जहाँ आपने 2 वर्ष तक रहकर अंतर्राष्ट्रीय स्तर का उत्कृष्ट साहित्यिक कार्य किया। तदनन्तर वे हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला में प्रोफेसर एवं अध्यक्ष पद पर अधिष्ठित हुए। इसी बीच आप संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय के कुलपति नियुक्त हो गए और 2005 तक रहे।

शताधिक यशस्वी कृतियों के सर्जक प्रोफेसर मिश्रजी को साहित्य अकादमी, के0के0 बिड़ला फाउंडेशन का वाचस्पति सम्मान, कालिदास सम्मान, कल्पवल्ली सम्मान तथा महामहिम राष्ट्रपति सम्मान, उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान का वाल्मीकि पुरस्कार, विश्व भारती पुरस्कार, आदि के अतिरिक्त दिल्ली, मध्य प्रदेश, राजस्थान, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश की आकादमियों के भी 25 से अधिक साहित्यिक पुरस्कार अब तक प्राप्त हो चुके हैं, जिनमें उ0प्र0 शासन साहित्यिक पुरस्कार–ग्यारह बार, डॉ0 रामकुमार वर्मा एकांकी पुरस्कार (इलाहाबाद) सहस्राब्दीरत्नसम्मान (हरियाणा) प्रमुख है। वे 'पद्मश्री' सम्मान से समलङ्कृत हैं।

प्राच्यविद्या के प्रकाण्ड विद्वान्, कविशिरोमणि, साहित्यवेत्ता प्रो० राजेन्द्रमिश्र ने 02 महाकाव्य, 19 खण्डकाव्य, 6 नवगीत संग्रह, 65 एकाङ्की, दो स्वतन्त्र नाटिकाएँ, 09 कथासंग्रह 10 शतककाव्य तथा दर्जनों उच्चस्तरीय समीक्षापरक ग्रन्थों का प्रकाशन कर अर्वाचीन संस्कृत–वाङ्मय को विलक्षण स्थिरता तथा गौरव प्रदान किया है। यवद्वीपीय रामायण का प्रथम बार देवनागरी लिप्यन्तरण एवं हिन्दी रूपान्तर कर उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति अर्जित की है। संस्कृत, हिन्दी, भोजपुरी, अंग्रेज़ी भाषा में अब तक प्रो० मिश्र के 90 ग्रन्थों का प्रकाशन हो चुका है। जिसमें मृगाङ्कदूतम्, सप्तधारा एवं समीक्षासौरभम् कालजयी कृतियाँ सम्पूर्णानन्द विश्वविद्यालय से उनके कुलपतित्व काल में प्रकाशित हुई हैं।

बानगी के तौर पर प्रो० अभिराज राजेन्द मिश्र के द्वारा प्रणीत **'मण्डूकपण्डितम्'** प्रहसन रचयिता को आधुनिक संस्कृत–साहित्य की सभी विधाओं में अनितरसाधारण प्रतिभा के धनी, विदग्ध भङ्गीभणिति के चतुर रचनाकार तथा नाट्य–साहित्य की सृष्टि में अभिनव प्रजापति कहने के लिए बाध्य करता है। यह हास्य से ओत–प्रोत संवादों में अनपढ़ ब्राह्मण की पाखण्डी प्रवृत्ति, अर्थलिप्सा तथा असत्कर्म चातुर्य को प्रदर्शित करता है। इसमें समाज में व्याप्त अविवेक एवं चमत्कार का चित्रण करते हुए समाज को जागरूक करने का प्रयास किया गया है।

वैदुष्य एवं पाण्डित्य–व्यसन की विरासत प्रो० अभिराज राजेन्द्रमिश्र को अपने पितामह परमभागवत पं० रामानन्द मिश्र एवं पितृव्य प्रो० आद्याप्रसाद मिश्र (पूर्व कुलपति, प्रयाग विश्वविद्यालय) से मिली। कवित्व के संस्कार कोमल शैशव में ही उद्बुद्ध हो उठे तथा समय की गति के साथ परिपाकोन्मुख होते रहे।

1.3 एकांकी की कथावस्तु

प्रतिभापरीक्षणम् आज के विद्यार्थियों के सतही ज्ञान तथा उनकी विकृत मानसिकता पर एक करारा व्यङ्ग्य है। आज के बच्चे पश्चिमी अपसंस्कृति से आयातित छिछले मनोरंजनों तथा जानकारियों के पीछे जिस तरह से पागल हैं तथा चरित्र का निर्माण करने वाले धीर–गम्भीर ज्ञान के प्रति जिस तरह पूर्णतः उदासीन हैं–उसका रोचक खुलासा प्रस्तुत एकांकी में किया गया है।

स्थिति यह है कि **पोकेमान, टेनस्पोर्ट्स तथा टॉम ऐण्ड जेरी** कार्यक्रमों में डूबे भारतीय बालकों को अपने पौराणिक तथा रामायण–महाभारत से जुड़े धारावाहिक रास नहीं आते। उन्हें अण्डरटेकर, वटिष्टा, शान माइकल्स

और एडी गुरेरों जैसे कुश्तीबाजों का तो राई–रत्ती ज्ञान है, परन्तु भारत के इतिहास, भूगोल, साहित्य एवं संस्कृति का नाम मात्र का भी ज्ञान नहीं।

सन्दर्भ है एक विद्यालय में प्रवेश का। इतिहास, भूगोल, दर्शन तथा हिन्दी–संस्कृत के विशेषज्ञ प्राचार्य के कक्ष में उपस्थित हैं तथा प्रत्याशी छात्र एक–एक कर आते हैं साक्षात्कार–हेतु। प्रत्येक छात्र की परीक्षा उसी विषय का विशेषज्ञ विद्वान् लेता है। प्रत्येक प्रत्याशी से पाँच सवाल किये जाते हैं जिनका वह अत्यन्त मूर्खतापूर्ण, असम्बद्ध, कपोलकल्पित तथा उपहासास्पद उत्तर देता है। प्रत्याशी के उत्तरों से सिद्ध हो जाता है कि उसे विषय का कुछ भी ज्ञान नहीं है।

विशेषज्ञ का माथा तो तब चकरा जाता है जब वह विद्यालय के प्राचार्य महोदय की टिप्पणियाँ सुनता है। उनका 'अज्ञान' प्रत्याशियों के अज्ञान को भी मात दे देता है। विशेषज्ञ विद्वान् हतप्रभ रह जाते हैं तथा उस विद्यालय की नियति को मन ही मन कोसते हैं।

इतिहास का प्रत्याशी औरंगजेब को गुलामवंश का संस्थापक, रजिया सुल्तान को शाहजहाँ की पुत्री तथा फीरोजशाह तुगलक को फतेहपुर सीकरी के महलों का निर्माता बताता है। तो भूगोल का प्रत्याशी सहारा मरुस्थल श्री सुव्रतराय के घर में तथा मीकांग नदी को अफ्रीका महाद्वीप के कांगों देश में बताता है।

इसी तरह दर्शन का छात्र सांख्यदर्शन के पुरुष की परिचयात्मक व्याख्या व्याकरण के प्रथम, मध्यम एवं उत्तम पुरुष के रूप में करता है तथा वेदान्त की माया को महाठगिनी निरूपित करता है, कबीरदास का हवाला देकर।

हिन्दी का प्रत्याशी तारसप्तक को मीराबाई का वाद्य सिद्ध करता है तथा मुंशी प्रेमचन्द के गोदान उपन्यास को मृत्युवेला में लिया जाने वाला गोदान बताता है।

संस्कृत का प्रत्याशी वेदों का रचनाकार कालिदास को बताता है तथा पञ्चतंत्र में पञ्चपाण्डवों की कथा निरूपित करता है। और तो और, स्वयं प्राचार्य जी बाबर एवं राणाप्रताप का युद्ध हल्दीघाटी के मैदान में हुआ बता कर डॉ० यूसुफ की बोलती बन्द कर देते हैं।

1.4 अभिनेयता

'नाट्यनवरत्नम्' के लेखक अभिराज राजेंद्र मिश्र केवल नाटककार ही नहीं, अपितु विंशशताब्दी के उत्तरार्ध के युगनिर्माता कवि भी हैं । अपनी विभिन्न कृतियों के लिए विभिन्न पुरस्कार पाने वाले डॉक्टर मिश्र का 2007 में 'नाट्यनवरत्नम्' नामक नाटक–संग्रह प्रकाशित हुआ। संस्कृत में नाटक यद्यपि कोई नवीन विधा नहीं है फिर भी अभिराजजी के संस्कृत–नाटकों में अनेक नई प्रवृत्तियाँ देखी जा सकती हैं। आपके संस्कृत–लघु नाटक भारत के अनेक प्रतिष्ठित मंचों में सफलतया अभिनीत हुए हैं। उनके नाटकों की सफलता के रहस्य में एक कारण है इनका विषय–चयन। आपने नाटकों के माध्यम से विविध सामाजिक, मनोवैज्ञानिक समस्याओं को चित्रित किया है। न केवल सामाजिक, अपितु ऐतिहासिक और पौराणिक नाटक भी आपने लिखे हैं। 'नाट्यनवरत्नम्', नाट्य संकलन आधुनिक संस्कृत–नाट्य–साहित्य की रंगचेतना में एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है। इस संकलन की रंगमंचीय संभावनाओं

में अभिनय, रूप, निर्देशन आदि के सहज समागम द्वारा रंगमंच की प्रकृष्ट उपलब्धि प्राप्त हुई है। पौराणिक कथानकों को शिक्षाप्रद, सार्वकालिक संदर्भों से जोड़कर प्रस्तुत करने की दिशा में अभिराज का एक सफल प्रयास है यह नाट्यकृति। अभिनयानुकूल दिशा निर्देश, सरल प्रवाहमयी भाषा, छोटे–छोटे व्यावहारिक संवाद, सहज वस्तु–संगठन इस नाटक की सफलता के प्रभावशाली आयाम हैं।

1.5 प्रतिभापरीक्षणम्–एकांकी का अनुवाद

कस्मिंश्चिद् विद्यालये प्रवेशार्थिनां सम्मर्दः। प्रवेशार्थिभिस्सह तेषामभिभावका अपि समागता वर्तन्ते। अकस्मादेव तारंवदध्वनिः श्रूयते।

कृपया सावहिताः शृण्वन्तु। विज्ञाप्यन्ते प्रवेशार्थिनो यत्तेषां मौखिकी परीक्षा कतिपयक्षणानन्तरमेव प्रारप्स्यते। प्रत्येकं प्रवेशार्थी पञ्च प्रश्नान् समाधास्यति। प्रश्नास्तस्मिन्नेव विषये प्रक्ष्यन्ते यो हि प्रवेशार्थिनो, विशेषाध्ययनविषयो भविष्यति। तत् प्रतीक्षन्तां भवन्तः।

(प्रवेशार्थिनां सम्मर्दे कलरवस्समुत्तिष्ठति)

किसी विद्यालय में प्रवेशार्थियों की भीड़ है। प्रवेशार्थियों के साथ उनके अभिभावक भी आए हुए हैं। अचानक ही जोर की ध्वनि सुनाई देती है।

कृपया सावधानीपूर्वक सुनें। बताया जाता है कि विद्यालय में प्रवेश के लिए छात्रों की मौखिक की परीक्षा कुछ ही क्षणों के बाद शुरू होगी। प्रत्येक प्रवेशार्थी से पाँच प्रश्न पूछे जाएंगे। प्रश्न उस विषय से पूछे जाएंगे जिसमें उसका विशेष अध्ययन होगा। तब तक आप सब प्रतीक्षा कीजिए।

(प्रवेशार्थियों की भीड़ का शोर उठता है।)

अभिभावकः –(छात्रं प्रति)

वत्स! अलं सम्भ्रमेण। उद्वेगो न कार्यः। उद्वेगेन सर्वं विक्रियते। प्रश्नोत्तरे त्वरा न कार्या। त्वरयाऽपि कदाचित् सङ्कटमापतति। श्रुतं न वा?

छात्रः –तात! श्रुतम्। नाहं त्वरयिष्यामि। प्रश्नं सम्यक्तया श्रुत्वैव तदुत्तरं दास्ये।

अभिभावकः –साधु वत्स! साधु! यदा परीक्षकः पृच्छेत् कस्तव विशेषाध्ययनविषय इति तदा किं वक्ष्यसि?

छात्रः –(सगर्वम्)

किमन्यत् तात! सत्वरं कथयिष्यामि खेलादशकमिति। एतदेवाङ्गलभाषायां **टेनस्पोर्ट्स** इत्यपि कथ्यते। यद्यसौ (इत्यर्धोक्ते)

अभिभावकः –(साश्चर्यम्) अये मूर्ख! नाऽयन्ते विशेषाध्ययनविषयः। नेदं वक्तव्यम्।

अभिभावक– (छात्र से)

बेटा! जल्दबाजी मत करना। उद्वेग मत करना। उद्वेग से सब कुछ नष्ट हो जाता है। प्रश्न का उत्तर देने में शीघ्रता मत करना। तुरंत उत्तर देने से कभी–कभी संकट आ जाता है। तुमने सुना कि नहीं?

छात्र– पिताजी हाँ सुना। मैं शीघ्रता नहीं करूँगा। प्रश्न को अच्छी प्रकार से सुनकर ही उसका उत्तर दूँगा।

अभिभावक– बहुत अच्छा बेटा बहुत अच्छा। जब परीक्षक पूछेगा कि किस विषय में तुम्हारा विशेष अध्ययन है तो क्या कहोगे?

छात्र– (गर्वपूर्वक) और क्या कहूँगा पिताजी! शीघ्र ही कहूँगा। खेलादशक, इसी को अंग्रेज़ी भाषा में टेन स्पोर्ट्स भी कहते हैं। क्योंकि इसमें (ऐसा आधा ही कहता है)

अभिभावक– (आश्चर्य के साथ) अरे मूर्ख! यह विशेष अध्ययन का विषय नहीं है। यह नहीं कहना है।

छात्रः –(तातवचनमुपेक्ष्य)

जानामि जानामि यद् भवान् विज्ञापयितुमिच्छति। तात! तदेवाहं कथयन्नासम्।

श्रूयतां तावत्। यदाऽसौ परीक्षकः प्रक्ष्यति को नु मल्लस्तेऽभिमततम इति तदाऽहं भणिष्यामि अण्डरटेकर इति। तालतुङ्गोऽयं मल्लो धरागर्भे द्वादशहोरां यावदुवास। तत एव डैडमैन इत्यपि कथ्यते आङ्ग्ल्याम्। अन्येऽपि केचन मह्यं रोचन्ते यथा शान माइकल्सः रेण्डियाटनः, गोल्डबर्गः केनः एडी गुरेरो क्रिसजेरिको मार्क हेनरी च। एतेषां समेषां गौरवैतिह्यं सम्यग् जानामि।

(पितरं मूर्च्छितं दृष्ट्वा सभयम्)

तात! किं जातम्? कथमकस्मादेव भवान् धराशायी सञ्जातः?

अभिभावकः–(प्रबोधं नाटयन्)

न किमपि, न किमपि। अलं भयेन। सर्वथा प्रकृतिस्थोऽस्मि।

छात्रः–तात! श्रुतं भवता मदीयमुत्तरम्? द्रक्ष्यन्ति भवन्तो यदहमवश्यमेव मौखिक्यां प्रथमो भविष्यामि।

अभिभावकः (आत्मगतम्)

मूढ गर्दभ! ज्ञातम्मया ते भविष्यम्। हे परमेश्वर! दूरदर्शनमिदं कीदृशमनर्थमुत्पादयति? किं भविष्यत्यस्य राष्ट्रस्य? अद्यतनाश्छात्राः केवलं क्रिकेटक्रीडेतिहासं जानन्ति, चलचित्रगीतानामन्त्याक्षरप्रतिस्पर्धा जानन्ति, हालीवुड–बालीवुडरहस्यमवगच्छन्ति, पोकेमानकथां दिदृक्षन्ति, कार्टूनवृत्तं वा द्रष्टुं समीहन्ते।

शिव शिव! क्व गतमस्मादृशां शैशवम्?

(इति दीर्घमुच्छ्वसिति)

छात्र– (पिता के वचन की उपेक्षा करके)

जानता हूँ जानता हूँ जो आप कहना चाहते हैं। पिताजी! मैं वही कह रहा था।

तो सुनिए जब वह परीक्षक पूछेगा किस खेल या मल्ल युद्ध में तुम्हारा अभिमत है तब मैं उसे अंडरटेकर ऐसा कहूँगा। ऊँची कूद वाले इस खेल में धारा गर्भ में 12 घंटे रहता था इसीलिए यह अंग्रेज़ी में 'डैड मैन' कहलाता है। और जो कुछ भी मुझे अच्छा लगता है, जैसे शॉन माइकल्स, रैंडियाटन, गोल्डबर्ग, कैन एडीगुरेरो, क्रिसजेरिको, मार्क हेनरी। इन सब के इतिहास को मैं अच्छी तरह जानता हूँ।

(पिता को मूर्छित देखकर भय के साथ)

पिताजी– क्या हुआ? क्यों आप इस प्रकार से अचानक (धराशायी) मूर्च्छित हो गए?

अभिभावक– (ठीक होने का नाटक करता हुआ)

कुछ नहीं, कुछ नहीं। डरने की कोई बात नहीं। मैं एकदम ठीक हूँ।

छात्र– पिताजी! सुना मेरा उत्तर? देखिएगा मैं अवश्य ही मौखिक परीक्षा में प्रथम आऊंगा।

अभिभावक– (अपने मन में)

मूर्ख गधे! मुझे तुम्हारा भविष्य पता है। हे परमेश्वर! दूरदर्शन यह किस प्रकार के अनर्थ को उत्पादित कर रहा है। इस राष्ट्र का क्या भविष्य होगा? आज के छात्र केवल क्रिकेट क्रीडा के इतिहास को जानते हैं। चलचित्र गीत में अंताक्षरी प्रतिस्पर्धा को जानते हैं, हॉलीवुड बॉलीवुड को जानते हैं, पोकेमोन कथा को देखते हैं, और केवल कार्टून वृत्त को ही देखना चाहते हैं।

शिव शिव! हम लोगों के जैसी बाल्यावस्था कहाँ गई?

(ऐसा कहकर दीर्घ सांस लेता है)

(अकस्मादेव तारंवदध्वनिः श्रूयते)

श्रूयतां श्रूयताम्। सम्प्रति प्रारभते प्रवेशार्थिनां मौखिकी परीक्षा। नाम्नाऽऽहूतः प्रवेशार्थी निजाङ्कपत्रादिकं समादाय प्राचार्यप्रकोष्ठमागच्छतु।

सेवकः –(बहिर्निष्क्रम्य)

गोपालवर्मा समायातु। गोपालवर्मा उपस्थितो वर्तते न वा?

(त्वरया धावन्तं छात्रं दृष्ट्वा)

अलम् अलं धावनेन। मन्ये त्वमेव गोपालवर्माऽसि। एहि, मामनुसर।

(गोपालवर्मा प्रविशति)

प्राचार्यः –गोपालवर्मा? उपविश तावत्। कस्ते विशेषाध्ययनविषयः?

गोपालः इतिहासः श्रीमन्! तत्रापि मध्यकालीनेतिहासे मम विशेषाभिरुचिर्वर्तते।

प्राचार्यः –साधु साधु! तत एव प्रश्नाः करिष्यन्ते।

(सदस्यं प्रति)

डॉ० यूसुफ! कृपया पृच्छतु भवान्।

डॉ० यूसुफः –भोः गुलामवंशस्य संस्थापकः क आसीत्?

गोपालः –श्रीमन् औरंगजेबः। आलमगीर इत्यपि तस्यैव नाम।

(अचानक ही जोर की ध्वनि सुनाई देती है)

सुनिए सुनिए अब मौखिक परीक्षा प्रारंभ होने जा रही है। प्रवेशार्थियों का नाम बुलाये जाने पर वे अपने अंक पत्र आदि सब लेकर के प्राचार्य के कमरे में आए।

सेवक– (बाहर निकलकर)

गोपाल वर्मा आए। गोपाल वर्मा है या नहीं?

(शीघ्रता से दौड़ते हुए छात्र को देखकर)

अरे! रुको रुको दौड़ो नहीं। मुझे लगता है तुम ही गोपाल वर्मा हो। आओ मेरे पीछे आओ।

(गोपाल वर्मा प्रवेश करता है)

प्राचार्य– गोपाल वर्मा? अच्छा बैठ जाओ। तुम्हारा किस विषय में विशेष अध्ययन है?

गोपाल– इतिहास में श्रीमान्! उसमें भी मध्यकालीन इतिहास में मेरी विशेष रुचि है।

प्राचार्य– बहुत अच्छा! बहुत अच्छा! तो फिर प्रश्न करते हैं। (सदस्यों को देखकर)

डॉक्टर युसूफ! कृपया प्रश्न पूछिए।

डॉक्टर युसूफ– अच्छा बताओ। गुलाम वंश का संस्थापक कौन था?

गोपाल– श्रीमान्! औरंगजेब। आलमगीर भी उसका ही नाम है।

डॉ० यूसुफः –(साश्चर्यम्)

एवम्? को नु खलु मुगलनृपतिर्वाचनालय–सोपानमार्गादवतरन् भूमौ निपत्य मृतः।

गोपालः–(किञ्चिद्विचिन्त्य सोल्लासम्)

श्रीमन्! शेरशाहस्सूरी।

डॉ० यूसुफः –(सोद्वेगं मस्तके हस्तं निधाय)

रजिया सुल्ताना कस्य शहंशाहस्य पुत्री आसीत्?

गोपालः –श्रीमन्! शाहजहानस्य। अन्येऽपि द्वे कन्यके तस्य जहाँनारा इति, रौशनारेति च।

डॉ० यूसुफः –फतेहपुर–सीकरीक्षेत्रे केन शहंशाहेन विविधाः राजमहालया निर्मापिताः?

गोपालः –श्रीमन्! फीरोजशाह–तुगलकेन।

डॉ० यूसुफः –सम्प्रति अन्तिमः प्रश्नः। बाबरस्य युद्धं केन सार्धं जातम्?

गोपालः –(सन्देहं नाटयन्)

श्रीमन्! हुँमायुना सार्धमथवा राणासंग्रामसिंहेन सार्धम्।

डॉ० यूसुफ :–(साट्टहासम्)

वर्धस्व, वर्धस्व वत्स! इतिहासपुरुषोऽसि! गच्छ तावत्।

डॉक्टर युसूफ– (आश्चर्य के साथ) ऐसा है? कौन सा वह मुगल शासक था जो वाचनालय की सीढ़ी से नीचे गिरकर मर गया।

गोपाल– (कुछ सोच करके उल्लासपूर्वक)

श्रीमान्! शेरशाह सूरी।

डॉक्टर युसूफ– (उद्वेग के साथ सर पर हाथ रखकर)

रजिया सुल्तान किस शहंशाह की पुत्री थी?

गोपाल– श्रीमान्! शाहजहाँ की। उसकी दो पुत्रियाँ और थीं–जहाँ आरा और रोशन आरा।

डॉ यूसुफ– फतेहपुर सीकरी क्षेत्र में किस शहंशाह ने बहुत राजमहल बनवाए थे?

गोपाल– श्रीमान् फिरोज शाह तुगलक ने।

डॉ यूसुफ– अब अंतिम प्रश्न। बाबर का युद्ध किसके साथ हुआ था?

गोपाल– (संदेह का नाटक करते हुए)

श्रीमान्! हुमायूं के साथ अथवा राणा संग्राम सिंह के साथ।

डॉ यूसुफ– (जोर की हंसी के साथ)

बहुत अच्छा, बहुत अच्छा बेटा! तुम इतिहास–पुरुष हो। अच्छा जाओ।

प्राचार्यः–हन्त, कीदृशं मौढ्यमद्यतनच्छात्राणाम्! एकमपि प्रश्नं नाऽयं सम्यक्तया समुत्तरितवान्। मयाऽपि नाम पञ्चत्रिंशद्वर्षपूर्वं मध्यकालीनेतिहासोऽधीतः। तथापीदानीं सुष्ठु स्मरामि यद् बाबरस्य युद्धं राणाप्रतापसिंहेन सार्धं जातं हल्दीघाटीरणभूमौ। अयं मूर्खस्तावत् हुँमायोः संग्रामसिंहस्य वा नाम गृह्णाति।

डॉ० यूसुफः–(विस्मयविमूढस्सन् प्राचार्यं पश्यन्)

श्रीमन् प्राचार्यवर्य! क्व भवान् बृहस्पतिबुद्धिः क्व चायं ह्यस्तनो बालकः। कथं भवन्तं तुलयेत्?

(हस्तं सम्मेलयन्)

भवदीयम् इतिहासज्ञानं दृष्ट्वा सत्यमेव चकितोऽस्मि। सम्प्रति गच्छामि।

(इति सकैतवस्मितं प्रकोष्ठान्निस्सरति)

सेवकः—(पुनर्बहिरागत्य)

सुदर्शन! कोऽस्ति सुदर्शनः? सुदर्शन आगच्छतु।

(सुदर्शनः प्रविशति प्रकोष्ठम्)

प्राचार्य— बड़े दुख की बात है, आजकल के छात्रों में कितनी मूर्खता है ।एक भी प्रश्न का इसने सही जवाब नहीं दिया। मैंने भी 35 वर्ष पूर्व मध्यकालीन इतिहास पढ़ा है। तथापि अच्छी तरह याद है कि बाबर का युद्ध राणा प्रताप सिंह के साथ ही हल्दीघाटी की रणभूमि में हुआ था। यह मूर्ख हुमायूं का और संग्राम सिंह के नाम लेता है।

डॉ0 युसूफ— (विस्मय से मूर्ख प्राचार्य को देखते हुए)

श्रीमान् प्राचार्य जी! कहाँ आपकी बृहस्पति बुद्धि और कहाँ यह कल का बालक। आप दोनों की कैसे तुलना हो सकती है?

(हाथ मिलाते हुए)

आप दोनों के इतिहास ज्ञान को देखकर मैं सच में आश्चर्यचकित हूँ। अब जाता हूँ।

(ऐसा कहकर मुस्कान के साथ कमरे से बाहर निकल जाता है)

सेवक (पुनः बाहर आकर)

सुदर्शन! कौन है सुदर्शन? सुदर्शन आए।

(सुदर्शन कमरे में प्रवेश करता है)

प्राचार्यः—(पत्रजातमवलोकयन्)

हुँः सुदर्शनो भवान्? विशेषाध्ययनविषयो भवदीयो भारतीयं दर्शनम्। एवम्?

सुदर्शनः—आम् श्रीमन्!

प्राचार्यः—(सदस्यं प्रति)

डॉ० सत्यपाल! कृपया परीक्षताम्।

डॉ० सत्यपालः—वत्स सुदर्शन! किन्नाम भारतीयं दर्शनम्?

सुदर्शनः—श्रीमन्! भारतीयं दर्शनं पुस्तकमेकम्। अस्य लेखको डॉ० उमेशमिश्रः। डॉ० पारसनाथद्विवेदिनाऽपि लिखितं पुस्तकमिदम्।

डॉ० सत्यपालः—(साश्चर्यम्)

भवतु, भवतु। सम्प्रति ब्रूहि सम्यग् विचिन्त्य यद् ब्रह्मनिरूपणं क्व वर्तते?

सुदर्शनः–श्रीमन्! वर्तते तु सर्वत्र। परन्तु ब्रह्मपुराणे ब्रह्मवैवर्तपुराणे ब्रह्माण्डपुराणे च विशेषरूपेण वर्तते।

डॉ० सत्यपालः–(सोल्लुण्ठम्)

विलक्षणमधीतं त्वया। साधु साधु। अथ माया नाम का?

सुदर्शनः–ईश्वरस्य पत्नी माया। कबीरदासस्तां महाठगिनीं घोषयति।

प्राचार्य– (सभी पत्रों को देखता हुआ)

आप सुदर्शन है? विशेष अध्ययन के विषय में आपका भारतीय दर्शन है ऐसा ही है ना?

सुदर्शन– जी श्रीमान्!

प्राचार्य– (सदस्यों के प्रति)

डॉ0 सत्यपाल– कृपया प्रश्न पूछिए।

डॉ0 सत्यपाल– बेटा सुदर्शन भारतीय दर्शन किसे कहते हैं?

सुदर्शन– श्रीमान् जी! भारतीय दर्शन एक पुस्तक है। इसके लेखक डॉक्टर उमेश मिश्र हैं। डॉक्टर पारस नाथ द्विवेदी ने भी यह पुस्तक लिखी है।

डॉ0 सत्यपाल– (आश्चर्य के साथ)

ठीक है ठीक है। अब अच्छी तरह सोच कर बताइए ब्रह्म–निरूपण क्या होता है?

सुदर्शन– श्रीमान्! वह रहता तो सर्वत्र है, किंतु ब्रह्मपुराण में, ब्रह्मवैवर्त पुराण में, ब्रह्मांड पुराण में विशेष रूप से पाया जाता है।

डॉ0 सत्यपाल– (लुटे हुए से)

तुम्हारा अध्ययन विलक्षण है। बहुत अच्छा, बहुत अच्छा। अच्छा बताओं, माया क्या है?

सुदर्शन– ईश्वर की पत्नी माया है। कबीरदास ने उसको महाठगनी कहा है।

डॉ० सत्यपालः–(साट्टहासम्)

साधु सुदर्शन! अद्य ज्ञातम्मया भारतीयदर्शनस्य रहस्यम्। किञ्चिदपरमपि ब्रूहि। सांख्यदर्शने पुरुषस्य चर्चा वर्तते। कोऽयं **पुरुषः**?

सुदर्शनः–(साहङ्कारम्)

श्रीमन्! पुरुषस्तावत् क्रियाया निष्पादकः। स च त्रिविधो भवति प्रथमपुरुषः मध्यमपुरुषः उत्तमपुरुषश्च।

डॉ० सत्यपालः–(ललाटं संस्पृशन्)

धन्योऽसि वत्स! धन्यास्तव शिक्षकाः। धन्यतामुपगतोऽसौ विद्यालयो यत्र त्वयाऽधीतम्। सम्प्रति पृच्छ्यतेऽन्तिमप्रश्नः। सर्वे जना मुक्तये प्रयतन्ते इति दार्शनिकाः कथयन्ति। तत् केयं मुक्तिः?

सुदर्शनः—(स्मिताननस्सन्)

श्रीमन्! मुक्तिर्नाम कार्यसमाप्तिः। कृषकः कृषिकार्यं समाप्य मुक्तिं लभते, छात्रः परीक्षां दत्वा मुक्तिं लभते, गृहिणी च महान्से भोजनं सम्पच्य मुक्तिं लभते (इत्यर्धोक्ते)

डॉ० सत्यपालः—त्वञ्च मौखिकीं परीक्षां दत्वा मुक्तः! (इति निर्भरं हसति)

गच्छ वत्स! त्वादृशं महामेधाविनं छात्ररत्नमद्यैव जीवने दृष्टवानस्मि। गच्छ यथासुखम्।

प्राचार्यः—(अभिभूतस्सन्)

डॉ० सत्यपाल! सत्यमेव सुदर्शनोऽतीवप्रतिभाशाली छात्रः। पुरुषविषयकं मुक्तिविषयकं च प्रश्नं साधु समुत्तरितवान् माणवकः। किमस्य नाम चयनसूच्यां सम्मेलयानि?

डॉ० सत्यपालः—(नेत्रे विस्फार्य प्राचार्यं पश्यति)

प्रणम्यो भवान्। एकतस्तु सुदर्शनस्य प्रतिभाऽपरतश्च भावत्की। रत्नं रत्नेन सङ्गच्छतामित्यहमपि कामये।

(इति शनैर्निष्क्रामति)

डॉ0 सत्यपाल— (जोर की हंसी के साथ)

बहुत अच्छा सुदर्शन! आज मुझे भारतीय दर्शन का रहस्य पता चला। कुछ और भी बताओ। सांख्य दर्शन में पुरुष की चर्चा हुई है । यह पुरुष कौन है?

सुदर्शन— (अहंकार के साथ) श्रीमान्! पुरुष क्रिया का निष्पादक है। वह तीन प्रकार का होता है प्रथम पुरुष, मध्यम पुरुष, उत्तम पुरुष।

डॉ0 सत्यपाल— (माथे पर हाथ रखता हुआ)

हे पुत्र! तुम धन्य हो। तुम्हारे शिक्षक धन्य हैं। वह विद्यालय धन्य है जहाँ तुमने पढ़ाई की है। अब अंतिम प्रश्न पूछता हूँ ।सभी लोग मुक्ति के लिए प्रयास करते हैं ऐसा दार्शनिकों ने कहा है। तो यह मुक्ति क्या है?

सुदर्शन— (मुस्कुराहट के साथ) श्रीमान्! कार्य की समाप्ति को ही मुक्ति कहते हैं। कृषक या किसान खेती के काम को समाप्त करके मुक्ति प्राप्त करता है, छात्र परीक्षा देकर मुक्ति प्राप्त करता है, गृहिणी रसोई में भोजन बनाकर मुक्ति प्राप्त करती है (ऐसा आधा कहते हुए)

डॉ0 सत्यपाल— और तुम मौखिकी परीक्षा देकर मुक्त हो गए। (ऐसा कहकर हंसता है) जाओ बेटा! तुम्हारे जैसा मेधावी छात्ररत्न मैंने आज ही जीवन में देखा। जाओ और सुखी रहो।

प्राचार्य— (अभिभूत होता हुआ)

डॉ0 सत्यपाल! सच में सुदर्शन बहुत अधिक प्रतिभाशाली छात्र है। पुरुष के विषय में और मुक्ति के विषय में आपने जो प्रश्न पूछा था उसका छात्र ने बहुत अच्छा उत्तर दिया। क्या इसका नाम चयन सूची में सम्मिलित होगा?

डॉ0 सत्यपाल– (आंखें फैलाकर प्राचार्य को देखता है) मैं आपको प्रणाम करता हूँ। एक ओर तो सुदर्शन की प्रतिभा है और दूसरी ओर आपकी। रत्न; रत्न के साथ ही सुशोभित हो, ऐसी मैं कामना करता हूँ।

(ऐसा कहकर धीरे से निकल जाता है)

सेवकः–(जृम्भां नाटयन् बहिरागत्य)

निर्मला कुत्रास्ति? निर्मले! क्व भवती? निर्मलायाः पर्यायस्सम्प्रति।

(काचित्कन्या प्रकोष्ठं प्रविशति)

प्राचार्यः–(सदस्यं प्रति)

डॉ० रत्नमाये! इयं निर्मला। निर्मला साहनीति। अस्या विशेषाध्ययन–विषयोऽस्ति भूगोलम्। भवती च विषयविशेषज्ञा। कृपया परीक्षताम्।

डॉ० रत्नमाया–वत्से। सहारामरुस्थलं क्व वर्तते?

निर्मला–(सहर्षम्)

जानामि जानामि। **श्रीसुव्रतरायस्य गृहाङ्गणे!**

डॉ० रत्नमाया–(सरोषम्)

किमिदं प्रलपसि? श्रीसुव्रतरायस्य गृहाङ्गणेन सह सहारामरुस्थलस्य कस्सम्बन्धः?

निर्मला–आचार्ये! सहारापदवाच्यस्तु सुव्रतराय एव। सहारा वायुसेवा, सहारोद्योगो वा तस्यैव।

सेवक– (जम्हाई लेने का नाटक करते हुए बाहर आकर)

निर्मला कहाँ है? निर्मला !आप कहाँ हो? निर्मला की जगह कोई आए!

(कोई लड़की कमरे में प्रवेश करती है)

प्राचार्य– (सदस्यों की ओर देख कर)

डॉ0 रत्नमाया– यह निर्मला है। निर्मला साहनी। इसके विशेष अध्ययन का विषय है भूगोल। आप भूगोल की विषय–विशेषज्ञ है। कृपया इसकी परीक्षा लीजिए।

डॉ0 रत्नमाया– बेटा, सहारा मरुस्थल कहाँ है?

निर्मला– (हर्ष के साथ)

जानती हूँ जानती हूँ। श्री सुब्रत राय सहारा के घर के आंगन में।

डॉ0 रत्नमाया– (गुस्से के साथ)

यह क्या प्रलाप है, बेकार की बात है श्री सुब्रत राय सहारा के घर के आंगन के साथ सहारा मरुस्थल का क्या संबंध हैं?

निर्मला– आचार्या, सहारा (पद से) शब्द से तो केवल सुब्रत राय है। सहारा वायु सेवा, सहारा उद्योग सब कुछ उनका ही तो है।

डॉ० रत्नमाया–(सोद्वेगम्)

मुञ्चेदम्। अपरः प्रश्नः। मीकाङ्गनाम्नी नदी क्व प्रवहति?

निर्मला–(स्मृतिं नाटयन्ती)

अफ्रीकामहाद्वीपस्थे काङ्गोदेशे। **काङ्गो देशे काङ्गनदी**!

डॉ० रत्नमाया–साधु वत्से। काङ्गोदेशं विहाय मोकाङ्गनदी क्वाऽन्यत्र प्रवहति? विलक्षणमेव तव भूगोलज्ञानम्!

निर्मला–(विनयं नाटयन्ती)

धन्याऽस्मि जाता। धन्यवादाः।

डॉ० रत्नमाया–भवतु, निर्मले। तृतीयोऽयं प्रश्नः सम्प्रति। संसारस्य को देशः सागरतलादप्यधोवर्ती?

निर्मला–आचार्ये! को न जानाति तान् देशान्? कारनीकोबारद्वीपं श्रीलङ्काद्वीपं च। द्वीपद्वयमिदं सागरस्य सूनामीतरङ्गेषु सर्वथा मग्नमासीत्।

डॉ० रत्नमाया–चिरञ्जीव भद्रे! साधूत्तरितम्। मूर्खास्तावन्नीदरलैण्डमेव सागरादधः कथयन्ति।

निर्मला–आचार्ये! विश्वभूगोलं सम्यगनधीत्य एषैव दुर्दशा भवति।

डॉ रत्नमाया– (क्रोधित होते हुए)

छोड़ो इसको। दूसरा प्रश्न है। मीकांग नाम की नदी कहाँ बहती है?

निर्मला– (याद करने का नाटक करती हुई सी)

अफ्रीका महाद्वीप में स्थित कांगो देश में भी कांग नदी बहती है।

डॉ रत्नमाया– बहुत अच्छा कहा बेटा, कांगोदेश को छोड़कर मीकांग नदी और कहाँ बहेगी? तुम्हारा भूगोल का ज्ञान तो एकदम विलक्षण ही है।

निर्मला– (आभार प्रकट करने का नाटक करती हुई)

मैं धन्य हो गई महोदया, धन्यवाद।

डॉ0 रत्नमाया– ठीक है निर्मला, अब यह तीसरा प्रश्न है। संसार का कौन सा देश समुद्र तल के नीचे है?

निर्मला– आचार्या! उन देशों को कौन नहीं जानता है। कारनिकोबार द्वीप और श्रीलंका द्वीप। यह दोनों द्वीप सागर के सुनामी तरंगों में हमेशा लीन रहते है।

डॉ0 रत्नमाया– बेटा चिरंजीवी हो! सही उत्तर दिया। मूर्ख लोग ही तो नीदरलैंड को सागर के नीचे कहते हैं।

निर्मला– आचार्या! वैश्विक भूगोल को अच्छी तरह से ना पढ़ने पर इसी प्रकार की दुर्दशा होती है।

डॉ० रत्नमाया–(प्रहसन्ती)

भूगोलज्ञा त्वमेवैकाऽद्य दृष्टासि। तद् ब्रूहि कैरेबियनसंज्ञा देशाः कस्मिन् सागरे वर्तन्ते?

निर्मला–(सत्वरम्) अरबसागरे।

डॉ० रत्नमाया–किमुच्यते? अरबसागरे? पुनश्चिन्तयित्वा भण।

निर्मला–चिन्तयित्वैव भणितम्मया। कैरेबियनदेशा अरेबियनसागरं विहाय क्वान्यत्र भवितुं शक्नुवन्ति?

डॉ० रत्नमाया–साधु साधु वत्से! विलक्षणस्तर्कः। स्वीकृता मया त्वत्प्रदत्तोपपत्तिः। सम्प्रति पञ्चमः प्रश्नः। कङ्गारुसंज्ञा जन्तवः क्व प्राप्यन्ते?

निर्मला–कंगारुनामका जन्तवः प्रायेण सर्वासु जन्तुशालासु प्राप्यन्ते। गतवर्ष एव मयाऽपि दिल्लीजन्तुशालायां ते दृष्टाः।

डॉ० रत्नमाया–(साट्टहासम्)

वर्धस्व वर्धस्व वत्से। सम्यगधीतं त्वया भूगोलम्। गच्छेदानीम्।

निर्मला–यथादिशति भवती।

(इति प्रणम्य गच्छति)

डॉ0 रत्नमाया– (हंसते हुए)

पूरे भूगोल को जानने वाली केवल तुमको ही आज मैंने देखा है। अच्छा बताओ कैरेबियन संज्ञा नामक देश किस सागर में पाया जाता है?

निर्मला– (शीघ्र ही) अरब सागर में।

डॉ0 रत्नमाया– क्या कहती हो? अरब सागर में? फिर से सोच कर बोलो।

निर्मला– सोचकर ही बोल रही हूँ। कैरेबियन देश अरब सागर को छोड़कर और कहाँ हो सकता है?

डॉ0 रत्नमाया– बहुत अच्छा बहुत अच्छा! विलक्षण तर्क है। तुम्हारे द्वारा दिए गए तर्क को मैं मानती हूँ। अब पाँचवाँ प्रश्न। कंगारू नामक जंतु (प्राणी) कहाँ पाया जाता है।

निर्मला– कंगारू नामक जंतु सभी जंतुशालाओं में पाया जाता है। पिछले वर्ष मैंने दिल्ली के चिड़ियाघर में भी उनको देखा है।

डॉ0 रत्नमाया– (जोर से हंसी के साथ)

बहुत अच्छा बहुत अच्छा बेटा! तुमने बहुत सुंदर भूगोल पढ़ा है। अब जाओ।

निर्मला– जैसा आप आदेश देती हैं।

ऐसा कहकर प्रणाम करके निकल जाती है।

सेवकः –(बहिरागत्य)

सम्प्रति नृपेन्द्र आगच्छतु। नृपेन्द्रकुमार! (नृपेन्द्रः प्रकोष्ठं प्रविशति)

प्राचार्यः –भवान् नृपेन्द्रकुमारः? तव विशेषाध्ययनविषयोऽस्ति हिन्दी। साधु। (सदस्यं प्रति)

प्रो० दूधनाथ! कृपया प्रश्नान् पृच्छन्तु।

प्रो० दूधनाथः –भो नृपेन्द्रकुमार। हिन्दीभाषायां 'रानी केतकी की कहानी' तिनाम्नी कथा केन कदा वा लिखिता?

नृपेन्द्रः –श्रीमन्! इयं कथा तु मां श्रावितवती ममैव पितामही शैशवे। साऽद्यापि जीवति। श्रीमन्! श्रावयानि?

प्रो० दूधनाथः –अलं तावत्। वीरगाथाकालस्य को नु कविर्भवतेऽतितरां रोचते?

नृपेन्द्रः –गुरुवर्य! भूषणकविर्मह्यं सर्वाधिकं रोचते येन लिखितम् 'तेरी बरछी ने बर छीने हैं खलन के!'

प्रो० दूधनाथः –किमसौ वीरगाथाकाले सञ्जातः?

नृपेन्द्रः –अथ किम्? स खलु वीराणां छत्रसालशिववीरादीनामेव गाथां गायति।

(सेवक बाहर आकर)

अब नृपेंद्र आए। नृपेंद्र कुमार।

(नृपेंद्र कमरे में प्रवेश करता है।)

प्राचार्य– आप नृपेंद्र कुमार हैं? आपका विशेष अध्ययन का विषय हिंदी है। बहुत अच्छा। (सदस्यों के प्रति) प्रोफेसर दूधनाथ! कृपया प्रश्नों को पूछिए?

प्रोफेसर दूधनाथ– हां नृपेंद्र कुमार! हिंदी भाषा में ''रानी केतकी की कहानी'' इस नाम की कथा किसने और कब लिखी है?

नृपेन्द्र– श्रीमान्! इस कथा को तो मेरी दादी ने बचपन में ही मुझे सुनाया था। वह आज भी जीवित हैं। श्रीमान् जी! मैं सुनाऊ?

प्रोफेसर दूधनाथ– अभी रुक जाओ। वीरगाथा काल का कौन सा कवि आपको बहुत अधिक अच्छा लगता है?

नृपेन्द्र– गुरुवर्य! भूषण कवि मुझे बहुत अच्छे लगते हैं। उनके द्वारा लिखी 'तेरी बरछी ने बर छीने हैं खलन के'!

प्रोफेसर दूधनाथ– क्या वह वीरगाथा काल में हुए हैं?

नृपेन्द्र– और क्या? वह निश्चित रूप से वहां वीरों के छत्रसाल शिव वीर आदि की गाथाओं को गाते हैं।

प्रो० दूधनाथः –(युक्तिं श्रुत्वा हतप्रभस्सन्)

तारसप्तकं नाम किं हिन्दीभाषायाम्?

नृपेन्द्रः (किञ्चिद् विचिन्त्य)

गुरुवर्य! देव्या मीराबाय्या वाद्ययन्त्रमिदम्। सप्ततन्त्रयुक्तं वाद्यमिदं वादयित्वैवाऽसौ गायति स्म 'बसौ मोरे नैनन में नन्दलाल' इति। 'मेरे तो गिरिधर गोपाल दूसरो न कोई' इति वा।

प्रो० दूधनाथः –(साट्टहासम्)

विजयस्व विजयस्व वत्स! तवानेनानुसन्धानेन ममापि ज्ञानवृद्धिर्जाता। अद्भुतमाख्यातं त्वया यत्तारसप्तकं नाम मीरावाद्ययन्त्रमिति। वत्स! सम्प्रति चतुर्थः प्रश्नः। छायावादस्य प्रारम्भः कुतस्सञ्जातः?

नृपेन्द्रः –(सोत्साहम्)

गुरुवर्य! छायावादस्य प्रारम्भो वटपिप्पलपर्कटीवृक्षेभ्यस्सञ्जातः। एवमेव रहस्यवादस्याप्यारम्भः पर्वतकन्दराभ्योऽभवत्।

प्रोफेसर दूधनाथ–(इस युक्ति को सुनकर हतप्रभ होकर) हिंदी भाषा में तारसप्तक क्या है?

नृपेन्द्र– (कुछ सोच कर)

गुरुवर्य! देवी मीराबाई का यह वाद्य यंत्र है। सात तारों से युक्त इस बात को बजाते हुए वह 'बसो मोरे नैनन में नंदलाल' इस गीत को गाती थी और 'मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई' इसको भी।

प्रोफेसर दूधनाथ (जोर से हंसते हुए)

विजयी हो बेटा विजयी हो। तुम्हारे इस अनुसंधान से मेरा भी ज्ञान बढ़ गया। तुमने इसकी अद्भुत व्याख्या की है कि तार सप्तक यह मीराबाई का वाद्य यंत्र है। बेटा इस समय चौथा प्रश्न पूछते हैं। छायावाद का प्रारंभ कहाँ से हुआ?

रूपेंद्र– (उत्साह के साथ)

गुरुवर्य! छायावाद का प्रारंभ बरगद, पीपल, पाकड़ वृक्षों से हुआ। इसी प्रकार रहस्यवाद का आरंभ पर्वत की गुफाओं से हुआ।

प्रो० दूधनाथः –(साट्टहासं सशिरश्चालनम्)

साधु साधु नृपेन्द्रकुमार! किमुच्येत त्वदनुसन्धानस्य। छायावादरहस्यवादयोरद्भुतव्याख्या कृता त्वया। सम्प्रत्यन्तिमप्रश्नः। गोदाननाम्नी रचना कस्य?

नृपेन्द्रः –गोदानम्....गोदानम्। गुरुवर्य! तदेव गोदानं यन्मृत्युवेलायां सम्पाद्यते?

प्रो० दूधनाथः –युक्तमाह। तदेव गोदानम्। परन्तु कस्य साहित्यकारस्य कृतिरियम्?

नृपेन्द्रः –(सदैन्यम्)

श्रीमन्! साहित्यकारं तु नैव जानामि। परन्तु पुरोहितोऽस्माकं पण्डितकालीदीनो गोदानमन्त्रं सुष्ठु जानाति।

प्रो० दूधनाथः –(सहासं सव्यङ्ग्यमुद्रं प्रणम्य)

भो महापण्डित! तारितस्त्वया मुंशी प्रेमचन्दः। गच्छेदानीम्।

(इत्युत्तिष्ठति। नृपेन्द्रोऽपि गच्छति)

प्रोफेसर दूधनाथ–(हंसी के साथ सिर को घुमाते हुए)

बहुत अच्छा बहुत अच्छा नृपेन्द्र कुमार! तुम्हारे अनुसंधान का (खोज का) क्या कहना! छायावाद और रहस्यवाद की तुमने अद्भुत व्याख्या की है। अब यह अंतिम प्रश्न। गोदान नाम की रचना किसकी है?

नृपेन्द्र– गोदान......गोदान। गुरुवर्य! गोदान वह है जो मृत्यु के समय संपादित किया जाता है।

प्रोफेसर दूधनाथ–सही कहा तुमने। वही गोदान है। लेकिन यह किस साहित्यकार की रचना है।

नृपेन्द्र– (दीनता के साथ) श्रीमान्! साहित्यकार तो नहीं जानता हूँ। किंतु हमारे पुरोहित पंडित कालीदीन गोदान के मंत्र को अच्छी प्रकार जानते हैं।

प्रोफेसर दूधनाथ–(हंसते हुए और व्यंग्य की मुद्रा में उसको प्रणाम करते हुए) हे महापंडित। तुमने मुंशी प्रेमचंद को तार दिया। अब जाओ।

(ऐसा कहकर खड़े हो जाते हैं नृपेन्द्र भी जाता है)

सेवकः –(बहिर्निष्क्रम्य) भोः श्रूयताम्। सम्प्रति चरमः प्रवेशार्थी आहूयते। षड्वादनं जातं सन्ध्याकालस्य। अतएवाऽवशिष्टः साक्षात्कारः श्वो भविष्यतीति प्राचार्याणामादेशः।

जीवानन्द! जीवानन्दः सम्प्रत्यागच्छतु। भवान् जीवानन्दः? आगच्छ।

(जीवानन्दः प्रविशति प्राचार्यकक्षम्)

प्राचार्यः –स्वागतं स्वागतं ते व्याहरामि। जीवानन्दोऽस्ति भवान्? मन्ये ब्राह्मणोऽप्यस्ति भवान् भालतिलकाऽलङ्कृतत्त्वात्।

जीवानन्दः –(सविनयं सार्जवम्)

प्रणमामि भवन्तम्। सम्यक् एत्यभिज्ञातं भवता। ब्राह्मण एवाऽस्मि।

प्राचार्यः –(सदस्यं प्रति)

पण्डित सोमनाथ! परीक्षतां भवान् छात्रमिमम्।

सेवक– (बाहर निकल कर) अरे सब लोग सुनिए। अब आखरी प्रवेशार्थी बुलाया जा रहा है। शाम का 6:00 बज गया। इसलिए बाकी साक्षात्कार कल होंगे, ऐसा प्राचार्य जी का आदेश है।

जीवानंद! जीवानंद! अब आप आएँ! आप जीवानन्द हैं? आएँ।

(जीवानंद प्राचार्य कक्ष में प्रवेश करता है।)

प्राचार्य– तुम्हारा स्वागत है। आप ही जीवानन्द हो? लगता है आप ब्राह्मण हो जो माथे पर तिलक इत्यादि लगाया है।

जीवानन्द– (विनय पूर्वक) आप सबको प्रणाम करता हूँ। आपने सही पहचाना। मैं ब्राह्मण ही हूँ।

प्राचार्य– (सदस्यों के प्रति)

पंडित सोमनाथ–इस छात्र की परीक्षा लीजिए

सोमनाथः –जीवानन्द! वेदाः केन लिखिताः?

जीवानन्दः –कालिदासेन। प्रारम्भे तु कालिदासो मूर्ख आसीदिति श्रूयते। वेदान् लिखित्वैवाऽसौ महापण्डितः कविकुलगुरुश्च सञ्जातः।

सोमनाथः –अथेदानीं द्वितीयः प्रश्नः। पञ्चतन्त्रे केषां कथा वर्तते?

जीवानन्दः –(संस्मृतिं नाटयन्)

गुरुवर्य! पञ्चपाण्डवानाम्। पञ्चतन्त्रनाम्नैव ज्ञायते!

सोमनाथः –(साश्चर्यं मन्दं हसति)

साधु वत्स! महत्या निष्ठया देववाणीमधीतवानसि। साधु! इदानीमपरः कश्चित्प्रश्नः। अष्टाध्याय्यां कति अध्यायाः सन्ति?

जीवानन्दः –अष्टाध्याय्यां द्वादशाध्यायाः सन्ति।

सोमनाथ– जीवानंद वेद किसने लिखे हैं?

जीवानन्द– कालिदास ने। प्रारंभ में कालिदास मूर्ख थे ऐसा सुना जाता है और वेद लिख करके वह महापंडित और कविकुलगुरु हो गए।

सोमनाथ– अब दूसरा प्रश्न। पंचतंत्र में किसकी कथा विद्यमान है?

जीवानन्द– (याद करने का नाटक करते हुए)

गुरुवर्य– पाँच पांडवों की। पंचतंत्र नाम से ही पता चलता है।

सोमनाथ– (आश्चर्य के साथ मंद हंसता है)

बहुत अच्छा बेटा! तुमने बहुत ही निष्ठा से मन से देववाणी संस्कृत का अध्ययन किया है। बहुत अच्छा। अब यह दूसरा प्रश्न! अष्टाध्यायी में कितने अध्याय हैं?

जीवानन्द– अष्टाध्यायी में 12 अध्याय हैं।

सोमनाथः – (चकितचकितस्सन्)

आश्चर्यम् आश्चर्यम्। विलक्षणम्। ग्रन्थनाम तावदष्टाध्यायी, अध्यायानां संख्या पुनर्द्वादश?

जीवानन्दः – अथ किम्। चत्वारोऽध्यायाः पश्चात्संयोजिताः।

सोमनाथः – (निर्भरं हसति)

स्मृतिवाङ्मयमधिकृत्य किं जानाति भवान्?

जीवानन्दः –गुरुवर्य! यस्या अध्ययनेन स्मृतिर्वर्धते सा भवति स्मृतिः।

सोमनाथः –चिरञ्जीव वत्स! किमेतादृशः कोऽपि ज्ञायते त्वया यः स्मृतिवाङ्मयमधीत्यैव स्मृतिमान्जातः?

जीवानन्दः –कोऽन्वन्यः? मम पूज्यस्तातपाद एव। पण्डितवर्यो योगानन्दः।

सोमनाथ– (चकित होते हुए) आश्चर्य है आश्चर्य है विलक्षण। ग्रंथ का नाम अष्टाध्यायी है और अध्यायों की संख्या 12 है।

जीवानंद– और क्या चार अध्याय बाद में जोड़े गए हैं।

सोमनाथ– (हंसता है) स्मृति साहित्य के बारे में कुछ जानते हो!

जीवानन्द– जी गुरुवर्य! इसके अध्ययन से स्मृति बढ़ती है वह स्मृति है।

सोमनाथ– बेटा चिरंजीवी हो। किसी ऐसे व्यक्ति को जानते हो जो स्मृतिशास्त्र का अध्ययन करके स्मृतिवान् हो गया है।

जीवानन्द– और कौन अन्य है? मेरे पूज्य पिताजी ही। पंडित योगानंद।

सोमनाथः –शोभनं शोभनम्। सम्यगुक्तं त्वया जीवानन्द! सम्प्रति चरमः प्रश्नः। अस्मद्राष्ट्रे संस्कृतस्य कीदृशं भविष्यम्?

जीवानंद–गुरुवर्य! संस्कृतस्य न किमपि भविष्यम्। तस्य केवलम् वर्तमानमेव विलसति। वर्तमाने अक्षते सति अतीत–भविष्ययोः का कथा?

सोमनाथः –(सहर्षमुत्थाय जीवानंदमालिंग्य)

वत्स! घुणाक्षरन्यायस्य चरितार्थताद्यैव मया दृष्टा। अविचारितरमणीयत्वं मयाद्यैव त्वन्मुखान्निर्गतमवलोकितम्। सत्यमुक्तं त्वया वत्स!संस्कृतम् न तथा वर्तत न वा तथा वर्तिष्यते यथेदं वर्तते। संस्कृतं केवलं वर्तते। तस्य केवलं वर्तमानत्वमेव वर्तते नान्यत् किंचित्।

(इति जवनिका पतति)

इति श्रीमदभिराजराजेंद्रेण संपूर्णानंदसंस्कृतविश्वविद्यालयीयकुलपतिना

दुर्गाप्रसादाभिराजीतनयेन त्रिवेणीकविना प्रणीतमेकांकी प्रतिभापरीक्षणम्।

सोमनाथ– शोभनम् शोभनम्। तुमने एकदम सही कहाँ अब अंतिम प्रश्न–हमारे राष्ट्र में संस्कृत की भविष्य में कैसी दशा होगी?

जीवानंद– गुरुवर्य! संस्कृत का कोई भी भविष्य नहीं है। उसका केवल वर्तमान ही सुशोभित है। वर्तमान के अक्षत होने पर अतीत और भविष्य के बारे में क्या कहा जाए?

सोमानाथ– (हर्षपूर्वक उठकर जीवानंद को गले लगा कर)

बेटा! घुणाक्षरन्याय को सिद्ध करते हुए आज ही तुमको देखा। तुम्हारे मुँह से निकले हुए इस अविचारित या असमीक्षित पर रमणीय को मैंने आज ही देखा। बेटा, तुमने एकदम सही कहा। संस्कृत ना कभी पहले वैसी थी, ना भविष्य में होगी जैसी यह आज वर्तमान युग में है। संस्कृत केवल संस्कृत ही है। उसका केवल वर्तमान ही है और कुछ भी नहीं।

(इसी समय पर्दा गिरता है)

इस प्रकार यह संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय के कुलपति, और श्री दुर्गा प्रसाद और अभिराजी जी के पुत्र त्रिवेणी कवि अभिराज राजेन्द्रमिश्र द्वारा प्रणीत एकांकी 'प्रतिभापरीक्षणम्' समाप्त।

1.6 युगबोध

युग का बोध अर्थात् युगचेतना। यहां युग का तात्पर्य वर्तमान युग से है न कि किसी अन्य युग से। अर्थात् जिस युग में हम जी रहे हैं। वस्तुतः अपने युग के बोध के बिना कोई रचनाकार आधुनिक नहीं हो सकता। संस्कृत–साहित्य की कोई भी विधा अगर आधुनिक है तो उसमें युगबोध अवश्य है। यह युगबोध कभी सामाजिक है तो कभी सांस्कृतिक। कभी ऐतिहासिक है तो कभी राजनैतिक या फिर कभी आध्यात्मिक है तो कभी दार्शनिक। अर्थात् युगबोध के आकार प्रकार अनेक हो सकते है।

स्वातन्त्र्योत्तर काल में नाट्य विधा के साथ कथा विधा अभिराज राजेन्द्र मिश्र, आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी, हरिदत्त शर्मा, शिवजी उपाध्याय, देवर्षि कलानाथ शास्त्री, केशव चन्द्र दाश, प्रभुनाथ द्विवेदी आदि कवियों से संवलित होती हुई नित नई ऊंचाइयों को प्राप्त कर रही है। बनमाली बिश्वाल, प्रशस्यमित्र शास्त्री, इच्छाराम द्विवेदी, नारायण दाश, रवीन्द्र कुमार पण्डा, प्रमोद कुमार नायक आदि कथाकारों द्वारा यह विधा निरन्तर यथार्थवादी समान्तर युगबोध को रेखांकित कर रही है। इस युगबोध के मूल में साहित्यिक परिवेश एवं परिस्थितियाँ, परम्परा के प्रति विद्रोह, प्रयोगशीलता की नैसर्गिक प्रवृत्ति तथा कथाकारों की व्यक्तिगत स्थापना की आकाड्क्षा आदि रहे हैं।

प्रो0 राजेन्द्र मिश्र के 'नाट्यनवरत्नम्' में संकलित विभिन्न एकांकी जैसे मंडूकप्रहसनम, प्रतिभापरीक्षण, वादनिर्णय, बधिरप्रसन्न आदि में से 'प्रतिभापरीक्षणम्' को प्रस्तुत इकाई में रखा गया है, जो भारतीय समाज में बढ़ रहे पाश्चात्त्य प्रभावों को दर्शाता हुआ आधुनिक युवा समाज पर एक करारा व्यंग्य है। इस एकांकी द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में अनध्यवसाय को चित्रित करते हुए ऐसे शिक्षणालयों व छात्रों के साथ ही देश के भविष्य पर भी प्रश्न चिह्न अंकित किया गया है। आधुनिक विद्यार्थी वास्तविक विद्याध्ययन से विरत होते जा रहे हैं, यह समाज के लिए चिन्ता का विषय है।

इस एकांकी के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया गया है कि जैसे–जैसे विज्ञान के द्वारा विकास के अनेक आयाम प्रतिष्ठित हो रहे हैं आधुनिक छात्र दूरदर्शन तथा मोबाइल में व्यस्त हो गए हैं वैसे–वैसे उनकी शैक्षिक ज्ञान में गंभीरता का अभाव हो रहा है, और ये अयोग्य लोग अपने आप को अपने विषय का ज्ञाता समझ कर सर्वज्ञ मान रहे हैं।

1.7 बोधप्रश्न

1. प्रतिभापरीक्षण के लेखक का संक्षिप्त साहित्यिक परिचय दीजिए?
2. प्रस्तुत एकांकी की कथावस्तु बताइए?
3. साक्षात्कार किन विषयों का हुआ है? उनके नाम बताइए।
4. प्रस्तुत एकांकी से हमें क्या सन्देश मिलता है?

इकाई–2 प्रो0 राधावल्लभत्रिपाठीकृत 'प्रतीक्षा'।

इकाई–2 प्रो0 राधावल्लभत्रिपाठीकृत 'प्रतीक्षा'।

इकाई की रूपरेखा

उद्देश्य

2.1 कवि का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व

2.2 एकांकी की कथावस्तु

2.3 अभिनेयता

2.4 एकांकी का अनुवाद

2.5 एकांकी में युगबोध

2.6 बोधप्रश्न

उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई नाट्य काव्य या एकांकी पर आधारित है। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप–

1. राधावल्लभ त्रिपाठी के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व से परिचित होंगे
2. उनके द्वारा लिखित एकांकी प्रतीक्षा की कथावस्तु और उसके अनुवाद को समझ सकेंगे।
3. एकांकी के युगबोध के विषय में ज्ञान प्राप्त कर लेंगे।
4. प्रश्न उत्तर के माध्यम से कवि एवं उनकी रचना के विषय में और अवगत हो सकेंगे।

2.1 कवि का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व

अपनी रमणीय काव्यकला से साहित्य–सदन को समलंकृत करने वाले प्रोफेसर राधावल्लभ त्रिपाठी अंतर्राष्ट्रीय ख्याति के संस्कृत विद्वान् तथा संस्कृत और हिंदी के जाने–माने साहित्यकार हैं। आपका जन्म 15 फरवरी 1949 को मध्य प्रदेश में राजगढ़ जिले में हुआ। आपकी शिक्षा मध्य प्रदेश के विभिन्न नगरों में हुई। नाट्यशास्त्र और साहित्यशास्त्र के क्षेत्र में अपने मौलिक योगदान के लिए आप जाने जाते हैं। लम्बे समय तक आप सागर विश्वविद्यालय, मध्य प्रदेश के संस्कृत–विभाग के आचार्य और अध्यक्ष पद को सुशोभित कर चुके हैं। बैकॉक, बर्लिन तथा न्यूयॉर्क के विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य भी किया है। आप राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान में 5 वर्ष कुलपति रहे। शिमला स्थित भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान में, फेलो भंडारकर प्राचीन विद्या संशोधन मंडल, पुणे में तथा कर्नाटक प्राचीन विद्यापीठ पर 2 वर्ष कार्य करने के पश्चात् नेशनल लॉ युनिवर्सिटी ऑफ महाराष्ट्र, मुंबई में अतिथि आचार्य भी रहे हैं। आप पीएच.डी. उपाधि के लिए 42 शोध छात्रों का सफल निर्देशन कर चुके हैं तथा संस्कृत–साहित्य को उनके रचनात्मक अवदान पर विभिन्न विश्वविद्यालयों में पीएच.डी. हेतु 20 से अधिक शोध कार्य हुए हैं। इनके अतिरिक्त आठ पुस्तक व तीन पत्रिकाओं के विशेषांक उनके व्यक्तित्व व कर्तृत्त्व पर प्रकाशित हैं। थाइलैण्ड की राजधानी बैंकाक में आप 'विज़िटिंग प्रोफेसर' के रूप में कार्य कर चुके हैं।

राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर के 37 पुरस्कारों से और सम्मानों से अलंकृत प्रोफेसर त्रिपाठी संस्कृत में मौलिक कविता के लिए राष्ट्रपति सम्मान, केंद्रीय साहित्य अकादमी का पुरस्कार, श्रेष्ठ दार्शनिक लेखन के लिए शंकर पुरस्कार, कनाडा का रामकृष्ण संस्कृति सम्मान, यू0जी0सी0 का वेदव्यास सम्मान, महाराष्ट्र शासन का जीवन वृति संस्कृत–सम्मान, हिंदी अकादमी दिल्ली का नाटक–सम्मान तथा मध्य प्रदेश शासन का शिखर सम्मान आदि प्राप्त कर चुके हैं।

प्रोफेसर त्रिपाठी के संस्कृत, अंग्रेज़ी तथा हिंदी में 175 ग्रंथ तथा 270 शोधलेख अथवा समीक्षात्मक लेख प्रकाशित हैं। आप संस्कृत और हिंदी के चर्चित साहित्यकार हैं। संस्कृत के मौलिक रचनात्मक लेखन में आपका सराहनीय योगदान रहा है। संस्कृत में आपका एक महाकाव्य, पाँच कविता संग्रह, चार उपन्यास, एक एकांकी संग्रह तथा दो पूर्णाकार नाटक प्रकाशित हैं। संधानम्–नामक काव्य संग्रह में 55 कविताएं अंतर्जवनिकम् बहिर्जवनिकम् लहरीलीलायितम, गीतवल्लरी तथा नमो वाक् इन पाँच खण्डों में विभाजित हैं। आपकी कथाओं एवां कविताओं में विषय वस्तु की नवीनता, आधुनिक सामाजिक और राजनीतिक स्थितियों की विसंगतियों का व्यंग्यपूर्ण चित्रण और भाव–प्रवणता के साथ कल्पना की संपन्नता आदि उल्लेखनीय विशेषताएं हैं। यूरोप यात्रा के समय विमान से हिमाच्छादित धरती को देखते हुए कवि कल्पना करता है, जो बहुत सुंदर है।

इसके साथ ही हिंदी में तीन कहानी संग्रह, तीन उपन्यास और दो नाटक प्रकाशित हैं। संस्कृत से आपने अनेक नाटकों और कवियों के सरस अनुवाद हिंदी में किए हैं। आपकी शोधपरक पुस्तकों में आदि कवि वाल्मीकि, संस्कृत कविता की लोकधर्मी परंपरा, संस्कृत काव्यशास्त्र और काव्य परंपरा, नाट्यशास्त्र : विश्व का नया साहित्य नया साहित्य शास्त्र, भारतीय काव्यशास्त्र की आचार्य परंपरा, बहस में स्त्री, Theory and Practice of Veda in Indian intellectual traditions, संस्कृत साहित्य का समग्र इतिहास चार खण्डों में, आदि विशेष उल्लेख्य हैं।

2.2 एकांकी की कथावस्तु

प्रतीक्षा (प्रेक्षणक) मध्यवर्गीय परिवार के जीवन की एक झलक प्रस्तुत करता है। घर में बड़ी बेटी कल्पना नौकरी करती है, उसकी छोटी बहिन पढ़ रही है। पिता भवेश सेवा–निवृत्त हो चुके हैं। उनका एकमात्र पुत्र महेश बेरोजगार है।

कल्पना प्रतिदिन साँझ होने के पहले दफ्तर से लौट आती है। घर आने में आज उसे देर हो गई है। भवेश, उनकी पत्नी भामा तथा बेटी लीना के बीच वाद–विवाद में पता चलता है कि कल्पना को अपने कार्यालयीन सहयोगी श्रीवास्तव के यहाँ पार्टी में जाना था। वह वहाँ चली गई होगी।

रात होने लगती है। महेश घर आया है, तभी बिजली गुल हो जाती है। भवेश महेश को चोर समझ कर मारने को तत्पर हो जाते हैं। वे श्रीवास्तव के घर टेलीफोन करने का प्रयास करते हैं, पर टेलीफोन 'डैड' है। पड़ोसिन भाटिया के साथ भामा की बातचीत से नगर में व्याप्त हिंसा और अतिचारों की झूठी–सच्ची खबरों से घबराहट का वातावरण बनता है। बिजली के गुल हो जाने, अचानक वर्षा होने तथा आँधी की पृष्ठभूमि से आतंक

का अनुभव निर्मित होता है। अन्ततः कल्पना घर लौट आती है। भवेश अपनी बेटी पर अविश्वास के लिये पश्चात्ताप व्यक्त करते हैं।

पात्र

- भवेश
- भामा
- लीना
- श्रीमती भाटिया
- महेश
- कल्पना

2.3 अभिनेयता

प्रस्तुत एकांकी रंगमंच की दृष्टि से और अभिनेयता की दृष्टि से अत्यंत सहज और सरल है। मात्र छः पात्रों से युक्त और सरल प्रवाहमयी भाषा और छोटे–छोटे व्यावहारिक संवादों से युक्त यह नाटक वर्तमान काल की परिस्थितियों को दर्शाता हुआ स्त्रियों की सुरक्षा को लेकर एक प्रश्न भी उठाता है। गार्गी और लक्ष्मीबाई जैसी वीरांगनाओं के इस देश में स्त्री कितनी सुरक्षित है इस विषय पर भी एकांकी के माध्यम से अपनी चिंता व्यक्त की है।

2.4 एकांकी का अनुवाद

प्रतीक्षन्ते सर्वे किमपि परमं धाम यदिदं
प्रयान्त्येतां, सर्वाः सकलकरणश्रान्तिविगमात्।
प्रजा यस्माज्जाता लयमपि च यस्मिन् खलु गताः
प्रकृष्टं तत् तत्त्वं भवतु विदितं चेह लसितम्।।

(समयः सायङ्कालः। मञ्चे धूमिलः प्रकाशः, धूसरच्छाया। मध्यवर्गीयपरिवारस्य गृहाः। आसन्दिकायामुपविष्टो गृहस्वामी भवेशो दृश्यते। पञ्चाशद्वर्षकल्पः पलितार्धकेशो, धृतोपनेत्रः। विषादच्छाया गम्भीरता च तस्य वदने विलोक्येते। वृत्तपत्रं पठति, मध्ये मध्ये काशते)

भवेशः– (पठन्) अष्टादशवर्षीयां तरुणीं ग्रामादागतां नगरे अज्ञाताः केचन तस्करा बलादपनीतवन्तः। गान्धीनगरे विंशवर्षदेशीयो यौवनोन्मत्तः कश्चिन् रामगोपालो नाम प्रतिवेशिनः कन्यां षड्वर्षदेशीयाम् (विरम्य) ओह! वृत्तपत्रेष्वेवमेव अनर्गलं वृत्तं प्रकाश्यते। अथवा काल एव एतादृशः। घोरः कालः। किं क्रियते। (उच्चैः) भामे, भामे! किं करोषि?

हिंदी अनुवाद

प्रतीक्षा

प्रतीक्षा कर रहे हैं सब किसी की

पाकर समस्त इन्द्रियों के परम विश्रांति की।

जिससे सारी प्रजायें उत्पन्न हुई हैं और जिसमें वे लय को प्राप्त हुई हैं, वह प्रकृष्ट तत्त्व यहाँ सबको ज्ञात हो जाय।

(समय सायंकाल मंच पर धूमिल प्रकाश है धूसर छाया। मध्यवर्गीय परिवार का घर। कुर्सी पर गृह स्वामी भवेश बैठा है आयु लगभग पचास साल। आधे बाल पक गए हैं। चश्मा लगाए हुए हैं। मुंह पर विषाद की छाया और गंभीरता। अखबार पढ़ रहा है। बीच–बीच में खाँसता है।)

भवेश– (पढ़ता हुआ) गांव से आई हुई अठारह साल की युवती को शहर के अज्ञात गुंडे उठाकर ले गये। गांधीनगर में बीस वर्ष के युवावस्था के नशे में चूर रामगोपाल ने पड़ोसी के घर में घुसकर उसकी छः साल की बच्ची–(ठहरकर) ओह। अखबारों में बस इसी तरह की अनर्गल खबरें छपती हैं। अथवा समय ही ऐसा है। बड़ा बुरा समय है (जोर से पुकारता हुआ) भामा, भामा! क्या कर रही हो?

(नेपथ्याद्भवेशभार्याया भामायाः स्वरः–भोजनं साधयामि। किमपेक्ष्यते?)

भवेशः – (पुनरप्युच्चैः) महेश, ए महेश।

(क्षणाय, शान्तिः। नेपथ्यात् करुणसङ्गीतम्)

भवेशः – कथं न कोऽप्युत्तरयति। महेशोऽयम्। अयं महेशः। कदा आयाति गृहान्, कदा याति च गृहेभ्य इति न ज्ञायते। सर्वथा इत्वरः सञ्जातः। सर्वे तथा सञ्जाताः किं क्रियते। (उच्चैः) लीने, लीने!

(नेपथ्याद् भामायाः स्वरः–किमर्थं चीत्करोति भवान्। गृहे केऽपि न सन्ति।)

भवेशः – कुत्र गताः सर्वे?

(पुनः शान्तिः। सङ्गीतम्)

(नेपथ्य से पत्नी भामा का स्वर–खाना बना रही हूँ। क्या चाहिए?)

भवेश– (फिर जोर से पुकारता हुआ)–महेश, ए महेश।

(एक क्षण शांति। नेपथ्य से करुण संगीत)

भवेश– कोई उत्तर नहीं देता। ये महेश! देखो इस महेश को। कब घर आता है, कब घर से जाता है कुछ पता नहीं चलता। पूरी तरह आवारा हो गया है। सभी ऐसे हो गए हैं, किया क्या जाये? (जोर से पुकारता हुआ) लीना, ए लीना!

(नेपथ्य से भामा का स्वर–चिल्ला क्यों रहे हो? घर में कोई नहीं है)।

भवेश– कहाँ गए सब?

(फिर शांति। संगीत)

भवेशः– न श्रृणोति। इयमपि न श्रृणोति। अर्धाङ्गिनी भूत्वा वार्धक्य इयमपि पराङ्मुखी जाता। मित्राणि पुत्रकलत्राणि सर्वाणि एवंविधानि भवन्ति। का ते कान्ता कस्ते पुत्रः, संसारोऽयमतीवविचित्रः। (उत्थाय अन्वेषणं नाटयन्) भामा भोजनगृहेऽस्ति। गृहे नास्ति अन्यः कोऽपि।

(नेपथ्याद् विक्रेतुः स्वरः आइसक्रीम्, आइसक्रीम्)

भवेशः – (सहसा सोत्साहमुत्थाय, वातायनं प्राप्य, शनैराह्वयन्)–ए,! श्रृणु, शृणु तावत्।

भामा– (सहसा प्रविश्य)–किं क्रियते? चिकित्सकेन सर्वथा निषिद्धं किमपि शीतलं न ग्राह्यमिति। कण्ठे पुनरपि सङ्क्रमणं स्यात्। स्वस्वास्थ्यस्य चिन्ता भवद्भिरेव न क्रियते? पुनरपि रुग्णो भविष्यति तदा किं भविता? मत्कृते न कोऽपि चिन्तयति। अहं न कर्तुं पारयामि इदानीम् एतत् सर्वम्। नाहं समर्था अस्य गृहस्य एतावत् कार्य पूरयितुम्। भवान् हस्ते हस्तं निधाय तिष्ठति वा यद्वा तद्वा खादित्वा रुग्णोऽथवा भवति। अहं कि किं कुर्याम्? भवतां मनसि मत्कृते चिन्तालेशोऽपि वर्तते?

(एवंवादिन्यास्तस्या भवेशो वातायनान् निवृत्य आसन्दिकायां पुनरुपविश्य वृतपत्रे दत्तदृष्टिः स्थितः)

भामा– शृणोति न वा? अथवाहं सर्वथा अरण्ये रोदिमि? अन्धकारे किं पठ्यते? अथवा पठनस्य नाट्यं क्रियते। जानाम्यहं सर्वम्।

भवेश– नहीं सुन रही। अर्धांगिनी होकर यह भी नहीं सुन रही। बुढ़ापे में इसने भी मुँह मोड़ लिया। मित्र, बेटी–बेटियाँ, पत्नियाँ, सब ऐसे ही होते हैं। कौन किसकी पत्नी और कौन किसका बेटा, विचित्र ही सारा संसार है। (उठकर इधर–उधर खोजकर) भामा बना रही है भोजन, घर में और कोई नहीं।

(नेपथ्य से आइसक्रीम बेचने वाले की आवाज–आइसक्रीम–आइसक्रीम)

भवेश– (अचानक उठकर, खिड़की तक जाकर, धीरे से बुलाता हुआ)–ए, ए सुन सुन! इधर आ!

भामा– (अचानक प्रवेश करके) क्या हो रहा है? डॉक्टर ने साफ मना किया है कि कुछ भी ठंडा नहीं खाना है। फिर से गले में इंफेक्शन हो जाएगा। अपनी तबीयत की फिकर आपको ही नहीं है तो क्या किया जाए? फिर से बीमार हो जाओगे, तब क्या होगा? मेरी किसी को फिकर है? अब मुझ से नहीं होता यह सब। इस घर का काम–काज निपटाने की दम नहीं रही मुझ में। आप तो हाथ पैर हाथ धर कर बैठे रहो, या फिर कुछ भी ऊटपटाँग खाओ और बीमार पड़ जाओ। मैं क्या करूँ? मेरे लिए थोड़ी भी चिन्ता है आपके मन में, हुँ?

(भवेश चुपचाप इस बीच कुर्सी पर बैठकर अखबार पढ़ने में लग जाता है)

भामा– सुन रहे हैं कि नहीं? या फिर मैं बेकार इतनी देर से बड़बड़ा रही? या फिर पढ़ने का नाटक कर रहे हैं। मुझे सब मालूम है। अंधेरे में पढ़ क्या रहे हैं।

(स्विचमवनमय्य विद्युद्दीपं ज्वलयति)

भवेशः– इमे सर्वे क्व गताः? लीना महेशः–कल्पना इमे सर्वे क्व सन्ति?

भामा– महेशस्तु आदिवसं गृहे कदापि भवति किम्? यदैव बहिर्याति, अनिवेद्य याति। प्रातर्याति, अर्धरात्रं यावन्न निवर्तते। भवांस्तस्मै कदापि किमपि कथयति किम्? पिता भूत्वा किं करोति भवान्? हस्ते हस्तं निधाय तिष्ठति। अहमेकाकिनी किं किं कस्मै कथयानि?

भवेशः– क्व गते लीना–कल्पने?

भामा– लीना प्रतिवेशे गता। कल्पना? कल्पना अद्य कार्यालयान्न निवृत्ता किम्? सायङ्कालस्तु जातः। सा तु सार्धपञ्चवादनं यावदवश्यं समायाति। नहि, हि। सा आगता भवेत्। स्वकक्षे सा तिष्ठतीति मन्ये। कार्यालयात् तु सा आगता। अथवा नागता किम्?

भवेशः– आगता नागता इति व्यामिश्रं वदसि। सर्वथा बुद्धिरेव विपर्यस्ताते।

(स्विच दबाकर बत्ती जलाती है)

भवेश– कहाँ गये सब लोग? लीना, महेश, कल्पना कहाँ हैं ये तीनों?

भामा– महेश तो दिन भर घर से बाहर रहता है, घर में रहता ही कब है वह? जब भी बाहर जाता है बिना बताये जाता है। सुबह जाता है, आधी रात को वापस आता है उससे कभी कुछ कहते हैं? पिता होकर आप करते क्या हैं। हाथ पर हाथ धर कर बैठे रहते हैं। मैं अकेली किस–किस से क्या कहूँ?

भवेश– कल्पना और लीना कहाँ गई हैं?

भामा– लीना पड़ोस में गई है। कल्पना? कल्पना आज आफिस से नहीं आई है। नहीं, नहीं। वह आ गई होगी। अपने कमरे में होगी। आफिस से तो आ गई है वह। या नहीं आई क्या?

भवेश– आ गई और नहीं आई? यह क्या उल्टा सीधा कह रही है। अकल ठिकाने पर नहीं है क्या?

भामा– (सक्रोधम्) आम्, आम्। विपर्यस्ता। भवतां तु सर्वथा शुद्धा वर्तते बुद्धिः। गृहे किं किं जायते विदितं भवताम्?

भवेशः– कल्पना गृहे नास्तीति विदितम्। मया सम्पूर्णा गृहा अवलोकिताः। शौचालयेऽपि कोऽपि नास्ति। गृहे मां च त्वां च विहाय को ऽपि नास्ति। अतः स्वैरं यद् वा तद्वा वद, गालिं वा देहि मह्यम्।

भामा– (हतप्रभा भूत्वा)–किमहमेतावती अशोभना? (सहसा सफूत्कारं रोदिति)– भवता तु सदैव एवमेव चिन्त्यते। हे राम! यदा अहं म्रिये, तदैव...

(अञ्चलेन वाष्पं मार्जयति। ततः प्रविशति लीना)

भवेशः– लीने, कुत आयासि?

लीना– प्रतिवेशे गता आसम्। तत्र काढनं शिक्षयति उषा आण्टी।

भवेशः– अपि ज्ञायते कल्पना क्व?

लीना– किम्? भगिनी कार्यालयान्न निवृत्ता? अरे, स्मृतम्। अद्य तस्याः सहकर्मिणः श्रीवास्तवस्य जन्मदिनम्। तस्य गृहे सपीतिर्वर्तते। तत्र गता स्यात्।

भामा– (सक्रोध)–हाँ, हाँ। अकल ठिकाने पर नहीं है। आपकी अकल तो एकदम ठीक है। घर में क्या हो रहा है पता है आपको?

भवेश– कल्पना घर में नहीं है–इतना पता है। मैंने सारा घर छान मारा। लेट्रिन में कोई नहीं है। घर में मुझे और तुम को छोड़कर और कोई नहीं है। इसलिये जो चाहो सो कहो, गाली दो, कुछ भी कहो।

भामा– (हतप्रभ होकर) क्यां में इतनी बुरी हूँ। (अचानक फफक फफक कर रोने लगती है।) हे राम, जब में मर जाऊँगी तभी मुक्ति मिलेगी।

(आँचल से आँसू पोंछती है।। लीना का प्रवेश)

भवेश– लीना, तू कहाँ से आ रही है?

लीना– पड़ोस में गई थी। वहाँ उषा आंटी कढ़ाई सिखा रही हैं न–

भवेश– कल्पना कहाँ है। मालूम है?

लीना– क्या? दीदी दफ्तर से नहीं आई? अरे, याद आया। आज उसके दफ्तर के एक साथी श्रीवास्तव जी का जन्मदिन है। उनके घर में पार्टी है। वहाँ चली गई होगी।

भवेशः – श्रीवास्तवेन किं कार्यम्? तस्य जन्मदिनम्। अस्यास्तेन किम्?

भामा– अरे, कथं वदति भवान्। श्रीवास्तवः सहकर्मी! तेन निमन्त्रिता। अन्येऽपि सहयोगिनो निमन्त्रिताः स्युः। कथं न गच्छतु तत्र?

भवेशः – यदि गन्तव्यमासीत् तर्हि किमर्थं पूर्वमेव नोक्तवती यत् कार्यालयात् सरलं तत्र गमिष्यामीति?

भामा– अरे बाबा! उक्तमासीत् तया। अहमेव विस्मृतवती। लीनायाः समक्षमेव उक्त्वा गता सा अद्य यत् विलम्बेन समेष्यतीति। पृच्छतु भवान् लीनाम्–लीने, कथयतिस्म कल्पना वा न वा?

लीना– आम् कथितमासीत् तया।

भवेशः – सर्वं विस्मर्यते त्वया। पुत्री कथयित्वा गता। इदानीं यावन्न स्मर्यते यत् तया कथितमासीत्।

भामा– यदि विस्मृतं तर्हि किमत्र क्रियेत? आयास्यति कल्पना। किमत्र अत्याहितम्।

भवेशः – इदमत्र अत्याहितं यदन्धकारः घनीभवति।

भामा– हुँ! सदैव यत् किमपि जल्पति भवान्। बहु कार्यं निवर्तनीयं मया। गच्छामि। (प्रस्थिता)।

भवेश– श्रीवास्तव से इसको क्या मतलब? जन्मदिन उसका है, इसको क्या लेना देना?

भामा– अरे कैसा बोल रहे हो? श्रीवास्तव दफ्तर के साथी हैं। उन्होंने बुलाया है। और भी लोगों को बुलाया होगा। तो क्यों न जाये?

भवेश— अगर जाना था तो पहले क्यों नहीं बता कर गई कि दफ्तर से सीधे वहाँ चली जाऊँगी।

भामा— अरे बाबा बता गई थी वह। मैं ही भूल गई। लीना के सामने ही कहा था उसने कि आज देर से आऊँगी। लीना से पूछ लो। क्यों लीना कहा था कल्पना ने कि नहीं?

लीना— कहा तो था।

भवेश— तुम सब भूल जाती हो। लड़की कह कर गई। तुम्हें अभी तक याद नहीं कि वह बता कर गई थी।

भामा— अरे ध्यान से उतर गया तो क्या किया जाय। आ जायेगी कल्पना ऐसा गजब क्या हुआ है?

भवेश— गजब ये हुआ है कि अँधेरा घना हो रहा है।

भामा— हूँ। आप तो कुछ भी कहते रहते हैं। मुझे बहुत सा काम निपटाना है। जाती हूँ। (प्रस्थान)

(नेपथ्ये मेघगर्जनम्)

भवेशः — (सोत्कण्ठं वातायनं यावद् गत्वा, बहिरवलोक्य, परावर्त्य च)—अरे, बिन्दवः पतन्ति। भामे, भामे, पश्यसि न वा? वर्षाः समागताः।

(पुनर्मेघगर्जनम् उत्कटतरम्)

(नेपथ्ये भामायाः स्वरः—लीने, लीने! किं करोषि? किमिदं बालिशत्वम्?)

भवेशः — (उच्चैः) अरे, कुत्र युवाम्? वर्षा वर्धन्ते।

(ततः प्रविशति विहसन्ती जलक्लिन्नांलीनां हस्तेन समाकृष्य भामा)

भामा— पश्यतु बालिशत्वम् स्वपुत्र्याः। छदिम् आरूढा। वर्षासु क्लेदयति आत्मानम्। अद्यापि शैशवमेव प्रतिश्यायेन ज्वरेण मरिष्यति तदा ज्ञास्यते।

लीना— (विहसन्ती)—मातः, मुञ्च, मुञ्च। क्षणमात्रमेव तु क्लिन्ना—

भवेशः — (सक्रोधम्)—लीने, कोऽयमुत्पातः? अद्यापि बालिकामात्मानं मनुषे?

लीना— (सस्मेरम्) किं मया कृतं तात। किमपि न कृतम्। वस्त्राणि परिवर्त्य आगच्छामि (प्रस्थिता)।

(नेपथ्याद् वात्याया स्वरः)

(नेपथ्य से बादलों की गड़गड़ाहट)

भवेश— (बैचेनी से खिड़की तक जा कर, बाहर झाँक कर, मुड़कर)—अरे, छीटें, पड़ रहे हैं, भामा, भामा, देख रही हो कि नहीं। बारिश होने लगी। **(और भी जोर से बादलों की गडगड़ाहट)**

(नेपथ्य से भामा का स्वर—लीना, लीना, अरे ये क्या कर रही है। ये क्या बचपना है।)

भवेश— (जोर से) अरे कहाँ हो तुम लोग? बारिश तेज हो रही है। (पानी में भीगी और हँसती हुई लीना का हाथ पकड़े भामा का प्रवेश)

भामा– देखो बचपना इस लड़की का। छत पर चढ़ी हुई थी। पानी बरस रहा है और भीग रही है। अभी तक वही बचपना। जुकाम से मरेगी। तो पता चलेगा।

लीना– (हँसती हुई) अम्मा, छोड़ो तो। जरा सी देर ही तो भीगी हूँ।

भवेश– (सक्रोध) यह क्या उत्पात मचा रखा है लीना। क्या अभी भी अपने को बच्ची समझती हो?

लीना– (लज्जित होकर) मैंने क्या किया है पिताजी। कुछ नहीं किया। अच्छा कपड़े बदल कर आती हूँ।

(नेपथ्य से आँधी की आवाज)

भवेशः– (आकर्ण्य) इदानीं वात्या उत्थिता। कदाचिद् वात्या, कदाचित् वर्षाः।

भामा– एतादृशमेव जीवनम्।

भवेशः– मामुपहससि?

भामा– अरे, यत् किमपि कथयामि, तत्रैव भवान् क्रुध्यति। भवतु, इतः परं किमपि न कथयिष्यामि। सर्वथा तूष्णीमेव स्थास्यामि।

भवेशः– कल्पनायाः कथाऽपि नास्ति। रात्रिर्जायते। वर्षा इदानीमपि न स्थगिता। वात्या पुनरुत्थिता।

(परिवर्तितवस्त्रा लीना प्रविशति)

लीना– तात, तस्य श्रीवास्तवस्य दूरभाष्यसंख्या वर्तते। दूरभाष्येण पृष्ट्वा ज्ञायतां कल्पना ततः प्रस्थिता न वेति।

भवेशः– का संख्या?

लीना– अत्र लिखिता। (एकां दैनिन्दिनीं ददाति) अस्मिन् पृष्ठे।

भवेश– (सुनकर) अब आँधी उठ रही है। कभी आँधी, कभी बारिश।

भामा– ऐसा ही है जीवन।

भवेश– हँसी उड़ा रही हो मेरी?

भामा– अरे कुछ भी कहूँ तो तुम्हें गुस्सा आता है। ठीक है अब आगे से कुछ न कहूँगी। एकदम चुप रहूँगी।

भवेश– कल्पना का कोई पता नहीं। रात हो रही है। बारिश अभी तक रुकी नहीं है। तिस पर आँधी और––

(कपड़े बदल कर लीना का प्रवेश)

लीना– पिताजी, उस श्रीवास्तव का टेलीफोन नम्बर है। टेलीफोन करके पूछें दीदी चल दी है वहाँ से कि नहीं।

भवेश– क्या नम्बर है?

लीना– नम्बर इसमें लिखा है (डायरी देती है) इस पेज पर।

भवेशः– इयं कल्पनाया दैनिन्दिनी? (अवलोकयन्) श्रीवास्तवत्रयमत्र लिखितम्। तेषु कतमः स स्यात् यस्य गृहे सा विराजते देवी?

लीना– तत्र प्रथम एव। नाम्ना जे0एन0 श्रीवास्तवः।

भवेशः– (चतुष्पादिकाया दूरभाष्यस्य राहुम्, उत्थाप्य संख्यां मेलापयन्)–मन्ये दूरभाष्यं मृतं तिष्ठति। (सकरुणम्)–किं कुर्मः? इयं वात्या वर्धते। वर्षा अपि पुनरागमिष्यन्ति। (लीनां प्रति) तस्य श्रीवास्तवस्य गृहं ज्ञायते? कुत्र वर्तते तस्य गृहम्?

लीना– गृहं तु मया न ज्ञातम्।

भामा– ज्ञाते गृहे किं स्यात्।

भवेशः– अहं तत्र गत्वा कल्पनामानयेयम्।

भामा– तिष्ठतु भवान्। बहिर्गमनेन सन्धिवातो भृशं पीडयेत्। कल्पना आगमिष्यति।

(मेघगर्जनं झञ्झारवश्च शममेति)

भवेश– यह कल्पना की डायरी है? (पढ़ता हुआ)–यहाँ तो तीन श्रीवास्तवों के नम्बर है। कौन सा श्रीवास्तव है जिसके घर देवी जी गई हैं–कैसे पता चले?

लीना– पहले वाला। जे0एन0 श्रीवास्तव नाम है उसका।

भवेश– (स्टूल से टेलीफोन का चोंगा उठाकर नम्बर मिलाता हुआ)–लगता है टेलीफोन डैड है। (करुण स्वर में) क्या करें? यह आँधी–पानी फिर आ सकता है। (लीना से) घर मालूम है उस श्रीवास्तव का? कहाँ है उसका घर?

लीना– घर तो मालूम नहीं है–

भामा– मालूम होता तो क्या कर लेते?

भवेश– मैं चला जाता कल्पना को लाने।

भामा– रहने दो आप। ऐसे में बाहर जाने से गठिया और तकलीफ देगा। आ जायेगी कल्पना।

(आँधी पानी का जोर कम होता जाता है।)

भामा– इदानीं वर्षा विरताः। सा प्रस्थिता स्यात्। होरार्धेन आगमिष्यति।

भवेशः – दूरभाष्यं यदि कार्यमकरिष्यत् तर्हि अकथयिष्याम तां त्वरितमागच्छेति।

भामा– श्रीमती भाटियामाकार्य पृच्छामि यदि तस्या दूरभाष्यं कार्यं करोति ततो वक्तुं शक्यते। (वातायनमुपगम्य) भाटिया भगिनि, ए भाटिया भगिनि! अपि श्रूयते? भाटिया भगिनि।

(वातायनस्यापरपार्श्वे श्रीमती भाटिया प्रविश्य तिष्ठति)

श्रीमती भाटिया– ए भामे! किं मां शब्दापयसि?

भामा– अथ किम्? भवत्या दूरभाष्यं कार्यं करोति न वा?

श्रीमती भाटिया–तत् तु ह्योदिनादेव मृतं तिष्ठति। युष्माकं करोति किं कार्यम्?

भामा— ननु! अधुनैव मृतम्। कल्पना स्वसहकर्मिणः श्रीवास्तवस्य गृहं गता। तत्र सम्पर्कः कर्तुमिष्यते स्म।

श्रीमती भाटिया— समयोऽतीव दारुणः। रात्रिर्जायते। कठोरीभूतयौवना तव कन्या। ह्यः किं जातम्, श्रुतं न वा?

भामा— किं जातम्?

श्रीमती भाटिया— स उद्योगपतिर्वर्तते. सी०एस० सन्तानी। तस्य पुत्री प्रतिनिवर्तते स्म। तामुत्थाप्य गतवन्तः।

भामा— अब बारिश रुक गई है। अब वह चली होगी। आधे घंटे में आ जायेगी।

भवेश— टेलीफोन काम कर रहा होता, तो जल्दी आने का बोल देते उसको।

भामा— मिसेज भाटिया को बुला कर पूछती हूँ उनका फोन काम कर रहा है क्या। अगर कर रहा होगा, तो उनके यहाँ से कह देंगे। (खिड़की के पास जाकर)—भाटिया बहन जी, ए भाटिया बहनजी, सुन रही हैं, भाटिया बहन जी!

(खिड़की के दूसरी ओर मिसेज भाटिया आती है)

मिसेज भाटिया— ए भामा, हमें बुला रही हो क्या?

भामा— और क्या? आपका टेलीफोन काम कर रहा है?

मिसेज भाटिया— वो तो कल से ही डैड पड़ा है। तुम लोगों का काम कर रहा है?

भामा— नहीं। अभी अभी डैड हुआ है। कल्पना अपने दफ्तर के साथी श्रीवास्तव के यहाँ गई है। उसके यहाँ संपर्क करना था।

मिसेज भाटिया— समय बड़ा खराब है। रात हो रही है। तुम्हारी लड़की ठहरी एकदम जवान। कल क्या हुआ सुना?

भामा— क्या हुआ?

मिसेज भाटिया— वो एक इंडस्ट्रियलिस्ट हैं—सी0एस0 सन्तानी। उसकी लड़की वापस आ रही थी घर। उसको उठा कर ले गये—

भामा— अरे! के?

श्रीमती भाटिया— प्रखरे दिने उत्थाप्य गतवन्तः। सर्वे दृष्टवन्तः। पश्यत्सु जनेषु उत्थाप्य तां नीतवन्तः।

भामा— अरे, के?

श्रीमती भाटिया— सा चीत्करोति स्म।

भामा— परन्तु के नीतवन्तस्ताम्?

श्रीमती भाटिया— अरे के के इति किं पृच्छसि। किमहं जानामि के इति। ये केऽपि स्युः। बहवः सञ्चरन्ति। विशदेऽपि दिने सञ्चरन्ति का कथा रात्रेः। तथापि जनाः स्वपुत्र्योऽस्यां वेलायामपि बहिर्गन्तुं ददति। भवतु, किं मम? बहुकार्यं वर्तते। गच्छाम्यहम्। (निर्गता)

भामा— (परावर्त्य, भवेशं प्रति)—भवान् कञ्चित् सन्तानीमहोदयं जानाति?

भवेशः — बहवः सन्ति सन्तानिनः। अहं कं कं जानीयाम्? किं तस्य?

भामा— श्रीमती भाटिया कथयति स्म कश्चन सन्तानी वर्तते उद्योगपतिः।

भामा— अरे! कौन लोग?

मिसेज भाटिया— दिन दहाड़े उठा ले गये। सब देखते रहे। लोगों के देखते—देखते उठाया और ले गये।

भामा— अरे, पर कौन लोग?

मिसेज भाटिया— लड़की चिल्लाती रही—

भामा— पर ले कौन गये उसे?

मिसेज भाटिया— अरे कौन कौन कौन क्या किये जा रहे ही। हमें क्या मालूम कौन। कोई भी होंगे। बहुत से घूमते रहते हैं। दिन दहाड़े घूमते रहते हैं, रात की क्या बात? पर लोग हैं कि ऐसे वक्त में भी अपनी लड़कियों को बाहर जाने देते हैं। खैर, हमें क्या करना? बहुत काम निपटाना है। चलती हूँ—(जाती है)।

भामा— (मुड़कर, भवेश से)—आप किसी सन्तानी को जानते हैं?

भवेश— सन्तानी नाम के कई लोग हैं। क्या हुआ सन्तानी को?

भामा— मिसेज भाटिया कह रही थी कि कोई सन्तानी हैं—इंडस्ट्रियलिस्ट—

भवेशः — वर्तते। वस्त्रनिर्माण्याः स्वामी वर्तते एकः सन्तानी। किं तस्य?

भामा— तस्य पुत्री प्रखरे दिने केऽपि तस्करा उत्थाप्य नीतवन्तः।

भवेशः — एवमेव भवति। एतादृश एव कालः। कस्यापि जीवनं सुरक्षितं न वर्तते। कन्यकाः अनुसन्ध्यं बहिर्भ्रमन्ति। तासामियमेव गतिर्भवेत्।

भामा— (सक्रोधम्) सर्वदा अशुभमेव वक्ति भवान्।

भवेशः — किं मया उक्तम्।

भामा— स्वकन्ययोः कृतेऽपि कापि ममता नास्ति अस्य पुरुषस्य मनसि (इति रोदिति)

भवेशः — अरे बाबा, अहं तु कथयाम्येव—यदि तस्य श्रीवास्तवस्य सङ्केतो ज्ञायते तर्हि गत्वा कल्पनामानययेयमिति। (द्वारि घण्टिकावादनध्वनिः)

भवेश— हाँ, कपड़े की मिल के मालिक हैं एक सन्तानी—क्या हुआ उनको?

भामा— उनकी बेटी को दिन—दहाड़े लुटेरे उठा ले गये।

भवेश— ऐसा ही चल रहा है। समय ही ऐसा है। जीवन किसी का सुरक्षित नहीं है। लड़कियाँ शाम के बाद भी बाहर घूमती रहती हैं। उनका यही हाल होगा—

भामा— (सक्रोध) आप तो सदा अशुभ ही बोलेगें।

भवेश– मैंने क्या कहा?

भामा– अपनी बेटियों के लिये भी कोई ममता नहीं इस आदमी के मन में (रोती है)।

भवेश– अरे बाबा मैं तो कह ही रहा था कि अगर उस श्रीवास्तव के घर का पता हो, तो मैं जा कर कल्पना को ले आऊँ।

(द्वार पर घंटी की आवाज)

भामा– (चमत्कृत्य) अरे कल्पना तु आगता। (सत्वरं द्वारं यावद् गत्वा, द्वारमुद्घाट्य अवलोक्य च) कथम्? कोऽपि नास्ति। (सहसा अन्धकारः)

भवेशः– अरे, विद्युत् विगता, करदीपम् अन्विष्यामि।

(उत्थाय परिक्रामति)

लीनायाः स्वरः– मात, अग्निपेटिका कुत्र वर्तते? अहं सिक्थवर्तिकां ज्वलयामि।

भामा– (द्वारात् परावृत्य–अन्धकारे शनैः–शनैः चलन्ती)–रसवत्यां चुल्लकस्य पार्श्वे एव तु स्यात्। (सहसा भवेशेन सङ्घट्टते) अयि, मातः, अयं कः?

भवेशः– (सक्रोधम्)–अरे, अहमस्मि। करदीपमन्विष्यामि। दृष्ट्वा न चलसि!

भामा– भवान् न चलति दृष्ट्वा।

लीना– (सिक्थवर्तिकां ज्वलन्तीमानीय हसन्ती) हा–हा पितरौ परस्परेण घट्टितौ। एतत् तु चलचित्रदृश्यं जातम्।

भामा– (तर्जयन्ती) तूष्णीं भव। सदैव परिहासस्ते। अत्र कण्ठगताः प्राणाः सन्ति।

(ततः प्रविशति महेशः। अन्धकारे तस्य छाया दृश्यते)

भामा– (चौंककर)–अरे कल्पना आ तो गई। (तेजी से द्वार तक जाकरकर द्वार खोल कर देखती है) अरे कोई भी तो नहीं।

(सहसा अन्धकार।)

भवेश– अरे बिजली चली गई। टार्च ढूँढता हूँ। (उठकर चक्कर लगाता है) (लीना की आवाज) माँ, माचिस कहाँ है? मैं मोमबत्ती जलाती हूँ।

भामा– (द्वार से पलट कर अँधेरे में धीरे–धीरे चलती हुई)–रसोई में चूल्हे के बगल में रखी है। (अचानक भवेश से टकरा जाती है) उइ माँ, यह कौन है?

भवेश– (सक्रोध) अरे मैं हूँ। टार्च ढूँढ रहा हैं। देख कर नहीं चलती हो।

भामा– आप देख कर नहीं चलते हो।

लीना– (जलती हुई मोमबत्ती लिये प्रवेश करके, हँसती हुई) अरे माँ, पिताजी टकरा गये एक दूसरे से। ये तो फिल्म का सीन हो गया–

भामा– (डपट कर) चुप रह। तेरे लिये हमेशा हँसी–मजाक ही है। यहाँ प्राण गले में आ रहे हैं।

(महेश का प्रवेश। अँधेरे में उसकी छाया दिखती है।)

लीना– (छायामवलोक्य)–उइ मात; तत्र कोऽपि वर्तते।

भामा– पितरः सन्ति।

भवेशः– अहम् अत्र स्थितोऽस्मि।

लीना– मातः पश्य पश्य। तत्र कः अस्ति?

भवेशः – (साटोपम्)–यष्टिमानय, यष्टिमानय। (साक्षेपं भामां प्रति) द्वारमुद्धाटितं विधाय अन्तः प्रविष्टा त्वमिति मन्ये। इदानीं भुङ्क्ष्व फलमनवधानतायाः। प्रविष्टः कश्चन चौरो वा लुण्ठको वा।

भामा– हे राम, इदानीं किं भविष्यति? (इति रोदिति)

भवेशः – तूष्णीं भव। अहं प्रहरामि। (लीना लगुडमादाय तस्मै ददाति)।

भवेशः – (सज्जीभूय) एष प्रहरामि। (उच्चैः)–कथय रे चौर! अनेन लगुडेन तव मस्तकं मडमडायिष्ये।

महेशः – अरे पितरः पितरः किं कुर्वन्ति भवन्तः? अहमस्मि महेशः।

भवेशः – (परिचित्य) अरे महेशस्त्वम्? पूर्व कथं न कथितवान्?

महेशः – अहं द्वारि समागतः। विद्युत्घण्टिका वादिता। मात्रा द्वारमुद्घाटितम्। यावदन्तः प्रविशामि तावद् विद्युत् गता। यावदुपानहौ अवतारयामि, तावदेव भवता लगुडेनाहमाक्रान्तः।

लीना– (छाया को देखकर) उइ माँ, वहाँ पर कोई है।

भामा– पिताजी हैं।

भवेश– मैं इधर हूँ।

लीना– माँ देखो तो। वहाँ कौन खड़ा है। ये–

भवेश– (हड़बड़ाहट में) लाठी लाना, लाठी लाना। (भामा से आक्षेप के साथ) दरवाजा खुला छोड़कर भीतर चली आई हो ऐसा लगता है। अब भुगतो अपनी असावधानी का फल। घुस आया है कोई चोर लुटेरा।

भामा– हे राम। अब क्या होगा? (रोती है)।

भवेश– अब चुब भी करो। मैं धुनाई करता हूँ इसकी तो।

लीना– लाठी लाकर उसे देती है।

भवेश– (प्रहार की मुद्रा में तैयार होकर)–ये मारा। क्यों वे चोर। एक ही लाठी में खोपड़ी फोड़ दूँगा तेरी––

महेश– अरे पिताजी, पिताजी ये कर क्या रहे हैं? मैं हूँ महेश।

भवेश– (पहचान कर) अरे महेश तू? पहले क्यों नहीं बताया?

महेश– मैं दरवाजे तक आया। घंटी बजाई। माँ ने दरवाजा खोला। जब तक भीतर आया, बिजली चली गई। भीतर आ कर जूते उतार ही रहा हूँ कि आपने तो लाठी के कर धर दबोचा–

लीना– यावच्च पितरः लगुडेन प्रहरन्ति तावदेव त्वं चीत्कृतवान्।

भामा– दिष्ट्याऽस्य कापि क्षतिर्न जाता। अन्यथा एतेषां को विश्वासः? लगुडेन प्राहरिष्यन्।

महेशः – मातः, महत्कलकलं जातमद्य आपणे। क्रिकेट्–क्रीडायां ये छात्रा आगता आसंस्ते एकेन त्रिचक्रिकाचालकेन कलहमकुर्वन्। संघर्षो जातः। तदा सर्वेस्त्रिचक्रचालकैर्नगरावरोधः कृतः। अनन्तरं तैः कार्यत्यागः कृतः। नगरे वाहनानि न चलन्ति।

भामा– यदि वाहनानि न चलन्ति तर्हि कथं मम पुत्री आगमिष्यति?

महेशः– ज्येष्ठा भगिनी? कुत्र गता सा?

भवेशः – न ज्ञायते कुत्र गता। यस्य गृहं गता, तस्य श्रीवास्तवस्य सङ्केत्तो न ज्ञायते। अधुना त्वं वदसि यद् वाहनानि न चलन्ति। यदि वाहनानि न चलन्ति तर्हि कथं सा आगमिष्यति?

महेशः – पद्भ्यामागमिष्यति, किमन्यत्?

(क्षणं शान्तिः)

लीना– और जब तक पिताजी लाठी से माथा फोड़ते, तब तक तुम डर के मारे चिल्ला पड़े–

भामा– चलो बच तो गया। नहीं तो इनका कोई भरोसा नहीं है? चला ही देते लाठी।

महेश– माँ, आज बाजार में बड़ा झगड़ा हुआ। क्रिकेट का मैच देखने जो लड़के गये थे, उन्होंने एक आटोरिक्शा वाले से झगड़ा किया। जम कर लड़ाई हो गई। तब सारे आटोरिक्शा वालों ने चक्का जाम कर दिया और धरने पर बैठ गये। शहर में कोई सवारी नहीं चल रही।

भामा– अगर सवारियाँ नहीं चल रही हैं, तो कैसे आयेगी मेरी बेटी–

महेश– कौन? दीदी? गई कहाँ है वह?

भवेश– यही तो पता नहीं है कि कहाँ गई है। जिस के यहाँ गई है, उस श्रीवास्तव के घर का पता नहीं मालूम। अब तुम कह रहे हो कि कोई सवारी नहीं मिलेगी। अगर सवारी नहीं मिलेगी, तो कैसे आयेगी वह?

महेश– पैदल आयेगी और क्या?

(एक क्षण शान्ति)

भवेशः – किं कुर्मः अस्मिन् अन्धकारे? वृत्तपत्रमपि पठितुं न शक्यते वार्ताः श्रोतुं वा द्रष्टुं वा न शक्यन्ते।

भामा– वृत्तपत्रं–वार्ताः एतद् विहाय किमप्यन्यद् वर्तते भवतां मानसे? मम पुत्री कथमागमिष्यति गृहम्। रात्रिर्भवति प्रगाढा। नगरे वर्तते अन्धकारः यातायातं निरुद्धम्।

भवेशः– महेश, त्वं गत्वा तामानय कल्पनाम्।

महेशः– कुत्र गत्वा आनयामि। अहं न जानामि कुत्र गता सा।

भवेशः– श्रीवास्तवस्य गृहमन्विष्य तामानय।

महेशः– अन्वेषणम्? अहं करिष्यामि? न न। अहं कस्यापि गृहमन्वेष्टुं न शक्नोमि।

(क्षणं विरामः। अतिदूरात् श्रृगालरवः। तदनु सहसा घण्टाध्वनिः)

भवेश– क्या किया जाय इस अँधेरे में। न अखबार पढ़ सकते हैं न खबर सुन सकते हैं।

भामा– अखबार और खबरें। सिवाय इनके और कुछ है आपके दिमाग में? मेरी बेटी घर कैसे आयेगी? रात हो रही है। शहर में अंधेरा छाया हुआ है। आने–जाने का साधन नहीं है–

भवेश– महेश, तू जा कर ले आ उसको–

महेश– कहाँ जा कर ले आऊँ? मुझे नहीं मालूम कहाँ गई है वह–

भवेश– उस श्रीवास्तव का घर ढूँढ कर ले आ....

महेश– ढूँढ कर ले आऊँ? मैं? ना ये काम मेरे बस का नहीं है–––

(एक क्षण विराम। दूर से सियार की आवाज। फिर गरज।)

भामा– नववादनं जातम्। न कदापि एतावच्चिरायितं कल्पनया। (भवेशं प्रति) भवानिदानीं तूष्णीं स्थितः। किमपि क्रियताम्।

भवेशः – किं क्रियेत? तया गन्तव्यमेव नासीत्। सा गता। इतो वयं सीदामः। अस्मिन्नन्धकारे। दूरभाष्यमपि मृतं तिष्ठति।

(सहसा दूरभाष्यघण्टिका वदति)

भवेशः – अरे, दूरभाष्यं तु कार्यं करोति। (दूरभाष्यबाहुमुत्थाप्य)–हलो, अहं भवेशशर्मा वदामि। (श्रवणमभिनीय) किमुक्तम्? अग्निर्ज्वलितः? को भवान्? किं कथयति? महानग्निः? (भामां प्रति) अरे कोऽयम्? किं कथयति?

भामा– कश्चन विक्षिप्तः स्यात्।

भवेशः– महोदय, अग्निर्लगितस्तर्हि किमहं कुर्याम्? (पुनः श्रवणमभिनीय) किं कथितम्? महान्ग्निः प्रसरति? किं कुर्याम्? अग्निशमनम्? न न न। नायमग्निशमनकार्यालयः। अन्यैव संख्या भवद्भियोजिता। अग्निशमन कार्यालयस्य संख्या? कथमहं वदामि? गृहे अन्धकारः वर्तते। किमपि कर्तुं न शक्यते।......क्षम्यताम्।..... क्षम्यताम् (दूरभाष्यस्य बाहुमधिकेतु स्थापयित्वा, महतीं श्रान्तिं नाटयन्) ओह! इयं दुरवस्था कदा अपयास्यति?

भामा– नौ बज गये। कल्पना ने कभी इतनी देर नहीं की। (भवेश से) आप अभी भी चुप बैठे हैं। कुछ कीजिये।

भवेश– क्या करें? उसको जाना ही नहीं चाहिये था। वह चली गई। हम इधर परेशान हो रहे हैं। इस अँधेरे में टेलीफोन अलग डैड पड़ा हुआ है।

(अचानक टेलीफोन की घंटी बजती है।)

भवेश– अरे टेलीफोन तो चालू है। (टेलीफोन का चोंगा उठाकर) मैं भवेश शर्मा बोल रहा हूँ (सुनने का अभिनय कर) क्या कहा? आग लग गई है? आप कौन है? क्या कह रहे हैं? जी? बहुत ज्यादा फैल रही है आग?–(भामा से)–अरे कौन है यह? कहा क्या रहा है?

भामा– कोई पागल होगा।

भवेश– श्रीमान्जी, आग लगी हुई है, तो हम क्या कर सकते हैं? (फिर से सुनने का अभिनय कर) क्या कहा? बहुत ज्यादा फैल रही है आग?–तो क्या करूँ? फायर ब्रिगेड? न, न, न। ये फायर ब्रिगेड का दफ्तर नहीं है। आपने गलत नम्बर लगा लिया। फायर ब्रिगेड का नम्बर? कैसे बताऊँ? घर में अँधेरा है। कुछ नहीं कर सकते। माफ कीजिये, माफ कीजिये। (टेलीफोन रख कर थकान दिखाते हुए)–ओह, ये हालत कब सुधरेगी?

महेशः – एतदेवाहं वदामि इयं दुरवस्था कदा अपयास्यति?

भवेशः – तव किं जातम्?

महेशः – मम पादुके। अहं स्वपादुके अत्रैव अस्मिन् कोणे सदा स्थापयामि। परन्तु ते न कदापि मिलतः। इयं लीना। क्व गता सा? नूनं सैव परिधाय गता। लीने लीने !

(क्षणं विरामः)

भवेशः – अरे लीना क्व गता? अस्मिन्नन्धकारे? भामे, भामे!

भामा– ननु किमर्थमधुना चीत्क्रियते? किं जातम्?

भवेशः – इदानीं लीना कुत्रापि लीना।

भामा– इहैव क्वचित् स्यात्। (आकारयन्ती) लीने।

भवेशः – सापि कुत्रचित् गता स्यात्। यथा कल्पना तथैव इयम्।

(क्षणं विरामः, द्वारोद्घाटनध्वनिः)

महेश– वही तो मैं भी कह रहा हूँ–ये हालत कब सुधेरेगी ?

भवेश– महेश–अब तुझे क्या हुआ?

महेश– मेरी चप्पलें। मैं अपनी चप्पलें हमेशा इस कोने में रखता हूँ। पर यहाँ कभी नहीं मिलती मेरी चप्पलें। ये लीना की करतूत है। वो पहन कर गई है। कहाँ गई है ये। (पुकारता हुआ) लीना, लीना।

(एक क्षण विराम)

भवेश– अरे लीना कहाँ चली गई? ऐसे अंधेरे में? भामा, भामा।

भामा– अब किसलिये चिल्ला रहे हैं क्या हो गया?

भवेश– अब लीना कहीं लीन हो गई।

भामा– लीना, लीना। अब लीन कहाँ हो जायेगी। यहीं कहीं होगी। (पुकारती हुई)। लीना, लीना।

भवेश– चली गई होगी कहीं। सब एक जैसे हैं।

(एक क्षण विराम। दरवाजा खोलने की आवाज)

भवेशः– (उच्चैः) अरे को वर्तते तत्र। महेश महेश! लगुडमानय। मया तु तदानीमेव कथितं यत् प्रविष्टः कश्चन–चौरः––

लीना– पितः! अहमस्मि।

भवेशः– (परिचीय)–त्वम्? त्वं कुत्र आसीः?

लीना– अहं शौचालय आसम्।

भवेशः– ओह।

महेशः– मम पादुके निधाय गता त्वम् पुनरपि। अवतारय अवतारय मे पादुके।

लीना– किं जातं यदि क्षणं तव पादुके मया परिहिते?

महेशः– क्षणं परिहिते? सदैव त्वमेव धारयसि मे पादुके। देहि अधुना। (उभौ कलहायेते)

भवेशः– (सन्तर्जयन्) तूष्णीं भवतम्। कोऽयं युवयोर्व्यामोहः? अन्धकारः वर्तते। कल्पना नास्ति। तदुपरि अनयोः कलहः।

(क्षणं विरामः। नेपथ्यात् मातः मातः इति स्वरः)

भवेश– (जोर से) अरे कौन है वहाँ? महेश, ए महेश! लाठी लाना। मैंने तो उसी वक्त कहा था कि कोई चोर घुसा हुआ है।

लीना– पिताजी, मैं हूँ।

भवेश– (पहचान कर) तुम? तुम कहाँ थीं?

लीना– मैं बाथरूम गई थी।

भवेश– ओह।

महेश– मेरी चप्पल पहन कर गई थी फिर से। उतार उतार मेरी चप्पल।

लीना– अरे पहन ली, तो क्या गजब हो गया जरा सी देर?

महेश– जरा सी देर? तू हमेशा पहने रहती है मेरी चप्पलें। निकाल।

(दोनों झगड़ते हैं।)

भवेश– (डपटता हुआ) अब चुप भी रहो दोनों। यह कैसी मति फिर गई है तुम दोनों की? अँधेरा बढ़ता जा रहा है। कल्पना है नहीं। और ये लड़े जा रहे हैं, लड़े जा रहे हैं।

(एक क्षण विराम। नेपथ्य से अम्मा, अम्मा की पुकार)।

भामा– अरे कल्पना आगता। (सत्वरं गत्वा द्वारमुद्घाटयति)।

भवेशः – द्वारं सावधानतया पिधेयम्। पश्य कः वर्तते? कल्पना वा अन्यो वा?

(ततः प्रविशति कल्पना भामया सह)

भवेशः – (सक्रोधम्) द्वारं सम्यक् पिहितम्?

(क्षणं विरामः)

कल्पना–किं सञ्जातम्? कथं यूयं सर्वे इत्थं तूष्णीं स्थिताः। (लीनां प्रति) लीने, किं जातम्?

लीना– न किमपि। त्वं विलम्बेन आयाता, अतः पितरः कुप्यन्ति।

कल्पना–कथमहं समायाता, अहमेव जानामि। वाहनानि न चलन्ति। तस्य श्रीवास्तवस्य गृहे कार्यालयस्वामिनः झामहोदयाः सपत्नीकं समागताः। तैः कारयानेन अहमिहानीता। ते श्रीवास्तवस्यापि गृहे विलम्बेन समागताः यदा ते प्रस्थितास्तदैवाहमपि।

भामा– दूरभाष्येण सूचना कथं न दत्ता।

कल्पना–बहुशः प्रयतितं मया। अत्र दूरभाष्ये घण्टिका याति दूरभाष्यं कोऽपि नोत्थापयति स्म।

(वातायनसम्मुखं श्रीमती भाटिया प्रविशति)

भामा– अरे कल्पना आ गई।

(तेजी से जाकर दरवाजा खोलती है।)

भवेश– दरवाजा सावधानी से बन्द कर देना। देख लेना है कौन, कल्पना है या कोई और?

(भामा के साथ कल्पना का प्रवेश)

भवेश– (क्रोध से) दरवाजा ठीक से बन्द किया?

(एक क्षण विराम)

कल्पना– क्या हुआ? ऐसे चुप क्यों हो तुम सब लोग? (लीना से) लीना, हो क्या गया?

लीना– कुछ नहीं हुआ। तुम देर से आई हो–पिताजी नाराज हो रहे हैं।

कल्पना– कैसे आ पाई–मैं ही जानती हूँ। आटोरिक्शा वगैरह कुछ नहीं चल रहे हैं। उस श्रीवास्तव के यहाँ हमारे बास झा साहब अपनी बीवी के साथ आये थे। उन्होंने कार से यहाँ तक छोड़ा। वे देर से आये थे, तो जब वे निपट कर चले तब में चल पाई–

भामा– फोन क्यों नहीं कर दिया?

कल्पना– बहुत कोशिश की। फोन की घंटी बज रही है, कोई उठाता नहीं।

(खिड़की के सामने श्रीमती भाटिया का प्रवेश)

श्रीमती भाटिया–भामे, ए भामे। कल्पना गृहमागता वा न वा? नैवागता? मया तु प्रागेव कथितमासीत्। अधुना कस्यापि विश्वासो नैव वर्तते। कोऽपि किमपि कुर्यात्।

भामा– किं जातम्?

भाटियाः–मम पतिदेवः सद्य एव समागतः। तेन मार्गे दृष्टं केचन दुष्टाः अन्धकारे काञ्चन युवतीं कर्षन्ति, उत्सारयन्ति, नयन्ति, धर्षयन्ति, प्रधर्षयन्ति, तर्जयन्ति, भीषयन्ति, मारयन्ति, ताडयन्ति च। अन्ततः सा कन्या प्रोवाच चलामि, अहं युष्माभिः सह चलामि। कल्पना गृहमागता न वा? सा कन्या युष्माकं कल्पना तु नासीत्? नहि, कल्पना न भवेत्। तथापि किमपि भवितुमर्हति अस्मिन् काले। अतः येषां येषां गृहे तारुण्यमारूढाः कन्यकाः सन्ति, तैः सततं प्रहरिभिरिव स्थेयम्। चलामि। बहु कार्यं वर्तते। एतेषां कृते रोटिकाः पक्तव्याः। (निर्याता) (भाटियायाः संवादसमये कल्पना व्रीडितेव कुपितेव मातरं पितरं च निध्यायति)।

कल्पना–(फूत्कृत्य रुदन्ती) एतदेव चिन्तितमासीत् किं भवद्भिः सर्वैः मामधिकृत्य यत् श्रीमती भाटिया प्रोक्तवती (सहिक्कारवं रोदिति)।

भामा– अरे, कथं रोदितुमेव प्रवृत्ता? (समीपं गत्वा कल्पनामङ्के गृह्णाति)– त्वामधिकृत्य एवं स्वप्नेऽपि न सम्भावयितुं शक्नुमः।

भवेशः – पुत्रि, अतिस्नेहः पापशङ्कीति न्यायेन यदन्यथा अन्यथा चिन्तितं, तन्न त्वां प्रत्यविश्वासात्, अपितु आत्मनो दौर्बल्यादेष, तदलमन्यथा गृहीत्वा। (सहसा विद्युद्दीपा ज्वलन्ति)

महेशः – अरे, प्रकाशस्त्वागतः। किमन्यदिष्यते।

भवेशः – सम्प्रति न किमपीष्यते। तथापीदमस्तु।
दुर्जनैर्जल्पितं नान्यथा कल्प्यताम्।
कल्पना स्यात् सदा मङ्गलालङ्कृता।
स्यात् प्रकाशोऽक्षयो जीवने झङ्कृता
भारती भामती चास्तु सौख्यप्रदा।।

श्रीमती भाटिया– भामा, ऐ भामा! कल्पना आई कि नहीं? नहीं आई न? मैंने तो पहले ही कहा था। आज के जमाने में किंसी का भरोसा नहीं। कोई कुछ भी कर सकता है।

भामा— क्या हो गया?

श्रीमती भाटिया— मेरे हस्बैंड अभी आये हैं। उन्होंने देखा कि रास्ते में कुछ गुंडे लोग एक लड़की को डरा धमका रहे थे, खींच के ले जाना चाह रहे थे, मार पीट रहे थे। फिर वो लड़की कहने लगी कि ठीक, मैं तुम लोगों के साथ चल रही हूँ। कल्पना घर आ गई कि नहीं? अरे वो लड़की तुम लोगों की कल्पना तो नहीं थी? नहीं भई, कल्पना न होगी। फिर भी कुछ भी हो सकता है आज के जमाने में? घर में जवान लड़कियाँ हों, तो सँभल कर रहना चाहिये। चलती हूँ—बहुत काम है। इनके लिये रोटी सेकना है।

(प्रस्थान)

(भाटिया के संवाद के समय कल्पना चकित, लज्जित और क्रुद्ध कभी माँ को देखती है, कभी पिता को।)

कल्पना— (सहसा फफक कर रोती हुई) क्या आप लोगों ने सबने मेरे लिये यही सोच रखा था जो मिसेज भाटिया कह के गई हैं?

भामा— अरे रोने ही लग गई? (पास जाकर कल्पना को गले लगा कर) तेरे बारे में सपने में भी ऐसा सोच सकते हैं हम?

भवेश— बेटी, अधिक स्नेह के कारण आदमी अनर्थ की शंकाएँ करने लगता है अपनों के लिये। हमने ऐसा वैसा सोचा भी, तो तुम्हारे प्रति अविश्वास के कारण नहीं, अपनी कमजोरी के कारण ही। इसलिये और कुछ मत सोचो।

(सहसा बिजली का प्रकाश)

महेश— अरे बिजली तो आ गई। अब और क्या चाहिये?

भवेश— अब और कुछ नहीं चाहिये। हाँ इतना जरूर हो—

सुन कर दुर्जन की जल्पना,
मन न करे अन्यथा कल्पना।
हो प्रकाश जीवन में अक्षय सदा
वाणी हो तेजस्वी, सौख्यप्रदा।।

1.5 युगबोध

इस वर्तमान समय में युवती बालिका जो ऑफिस में कार्य करती है, के रात्रि में विलंब होने की सुरक्षा के लिए मध्यमवर्गीय पिता एवं संपूर्ण परिवार की चिंता को इस एकांकी के माध्यम से प्रोफेसर राधा वल्लभ त्रिपाठी ने बहुत सुंदरता से व्यक्त किया है।

1.6 बोधप्रश्न

1. प्रतीक्षा एकांकी के लेखक कौन हैं और इसके प्रमुख पात्रों के नाम बताइए?
2. प्रस्तुत एकांकी के लक्ष्य एवं सन्देश को स्पष्ट रूप से लिखिए।
3. राधा वल्लभ त्रिपाठी की व्यक्तित्व एवं कर्तृत्त्व पर एक निबंध लिखिए?

इकाई–3 प्रो0 हरिदत्तशर्माकृत ''वधूदहनम्''

इकाई–3 प्रो0 हरिदत्तशर्माकृत ''वधूदहनम्''

इकाई की रूपरेखा

उद्देश्य

3.1 कवि का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व

3.2 एकांकी की कथावस्तु

3.3 अभिनेयता

3.4 एकांकी का अनुवाद

3.5 एकांकी में युगबोध

3.6 बोधप्रश्न

उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई नाट्यकाव्य या एकांकी पर आधारित है। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप–

1. प्रो0 हरिदत्त शर्मा के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व से परिचित होंगे।
2. उनके द्वारा लिखित एकांकी 'वधूदहनम्' की कथावस्तु और उसके अनुवाद को समझ सकेंगे।
3. एकांकी के युगबोध के विषय में ज्ञान प्राप्त कर लेंगे।
4. प्रश्न उत्तर के माध्यम से कवि एवं उनकी रचना के विषय में अवगत हो सकेंगे।

3.1 कवि का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व

'कविपुँस्कोकिल' की उपाधि एवं विभिन्न पुरस्कारों से सम्मानित प्रो. शर्मा स्वदेश में ही नहीं, अपितु विदेशों में भी अपनी विद्वत्ता, सरस भाषा, यथार्थ चित्रण, छन्दोयुक्त कविता, नाटक, गजल, गीतिकाव्य, एवं बाल–साहित्य आदि के लिये जाने जाते हैं। संस्कृत के प्रख्यात विद्वान् एवं कवि हरिदत्त शर्मा, संस्कृत–विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय में आचार्य पद को सुशोभित करते हुए पूर्व में विभागाध्यक्ष रह चुके हैं। इनका जन्म 27 सितम्बर, 1948 को उत्तर प्रदेश के हाथरस नगर में हुआ। उनकी माता श्रीमती हरप्यारी देवी एवं पिता श्री लहरी शंकर शर्मा थे। उनकी आरम्भिक शिक्षा हाथरस में हुई तथा उच्च शिक्षा इलाहाबाद में हुई। यहीं पर उन्होंने प्रो० आद्याप्रसाद मिश्र जी के निर्देशन में संस्कृत–काव्यशास्त्रीय भावों पर शोध कर डी०फिल्० की उपाधि प्राप्त की। सन् 1972 में डॉ० शर्मा की नियुक्ति इलाहाबाद विश्वविद्यालय में हो गई और वहीं उन्होंने प्रवक्ता, उपाचार्य एवं आचार्य के रूप में कार्य किया।

प्रो० शर्मा 17 देशों की शैक्षणिक–सांस्कृतिक यात्रा कर चुके हैं। जिनमें प्रमुख देश हैं–जर्मनी, फ्रांस, नीदरलैण्ड्स, आस्ट्रिया, मलेशिया, इण्डोनेशिया, इटली, अमेरिका, मॉरिशस, स्कॉटलैण्ड, थाईलैण्ड, जापान। थाईलैण्ड में वे तीन वर्ष तक 'विज़िटिंग प्रोफेसर' के रूप में कार्यरत रहे। उन्होंने अब तक 43 अन्तर्राष्ट्रीय, 35 राष्ट्रीय सम्मेलनों तथा 80 संगोष्ठियों में भाग–ग्रहण किया है। वे अनेक विश्वविद्यालयों की उच्च समितियों के सदस्य हैं। उनकी रचनाएँ अनेक विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में निर्धारित हैं तथा उन पर अनेक शोध कार्य हो रहे हैं। वे 'ए0आई0ओ0सी0' के उपाध्यक्ष पद पर रह चुके हैं तथा 2012 से 'आई०ए०एस०एस०' की 'कन्सल्टेटिव कमेटी' के सम्मानित सदस्य हैं। उनकी पाँच मौलिक रचनाओं पर उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान की ओर से, एक रचना पर दिल्ली संस्कृत अकादमी की ओर से तथा एक रचना 'लसल्लतिका' पर साहित्य अकादेमी, दिल्ली की ओर से प्रतिष्ठित पुरस्कार प्राप्त हुए। उन्हें 2015 में प्रतिष्ठित राष्ट्रपति–सम्मान प्राप्त हुआ। उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान से उन्हें विशिष्ट पुरस्कार, महर्षि व्यास पुरस्कार, कालिदास पुरस्कार तथा सर्वोच्च 'विश्वभारती पुरस्कार' तथा उ0प्र0 हिन्दी संस्थान से 'सौहार्द सम्मान' प्राप्त हुए। डॉ० शर्मा के निर्देशन में अब तक 29 शोध–कार्य सम्पन्न हो चुके हैं। आपकी कृतियों पर दर्जनों डि0फिल्0 तथा पी–एच0डी0 अवार्ड हो चुकी हैं।

प्रो० शर्मा ने रचनात्मक एवं आलोचनात्मक क्षेत्र में 17 ग्रन्थों का लेखन किया है तथा प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में उनके 82 शोध निबन्ध प्रकाशित हो चुके हैं। उनके प्रमुख ग्रन्थ हैं–संस्कृत काव्यशास्त्रीय भावों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन, गीतकन्दलिका, त्रिपथगा, उत्कलिका, बालगीताली, आक्रन्दनम्, लसल्लतिका, नवेक्षिका, गुल्मिनी Glimpses of Sanskrit Poetics and Poetry आदि। वर्तमान समय में भी आप अत्यंत सक्रियता के साथ संस्कृत भाषा एवं साहित्य के प्रचार–प्रसार में संलग्न हैं। विभिन्न ऑनलाइन संगोष्ठियों तथा सेमिनार, व्याख्यान आदि में आपसे उद्बोधन द्वारा वर्ग तथा विद्यार्थी समूह निरंतर लाभान्वित हो रहा है।

3.2 एकांकी की कथावस्तु

नाट्य के आरम्भ में सूत्रधार यही कहता हुआ मंच पर प्रवेश करता है कि आज हम नवनिर्माण और नवविज्ञान के युग में पहुँच गए है। परन्तु नेपथ्य से आती एक आवाज द्वारा उसकी इस बात का खण्डन किया जाता है कि यह कैसी नई सभ्यता और कैसा नव विकास है जिसमें इस तरह लोभवश बहुएं जलाई जा रही हैं। इसी कथन से कथासूत्र आरम्भ हो जाता है।

प्रथम दृश्य में एक माध्यमिक विद्यालयीय अध्यापक गिरिनाथ अखबार हाथ में लिए सड़क पर चलता हुआ अपने मित्र अवनीश के साथ प्रवेश करता है। दोनों बात करते हैं कि आज भी नववधुओं के जलाये जाने के समाचार मिल रहे हैं। उन्हें गहरा दुःख है कि लोग जिस हाथ से वधू का पाणिग्रहण करते हैं उसी हाथ से उसकी हत्या कैसे कर देते हैं। इस सन्दर्भ में भुक्तभोगी गिरिनाथ अपनी बड़ी बेटी प्रमिला को उसकी ससुराल में दी जाने वालो प्रताड़नाओं का उल्लेख करता है। अपनी बड़ी बहिन को दुर्दशा को देखकर छोटी बहिन नन्दिता विद्रोहिणी हो गई है।

द्वितीय दृश्य गिरिनाथ के घर से आरम्भ होता है जहाँ उसकी पत्नी गौरी अपने पति गिरिनाथ को तुरन्त

सक्रिय होने को कहती है, क्योंकि उसकी बेटी नन्दिता को देखने वाले आने को हैं। गिरिनाथ खीझता है कि उसके वेतन का बहुत सारा भाग लड़की देखने वालों की सेवा में खर्च हो रहा है, और इसी मनोदशा में वह अपने बेटे प्रकाश को विद्यालय की फीस मांगने पर डाँट देता है। गौरी नन्दिता को अच्छी तरह तैयार होने को कहती है, पर नन्दिता बार– बार अपने रूप–प्रदर्शन से खिन्न हो चुकी है और इस स्थिति से बचने के लिए वह आजीवन कुंआरी रहने की बात कहती है। दूसरी स्थिति में वह एक विचारशील युवक विभास से अपने विवाह का प्रस्ताव रखती है। परन्तु पिता गिरिनाथ अपने से निम्नतर जाति का होना आदि लड़के की अनेक कमियों को बता कर इस प्रस्ताव को ठुकरा देता है।

तृतीय दृश्य में वर के माता–पिता अपने पुत्र के साथ गिरिनाथ की पुत्री नन्दिता को देखने आते हैं। जलपान के बाद प्रद्युम्न नन्दिता से उसकी विविध योग्यताओं के बारे में अनेक प्रश्न पूछता है। मिठाई और नमकीन के सेवन के बीच लड़के के माता–पिता दहेज में दिये जाने वाले सामान का पता लगाने चाहते हैं। लड़के की माँ सुवीरा टी०वी०, स्कूटर और फ्रिज जैसे सामानों को तो एक जूनियर इंजीनियर के लिए बहुत छोटी चीज बताती है। कन्या के माता–पिता धनाभाववश अपनी विवशता व्यक्त करते हैं और अपनी गुणवती सुशिक्षित कन्या को ही सबसे बड़ा धन बताते हुए भी तिलक में आठ हजार रुपये देने का प्रस्ताव रखते हैं। लड़के का पिता श्रीपाल मध्यस्थ व्यक्ति द्वारा दिये गए आश्वासन के अनुसार नकदी और सामान दहेज में न दिए जाने को बात जानकर बहुत रुष्ट होता है। लड़की वालों के बार–बार मनाने पर भी लड़के वाले सम्बन्ध ठुकरा कर चल देते हैं।

चतुर्थ दृश्य गिरिनाथ की बड़ी विवाहित पुत्री प्रमिला की ससुराल का है। प्रमिला की सास तारावती उससे घर के सभी कठोर काम–धन्धे करवा रही है। कपड़े धोने में साड़ी फट जाने पर वह उसे भला–बुरा कहती है और कुछ भी दहेज में न लाने पर कोसती है। ससुर साहब रमापति भी अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा में धक्का लगने से तथा दहेज के द्रव्य के अभाव में गृहनिर्माण तथा उद्योग–व्यापार में पैसा न लगा पाने के कारण दुःखी हैं। उधर प्रमिला के पति सर्वेश को भी नौकरी पाने में रिश्वत देने के लिए दस हजार रुपये की आवश्यकता है। इसी से परिश्रान्त हुआ वह प्रमिला से अपने पिता से पैसा मंगाने के लिए पत्र लिखने को कहता है। पिता की विवशता बताने पर बह प्रमिला को चांटा मार देता है। प्रमिला बुरी तरह विखरने लगती है।

पञ्चम दृश्य में छात्रावास के एक कमरे में बैठे विभास और अखिल बात कर रहे हैं। सन्ताप और जलने का प्रसङ्ग आने पर अखिल के पूछने पर विभास बताता है कि एम० ए० कक्षा में पढ़ते समय मुझे कुछ विशिष्ट गुणों के कारण नन्दिता नाम की लड़की से प्रेम हो गया था, उसकी ओर से भी कोमल भावना व्यक्त हो गई थी, परन्तु कट्टर बाह्मणकुल को दुहाई देने वाले उसके माता–पिता ने मेरे ठाकुर जाति का होने के कारण इस सम्बन्ध की अनुमति नहीं दी। और फिर मैं पितृहीन, वृत्तिहीन और धनहीन भी हूँ। अखिल विभास को समाज के व्यावहारिक कठोर यथार्थ को समझाता है। विभास एक बार टूटता है और फिर नन्दिता के माँ–बाप को समझाने का साहस जुटा कर आगे बढ़ता है ।

षष्ठ दृश्य में घबड़ाया हुमा अवनीश (गिरिनाथ का मित्र) प्रवेश करता है। वह सूचित करता है कि गिरिनाथ की पुत्री प्रमिला अपनो ससुराल में खाना बनाती हुई स्टोव की आग से जल मरी। गौरी और नन्दिता

दहाड़ कर रोने लगती हैं। सबको स्पष्ट हो गया है कि प्रमिला जली नहीं है, जानबूझ कर जलाई गई है। गिरिनाथ और अवनीश टैक्सी से प्रमिला के ससुराल पहुँचते हैं, जहाँ सब लोग रोने और शोकाकुल होने का नाटक करते हैं। गिरिनाथ ससुराल वालों पर प्रमिला को मार डालने का आरोप लगाता है और पुलिस में रपट लिखाने वह समीपवर्ती थाने की ओर चल देता है।

सप्तम दृश्य में गिरिनाथ और अवनीश थाने में जाते हैं। वहीं बैठा पुलिस का व्यक्ति उनकी बात अनसुनी कर थानेदार को बुला लेता है। थानेदार अपराधियों से रिश्वत खा चुका है। अतः वह इस मामले को चिकित्सक का हवाला देकर सामान्य दुर्घटना का रंग देता है। गिरिनाथ अपनी पुत्री की प्रताड़ना के कई प्रमाण देता है और दहेज–विरोधी कानून के अनुसार अपराधियों को दण्डित करने की प्रार्थना करता है। परन्तु थानेदार उन्हें धमकी देकर थाने से बाहर निकाल देता है। इस अवस्था में एक पत्रकार, एक नेता तथा एक युवा संघ का मन्त्री में तीन लोग अपनी–अपनी चाल से गिरिनाथ के सामने सहानुभूति का पक्ष रखते हैं। परन्तु गिरिनाथ रोकर केवल अपनी पुत्री मांगता है। इसी बीच एक घबड़ाया हुआ ग्रामीण युवक आकर सूचना देता है कि रमापति का बेटा शराब का धन्धा करने वाले एक ब्यापारी की बेटी से तुरन्त दूसरा विवाह रचाने जा रहा है। इस पर गिरिनाथ बुरी तरह बिफर कर चिल्लाने लगता है कि इसी तरह कन्यादान के बाद वधुओं का दहन होता रहेगा।

3.3 अभिनेयता

प्रो. शर्मा का संस्कृत–नाट्य–साहित्य के क्षेत्र में विशेष योगदान रहा है। उनके नाट्य–लेखन में हमें तीन प्रमुख विशेषताएँ दिखलाई पड़ती हैं– प्रथम, उनके नाटक लघु आकार वाले होते हैं। द्वितीय, वे आधुनिक विसंगतियों एवं सामाजिक समस्याओं पर व्यावहारिक भाषा का प्रयोग करते हैं। 'त्रिपथगा' एवं 'आक्रन्दनम्' कवि की ऐसी ही नाट्य–कृतियाँ हैं!

प्रो. शर्मा का प्रथम प्रकाशित नाटक 'त्रिपथगा' है, जिसमें 'साक्षात्कारीयम्', 'वधूदहनम्' एवं 'द्वेषदंशनम्' नामक तीन रूपक हैं। इन तीनों रूपकों में सात–सात दृश्य उपस्थित किये गये हैं। प्रो. शर्मा की अन्य नाट्य कृति 'आक्रन्दनम्' है, जो चार ध्वनि–रूपकों का संग्रह है। इस प्रकार प्रो. हरिदत्त शर्मा द्वारा सात् नाटकों का प्रणयन किया गया है।

'त्रिपथगा' में संकलित उक्त तीनों नाटकों को सामाजिक व्यंगय या अधिक्षेप कहा जा सकता है। इन तीनों लघुनाटकों के माध्यम से नाट्यकार ने आधुनिक समाज में व्याप्त विभिन्न प्रकार के भ्रष्टाचार एवं दहेज आदि का पर्दाफाश किया है, जो रचनाकार का समाज सुधार की दृष्टि से साहसिक कार्य है।

3.4 एकांकी का अनुवाद

सूत्रधारः –

(प्रविश्य)

जयति भुवनगीता रामभार्या हि सीता
जयति शुभचरित्रं लोकमध्ये पवित्रम्।

निजगुण–गरिमाणं प्राक्तनं धारयन्ती
जयति च सुरवन्द्या संस्कृतिर्भारतीया।।

अहो! प्राप्ताः स्मो वयं नवयुग, नवं वैज्ञानिकयुगं, नवं यान्त्रिकयुगम्। सर्वत्र नवं निर्माणं, विचित्रं संविधानं, प्रभूतं चाकचिक्यं दृश्यते। दूरदर्शनयुगमिदम, कम्प्यूटर–युगमिदम्। किं किं न कृतं नवमानवेन, किं किं न कृतं नवभारतेन।

(नेपथ्ये)

आम्! कृतं नवभारतेन। आधुनिकसभ्यतासमुन्नतेन भारतेन बहु कृतम्। अद्य भारते प्रतिदिनं नैकाः वध्वः ज्वाल्यन्ते, मार्यन्ते वा। विवाहस्य पावनी संस्था यौतुक– रक्षसा विहन्यते।

लोभेन हन्यते त्यागो, लुब्धैर्धर्मोऽद्य हन्यते।

लुब्धैर्विहन्यते नित्यं, वधूर्मृगवधूरिव।।

(श्रवणमभिनीय)

अये! कोऽयं विचित्रस्वरवान्? येन मे कथनं मध्य एव प्रत्याख्यातम्। आम्, ज्ञायते। अयं तु पञ्चाशत्वर्ष–देशीयो माध्यमिकविद्यालयीयो व्याख्याता गिरिनाथः, यो गृहीतसमाचारपत्रः स्वमित्रेण सह इत एवागच्छति।

बाढम्! अस्यापि विचारान् शृणोमि। प्रत्यक्षानुभववानयम्। न घर्मे पलिता अस्य केशाः।

सूत्रधार

(प्रवेश करके)

पूरे विश्व में गाई जाने वाली राम की पत्नी सीता की जय हो। संसार में पवित्र उनके शुभ चरित्र की जय हो। अपने प्राचीन गुणों की गरिमा को धारण करती हुई देवताओं द्वारा वन्दनीय भारतीय संस्कृति की जय हो।

अहो! हम सब नवयुग में पहुंच गए हैं, नए वैज्ञानिक युग में, नए यांत्रिक युग में पहुंच गए हैं। सभी जगह नए निर्माण, विचित्र संविधान, और बहुत अधिक चकाचौंध दिखाई देती है। यह दूरदर्शन का युग है, यह कंप्यूटर का युग है। नए मानव के द्वारा क्या–क्या नहीं किया गया, नए भारत के द्वारा क्या–क्या नहीं किया गया।

(नेपथ्य से)

हाँ! नवभारत के द्वारा सब किया गया। आधुनिक सभ्यता से युक्त भारत के द्वारा बहुत किया गया। आज भारत में प्रतिदिन एक नहीं, बहुत सी वधुएँ जलाई जाती हैं, और मारी जाती हैं। विवाह की पवित्र संस्था दहेज रूपी राक्षस से नष्ट की जा रही है।

आज लालच से त्याग मारा जा रहा है, लालचियों से धर्म मारा जा रहा है और लालचियों द्वारा रोज मृगी के समान वधू को मारा जा रहा है।

(सुनने का अभिनय करते हुए)

अरे! यह विचित्र स्वर वाला कौन है? जिसने मेरे कथन को बीच में ही रोक दिया। हाँ, समझ गया। यह पचासवर्षीय माध्यमिक विद्यालय का व्याख्याता गिरिनाथ है, जो हाथ में समाचार पत्र लिए हुए अपने मित्र के साथ इधर ही आ रहे हैं।

बहुत अच्छी बात है चलो उनके भी विचारों को सुनता हूँ। यह बहुत ही अनुभवयुक्त हैं। केवल धूप में ही उनके बाल नहीं पके हैं।

प्रथमं दृश्यम्

नगरवर्ती राजमार्गः

(ततः प्रविशति मित्रेण सह समाचारपत्रहस्तो गिरिनाथः)

गिरिनाथः— पुनरद्यापि नववधूरेका अग्नये समर्पिता नृशंसैः राक्षसैः कैश्चित्!

अवनीशः— एवम्, प्रतिदिनमस्माकं देशे न जाने कति वध्वः दाह्यन्ते मार्यन्ते वा। किं स एवायं देशो 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते' इत्युक्तिः चरितार्था आसीत्?

गिरिनाथः— भारतीयसंस्कृतेः दृढा आधारभित्तिः विवाहसंस्था आसीत, विवाहसंस्थाया दृढा आधारशिला च दाम्पत्यप्रीतिः।

अबनीशः— अस्यां प्रीतौ गरलं मिलितम्। सर्वे विषपानमत्ता इव प्रतीयन्ते। नाद्य प्रीतिः प्रवर्तते, न च काऽपि नीतिः।

गिरिनाथः— किं ज्ञायते यद् अस्मिन्मित्रस्य प्रेमदत्तस्य अनुजो विश्व–विद्यालयीयो व्याख्याता विगतमास एव जर्मनीदेशस्य सांस्कृतिकयात्रातः प्रतिनिवृत्तः। स बहुशः प्रतिपादयति यद् योरोपे नास्ति एतादृशी विवाहरीतिः, न च कुटुम्ब–स्वरूपमेतादृशम्।

अवनीशः— जानेऽहम्, अन्यैः सह तस्य विवादः सञ्जातः। अन्यैः वधूत्यागप्रथायाः भर्त्सनं कृतम्। स्वीकृत्यापि तेनोक्तं वधूवधात्तु वधूपरिवर्तनं श्रेयः।

गिरिनाथः— मित्रवर! ये खलु युवानो येन पाणिना वध्वाः पाणिग्रहणं कुर्वन्ति, तेनैव पाणिना कथं तस्याः हत्यां कुर्वन्ति?

अवनीशः— सर्वं सम्भवति। धनलिप्सा मनुष्यं किं किं मलिनं कर्म कर्तुं न प्रेरयति?

पहला दृश्य

शहरी राजमार्ग

(तदनन्तर हाथ में अखबार लिए एक मित्र के साथ गिरिनाथ का प्रवेश)

गिरिनाथ— फिर से आज एक नई नवेली दुल्हन कुछ निर्दयी राक्षसों के द्वारा अग्नि में जलायी गयी।

अवनीश – ऐसा ही है, प्रतिदिन हमारे देश में न जाने कितनी वधुएं जलायी या मारी जाती हैं। क्या यह वही देश है 'जहाँ नारियों की पूजा होती है' ऐसी कहावत चरितार्थ थी?

गिरिनाथ – भारतीय संस्कृति की मजबूत आधारशिला विवाह संस्था थी और विवाह संस्था की मजबूत आधारशिला दाम्पत्य प्रेम है।

अवनीश – इसके प्रेम में जहर मिला दिया गया है। सभी विषपान में धुत से प्रतीत हो रहे हैं। आज न तो प्रेम रह गया है और न ही कोई नीति।

गिरिनाथ – जानते हो मित्र प्रेमदत्त का छोटा भाई विश्वविद्यालय का व्याख्याता पिछले महीने ही जर्मनी देश के सांस्कृतिक यात्रा से लौटा था। वह बहुत बार बताता था कि यूरोप में ऐसी विवाह प्रथा नहीं है और न ही इस प्रकार परिवार का स्वरूप है।

अवनीश– मैं जानता हूँ, किसी के साथ उसका विवाद हुआ था। जिसमें दूसरों ने वधूत्याग प्रथा की निन्दा भी की। उसने स्वीकार करते हुए कहा वधू के वध से वधू का परिवर्तन करना श्रेष्ठ है।

गिरिनाथ – मित्रश्रेष्ठ! निश्चय ही जो युवक जिन हाथों से वधू का पाणिग्रहण करते हैं, उसी हाथ से उसकी हत्या किस प्रकार कर देते हैं।

अवनीश– सब कुछ संभव है। धन का लालच मनुष्य को क्या–क्या बुरा कर्म करने को प्रेरित नहीं करती?

गरिनाथः – अहं तु भुक्तभोगी। यस्माद् दिनादारभ्य प्रमिलाया विवाहः कृतः, तस्माद् अद्यावधि न सा कदाचित् शान्तिमाप्नोति। अनुदिनं कोऽपि न कोऽपि याच्ञाप्रस्तावः समायाति। यद् दत्तं तस्य गणना न क्रियते। यन्न दत्तं तदेव बहुशो बहुधा गण्यते, गणयित्वा दर्श्यते च।

अवनीशः – एवम्, परं द्वितीयाऽपि ते पुत्री विवाहयोग्या जाता। तस्याः कृतेऽपि धनसञ्चयः करणीयः।

गिरिनाथः – द्वितीया मे पुत्री नन्दिता स्वकीयाया अग्रजायाः दुर्दशां निरीक्ष्य विद्रोहिणी जाता। कदाचिन् न्यायालयमाध्यमेनैव विवाहं करिष्यामि, न वा कदाचिद् विवाहं करिष्यामि इत्यादिघोषणां करोति सा।

अवनीशः – किं करिष्यति वराकी सा?

गिरिनाथः – तस्याः जननी अस्मिन्नेव चिन्ताग्नौ सततं ज्वलति।

अवनीशः – प्रसङ्गे चलति एवं भातृजाया इतो दृष्टिपथम् आयाता। मन्ये भवतं प्रतीक्षमाणा द्वारदेशे तिष्ठति। तद् गच्छतु भवान् स्वगृहम्। अहमपि अनेन प्रथा स्वगृहं गच्छामि।

गिरिनाथः – गच्छतु भवान् पुनर्दर्शनाय। मध्याह्ने विद्यालये मिलिष्यावः।

(निष्क्रान्तौ गिरिनाथावनीशौ)

गिरिनाथ – मैं तो भुक्तभोगी हूँ। जिस दिन से प्रमिला का विवाह किया, तब से आज तक उसे कोई शान्ति नहीं मिली। प्रत्येक दिन कोई न कोई मांग प्रस्ताव प्राप्त होता रहता है। जो दिया गया उसकी गणना नहीं की जाती है। जो नहीं दिया उसे ही बार–बार कहते रहते हैं और दिखाते रहते हैं।

अवनीश – ऐसा है, किन्तु आपकी दूसरी पुत्री भी विवाह के योग्य हो गयी है। उसके लिए भी धन इकट्ठा करना चाहिए।

गिरिनाथ – मेरी दूसरी पुत्री नन्दिता अपनी बड़ी बहन की दुर्दशा देखकर विद्रोही हो गयी है। न्यायालय के माध्यम से ही (कोर्ट मैरिज) विवाह करूंगी नहीं, तो कभी विवाह नहीं करूंगी ऐसी घोषणा वह करती है।

अवनीश – वह बेचारी क्या करेगी?

गिरिनाथ – उसकी माता इसी चिन्ता की अग्नि में निरन्तर जलती रहती है।

अवनीश – यह प्रसंग चल रहा था तभी सामने से भाभी दिखाई पड़ी। मुझे लगता है वह आपकी प्रतीक्षा में दरवाजे पर खड़ी हैं। अतः आप अपने घर जाओ। मैं भी इस रास्ते से अपने घर जाता हूं।

गिरिनाथ – चलो फिर मिलेंगे। दोपहर में विद्यालय से मिलेंगे।

(गिरिनाथ व अवनीश दोनों निकलते हैं)

द्वितीयं दृश्यम्

गृहस्थस्य गिरिनाथस्य गृहम्

(ततः प्रविशति गृहस्वामिनी गौरी)

गौरी – चिरात् प्रतिनिवृत्तो भवान् प्रातर्भ्रमणात्। मया देवपूजा अपि सम्पादिता। किं न ज्ञायते यदद्य नन्दितां द्रष्टुं सम्बन्धचिकीर्षवः जनाः केचिदागच्छन्ति?

गिरिनाथः – ज्ञायते, ज्ञायते। कथं विस्मरिष्यामि? परं नायं विशिष्टोऽवसर। इयं तु सम्प्रति अस्माकं दिनचर्या एव जाता।

गौरी – अस्माकं तु सामान्या दिनचर्या। परन्तु ये आगच्छन्ति तेषां कृते तु विशिष्ट इवायम् अवसरः करणीयः।

गिरिनाथः– विगतमासे मेरठनगरात् समायाताः पञ्च पुरुषाः। तेषां स्वागतार्थं किं किं न कृतम्? मिष्टपक्वान्नसेवायामेव त्रिशतानि रुप्यकाणि व्ययीभूतानि। वेतनस्य भूयान् भागः तेषां सेवायां विनष्टः।

प्रकाशः– (प्रविश्य) पितः! पितः! मम विद्यालयीयो द्वैमासिकः शुल्को देयः। अतिरिक्तश्च परिधानशुल्कः प्रदेयः।

गिरिनाथः– चल। दूरमपसर। प्रातरेव आगत्य टरटरं करोषि मम कर्णे।

प्रकाशः– (रुदन्) मम...मम...कक्षाध्यापकः दण्डयिष्यति माम्, यदि विना शुल्कं गमिष्यामि।...नाहं विद्यालयं गमिष्यामि।

(इति निष्क्रान्तः)

द्वितीय दृश्यम्

गृहस्थ गिरिनाथ का घर

(तभी गृहिणी गौरी प्रवेश करती है)

गौरी– आप प्रातः भ्रमणकर बहुत देर से लौटे मेरी पूजा भी हो गयी। क्या आप नहीं जानते है कि आज नन्दिता को देखने रिश्ता करने वाले कुछ लोग आ रहे है।

गिरिनाथ– जानता हूँ, जानता हूँ। कैसे भूल जाऊँगा मैं, किन्तु यह कोई विशेष अवसर नहीं है। वह तो हमारे लिए सामान्य दिनचर्या है।

गौरी– हमारे लिए सामान्य दिनचर्या है। परन्तु जो आ रहे है, उनके लिए यह विशेष अवसर करना चाहिए।

गिरिनाथ– पिछले माह मेरठ नगर से पाँच लोग आये थे। उनके स्वागत के लिए क्या–क्या नहीं किया। मिठाई, पकवान आदि सेवा में तीन सौ रुपये व्यय हो गये। वेतन का अधिक भाग उनके सेवा में खर्च हो गया।

प्रकाश– (प्रवेश करके) पिता! पिता जी! मेरे विद्यालय का दो माह का शुल्क देना है। इसके अतिरिक्त परिधान शुल्क भी देना है।

गिरिनाथ– चल। दूर हट। सुबह ही आकर मेरे कान में टरटर करने लगा।

प्रकाश– (रोकर) मेरे..... मेरे..... कक्षाध्यापक मुझे दण्ड देंगे, यदि बिना शुल्क के जाऊँगा। मैं विद्यालय नहीं जाऊँगा।

(निकल जाता है)

गौरी– अकारणं बालकं मे प्रताडयति भवान्। अन्यस्मै करणीयं कोपं पुत्रके प्रक्षिपति।

गिरिनाथः– सत्यम्, कदाचित् क्षोभाभिभूतः सन्, अकरणीयं करोमि पश्चात्तापोऽपि भवति। व्यर्थं मया वराकस्य बालकस्य मनः पीडितम्।

गौरी– साम्प्रतम् आपणं गत्वा फल–मिष्टान्न–लावणिक वस्तूनां प्रबन्धं करोतु भवान्। अहमपि गृहे स्वच्छताव्यवस्थां करोमि, अन्यत् सर्वं सज्जं न वा इति पश्यामि।

गरिनाथः– आम्, सर्वं क्रीत्वा शीघ्रमागच्छामि। (इति प्रस्थितः)

गौरी– नन्दिते! कि स्नातं त्वया? लेपन–प्रसाधनमपि किञ्चिद् विधेयम्। सज्जा भवतु शीघ्रमेव! तेषाम् आगमनवेला सन्निकटा एव।

नन्दिताः– केषाम्? केऽद्य आयान्ति व्यापारिणः मम पण्यकरणाय?

गौरी– नैवं वद। अस्मिन् विवाहप्रस्तावे मध्यस्थो मदीयो मातुलः। यदि भवति भगवतः इच्छा, तदा अद्य कार्यमिदं सिद्धिमेष्यति।

नन्दिताः– बहुशो मया स्वकीयं स्वरूपदर्शनं कारितम्। बहुधा मया आत्मविपणिः सज्जीकृता। अतोऽधिकाम् अवमाननां न सहिष्ये। अद्य आगरातः केचिद् आयान्ति, श्वो दिल्लीतः, परश्वः कर्णपुरात्। नित्यम् आत्मनो दर्शनं, परैश्च अस्वीकरणम्। इदमेव चक्रं चालितम्।

गौरी– आप मेरे बेटे को बिना कारण डाटते हो। अन्य किसी का क्रोध पुत्र पर निकालते हो।

गिरिनाथ– सच, कभी–कभी गुस्से में आकर न करने योग्य कार्य कर बैठता हूँ, फिर पश्चात्ताप भी करता हूँ। व्यर्थ में मैंने निरीह बालक के मन को पीड़ित किया।

गौरी– अब बाजार जाकर फल, मिठाई, नमकीन आदि वस्तुओं का आप प्रबन्ध करो। मैं भी घर में सफाई करती हूँ, और देखती हूँ कि सब तैयार है कि नहीं।

गिरिनाथ– हाँ, सब खरीदकर जल्द आ रहा हूँ (चला जाता है)

गौरी– नन्दिता! क्या तुमने स्नान किया? कुछ सौन्दर्य–लेपन सिंगार भी किया? जल्द तैयार हो जाओ, उनके आने का समय हो गया है।

नन्दिता– किसका? आज कौन से व्यापारी मुझे खरीदने आ रहे हैं?

गौरी– ऐसा मत बोलो। इस विवाह के लिए मेरे मामा मध्यस्थता किये हुए हैं। यदि भगवान् की इच्छा होगी, तब आज यह कार्य सिद्ध होगा।

नन्दिता– बहुत बार मेरे द्वारा अपने स्वरूप का प्रदर्शन किया गया, कई बार मैंने अपनी दुकान सजाई। अब अधिक अपमान नहीं सहन करूँगी। आज आगरा से कोई आता है, कल दिल्ली से, परसों कानपुर से। प्रतिदिन अपना दिखावा करना और दूसरों के द्वारा अस्वीकार होना। यही चक्र चलता रहेगा।

गौरी– कन्याया विवाहः कठिनतमो यागः। सः कठिनतयैव यथा–कथञ्चित् सम्पादनीय एव। कन्याया विवाहाकरणे पित्रोः नरकपतनं तु निश्चितमेव।

नन्दिताः – मातः! किं दशमशताब्द्या वार्ताम् करोषि। कः नरकः? कस्तत्र पतिष्यतिं? अहं तु नारकीयाद् बन्धनाद् अस्माद् आत्मानं संरक्ष्य स्वतन्त्रं जीवनं यापयिष्यामि।

गौरी– कि त्वम् आजीवनं कुमारी भविष्यसि?

नन्दिताः – आम्, कुमारी....अविवाहिता! विवाहितया मम भगिन्यया प्रमिलया किं लब्धम्? अनुदिनं यातना, कदर्थना, अवमानना? किमधिकम्।

गौरी– एकाकिन्या कन्यया कथं सम्पूर्णं जीवनं यापयितुं शक्यते?

नन्दिताः – यदि न शक्यते, तदा कथं न मम कथनं स्वीक्रियते? विभासे को दोषः? विभासः प्रगतिशीलः विचारवान् युवा। आचार–विचारेषु समौ आवाम्। आवयोः जीवने नूनमेव सुसामञ्जस्यं भविता।

गौरी– कन्या का विवाह कठिन यज्ञ है। वह कठिनता से ही किसी तरह सम्पादित होता है। कन्या का विवाह न करने से माता–पिता का नरक जाना निश्चित ही है।

नन्दिता– माता! क्या दसवीं सदी की बात करती हो। कैसा नरक? कौन वहाँ गिरेगा? मैं तो नारकीय बंधन से अपनी रक्षा करते हुए स्वतंत्र जीवन यापन करूँगी।

गौरी– क्या तुम आजीवन कुवाँरी रहोगी?

नन्दिता– हाँ, कुमारी.....अविवाहिता! विवाहिता मेरी बहन प्रमिला को क्या मिला? प्रतिदिन यातना, दुरापीडन, अवमानना? क्या अधिक।

गौरी– एक कन्या कैसे सम्पूर्ण जीवन अकेले व्यतीत कर सकती है?

नन्दिता– यदि समर्थ नहीं है, तो मेरी बात स्वीकार क्यूं नहीं करती हैं? विभास में क्या दोष है? विभास प्रगतिशील विचारवान् युवक है। आचार–विचार में हम दोनों एक समान है। हम दोनों के जीवन में निश्चय ही अच्छा सामंजस्य होगा।

गिरिनाथः – (प्रविश्य) पुनरस्त्वया विभासस्य नाम चर्चितम्। मयोक्तं बहुशो यत् स नास्मज्जातीयः। उच्चवंशीया ब्राह्मणा वयम्। क्षत्रियकुलोत्पन्नः सः। जात्या निम्नतराय वराय कन्यां प्रयच्छन् कथमहं समाजे स्वमुखं दर्शयिष्यामि।

नन्दिताः – भगिन्याः सम्बन्धविषये किं कथयति, किं करोति भवतां समाजः?

गिरिनाथः– पुनर्विभासः पितृविहीनः, निर्धनाया विधवायाः पुत्रः। कथञ्चिद् भरणपोषणं भवति तयोः। इतोऽप्यधिकम्, विभासो व्यवसायविहीनः! न कामपि सेवावृत्तिं लब्धवान् सः। न जातिः, न जीविका, न कुलं, न धनम्। कथं तस्य हस्ते समर्पयानि त्वाम्?

नन्दिताः – भगिनीमिव निक्षिपत मामपि भाष्ट्रे। सर्वं सेत्स्यति। (इति सक्रोधं निर्गता, निष्क्रान्ताः सर्वे)

गिरिनाथ– (प्रवेश करके) तुमने फिर विभास का नाम लिया। मेरे द्वारा बार बार कहा गया है, कि वह हमारी जाति का नहीं है। हम उच्च वंश के ब्राह्मण हैं। वह क्षत्रिय वंश में पैदा हुआ है। निम्न जाति के वर को कन्या देकर समाज में अपना मुंह कैसे दिखायेंगे।

नन्दिता– बहन के सम्बन्ध के विषय में आपका समाज क्या कह रहा हैं, क्या कर रहा है?

गिरिनाथ– फिर विभास पितृविहीन, निर्धन विधवा का पुत्र है। किसी प्रकार उन दोनों का भरण–पोषण होता है। इससे भी अधिक विभास व्यवसायरहित है। वह न ही कोई नौकरी पा सका है। न उसकी जाति है, न नौकरी, न वंश, न धन। कैसे उसके हाथ में तुम्हें दे दूँ?

नन्दिता– बहन की तरह मुझको भी भाड़ में फेंक दो। सब कुछ ठीक हो जायेगा। (ऐसा कहकर गुस्से से निकल जाती है, सभी जाते हैं।)

तृतीयं दृश्यम्

गिरिनाथस्य गृहपरिसरः

(ततः प्रविशन्ति वरपक्षिणः स्त्रीपुरुषाः)

श्रीपालः— (कारयानाद् अवतरन्) नामपट्टेन प्रतीयते यदिदमेव गिरिनाथमहोदयस्य गृहम्।

गिरिनाथः— (गृहाद् बहिरागच्छन्) आगच्छन्तु, आगच्छन्तु श्रीमन्तः। स्वागतम् अत्रभवताम्। इह आस्यताम्।

गौरी— महद् भाग्यमस्माकं यद्भवतां चरणरजः अस्मद्गृहे निपतितम्। धन्या वयं जाताः।

श्रीपालः— भवन्मातुलेन अस्य सम्बन्धस्य प्रस्तावः प्रस्तुतीकृतः। भवतां प्रशंसाऽपि तस्मात् श्रुता।

गिरिनाथः— अस्माकं प्रशंसाकारिणो भवन्तः एव महान्तः। (गौरीं प्रति) किमपि चायादिकमपि आनेष्यसि? अथवा केवलं वार्तामेव करिष्यसि।

गौरी— सर्वमानयामि (इति निष्क्रामति, सज्जीकृत्य विविधान् पदार्थान् आनयति, पुनर्निष्क्रामति)

गिरिनाथः— प्रथमं भुक्त्वा किमपि शीतलं जलं गृह्णन्तु भवन्तः। (ततः प्रविशति मात्रा आनीयमाना गृहीतफलपात्रा नन्दिता)

तीसरा दृश्य

गिरिनाथ का घर

(तदनन्तर दूल्हे पक्ष के स्त्री और पुरुषों का प्रवेश)

श्रीपाल— (कार से उतरे हुए) नाम पट्टिका से मालूम पड़ता है कि यह ही गिरिनाथ महोदय का घर है।

गिरिनाथ— (घर से बाहर आते हुए) आइये, आइये, श्रीमान्। आपका स्वागत है। यहां बैठिए।

गौरी— हमारा परम सौभाग्य है कि आपके चरणों की धूल हमारे घर पड़ी। हम सब धन्य हो गये।

श्रीपाल— आपके मामा के द्वारा इस सम्बन्ध का प्रस्ताव रखा गया है। आपकी प्रशंसा भी उन्हीं से सुनी है।

गिरिनाथ— हमारे प्रशंसक आप ही महान् हैं। (गौरी के प्रति) चाय इत्यादि भी लाओगी? या केवल बातें ही करती रहोगी।

गौरी— सब कुछ लाती हूँ (निकल जाती है, अनेक पदार्थों को सजाकर लाती है, फिर निकल जाती है)।

गिरिनाथ— पहले कुछ खाकर शीतल जल आप लोग ग्रहण कीजिए। (माता के द्वारा लाई जाती नई फलों से भरे पात्र लिये हुए नन्दिता का प्रवेश)

सुधीराः— किम् इयमेव भवतोः सुता?

गिरिनाथः— एवम्, इयमेव मे सुता नन्दिता। वत्से। इमे श्रीमन्तः श्रीपालमिश्रमहोदयाः, इयं च श्रीमती मिश्रा। अयं च अत्र भवतोः सुपुत्रः प्रद्युम्नः। (प्रद्युम्नः नन्दितां निपुणं निर्वर्णयति)

सुबीराः— उभावेव अर्थिनौ युवां परस्परमवलोकयतम्, आलपतञ्च। न भवामो वयं बाधकाः। (सर्वे हसन्ति)

प्रद्युम्नः – कियती शिक्षा अधिगता भवत्या?

नन्दिताः – एम०ए० परीक्षा उत्तीर्णा इतिहासविषये, पश्चाद एम०एड०– प्रशिक्षणमपि प्राप्तम्।

प्रद्युम्नः – का तत्र श्रेणी?

नन्दिताः– सर्वा एव परीक्षाः प्रथम–श्रेण्याम् उत्तीर्णा मया। एम०ए० परीक्षायां द्वितीयं स्थानमपि लब्धम्।

सुवीरा– क्या ये ही आपकी पुत्री हैं?

गिरिनाथ– हाँ, यह ही मेरी पुत्री नन्दिता है। पुत्री, ये श्रीमान् श्रीपाल मिश्र महोदय और यह श्रीमती मिश्रा है, और यह आपके पुत्र प्रद्युम्न हैं।

सुवीरा– तुम दोनों एक दुसरे को देख लो और बातचीत कर लो। हम सब बाधक नहीं बनते हैं (सभी हंसते है)।

प्रद्युम्न– आपने कितनी शिक्षा प्राप्त की हैं?

नन्दिता– मैंने इहितास विषय से एम0ए0 की परीक्षा उत्तीर्ण की उसके बाद एम0एड0 का प्रशिक्षण भी किया।

प्रद्युम्न– कौन सी श्रेणी में?

नन्दिता– मेरे द्वारा सारी ही परीक्षायें प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की गयीं। एम0ए0 की परीक्षा में द्वितीय स्थान भी प्राप्त किया।

प्रद्युम्नः– स्त्रीणां तु इयती शिक्षा पर्याप्ता। अस्ति कश्चिदन्योऽपि भवत्या रुचिकरो विषयः?

नन्दिता– सङ्गीते मे विशिष्टा रुचिः। तत्र प्रयाग–सङ्गीत–समितेः प्रभाकरपरीक्षाऽपि उत्तीर्णा। चित्रकलायामपि रञ्जनकर्म किमपि क्रियते मया।

प्रद्युम्नः– किं लक्ष्यमस्ति भाविजीवनस्य?

नन्दिता– सेवावृतिं तु निश्चितरूपेण अङ्गीकरिष्यामि। यदि लभ्यते, विश्वविद्यालये महाविद्यालये वा शिक्षणसेवां कर्तुमुद्यताऽस्मि। आगामिनि वर्षे प्रतियोगितापरीक्षायामपि सम्मिलितुम् इच्छा।

प्रद्युम्नः– अस्माकं गृहे स्त्रीणां सेवाकरणं नोचितं मन्यते, परन्तु द्विगुणितं धनोपार्जनं कर्तुं सम्प्रति स्त्रीभिरपि सेवावृत्तिर्वरणीया इति मे मतिः।

श्रीपालः– (मोदकं खादन्) किं भवतां स्वकीयमेव भवनमिदम्?

गिरिनाथः– आम्! स्वकीयम्। भविष्यनिधेः ऋणं गृहीत्वा निर्मापितमिदम्। गृहस्थाश्रमस्य यजने द्वे एव–स्वगृहनिर्माणं, पुत्र्या विवाहश्च।

प्रद्युम्न– स्त्रियों के लिए इतनी शिक्षा ही पर्याप्त है। क्या कोई अन्य विषय है जिसमें आपकी रुचि है?

नन्दिता— संगीत में मेरी विशेष रुचि है। उसमें प्रयाग संगीत समिति की प्रभाकर परीक्षा भी उत्तीर्ण की है। मेरे द्वारा चित्रकला में रंग भरने का कुछ काम भी किया जाता है।

प्रद्युम्न— भावी जीवन का क्या लक्ष्य है?

नन्दिता— निश्चित रूप से नौकरी करुंगी। यदि संभव हुआ, विश्वविद्यालय अथवा महाविद्यालय में शिक्षण सेवा प्रदान करने के लिए तैयार हूँ। आने वाले सालों में प्रतियोगी परीक्षाओं में भी सम्मिलित होने की इच्छा है।

प्रद्युम्न— हमारे घर में महिलाओं का नौकरी करना उचित नहीं माना जाता है, लेकिन मेरा मानना है कि इस समय धनोपार्जन दो गुना करने के लिए स्त्रियों को भी नौकरी करनी चाहिए।

श्रीपाल— (लड्डू खाते हुए) क्या यह आपका अपना घर है?

गिरिनाथ— हाँ! मेरा ही है (अपना)। इसको फ्यूचर फण्ड से ऋण लेकर बनाया गया था। गृहस्थ आश्रम के दो ही यज्ञ हैं— अपना घर—निर्माण और पुत्री का विवाह।

श्रीपालः— प्रथमं तु पूर्वं सम्पन्नम्। साम्प्रतं द्वितीयं महता समारोहेण सम्पाद्यताम्।

गिरिनाथः— मत्कृते तु त्रीणि यजनानि जातानि। वर्षद्वयपूर्वमेव प्रथम पुत्र्याः विवाहः संरचितः द्वितीययज्ञरूपः। द्वितीयायाः विवाहस्तु तृतीयो महायज्ञः।

गौरी— वार्तालापेन सहैव मिष्टान्नमपि गृह्णन्तु भवन्तः। लावण्यमयपदार्थोऽयं सचटनीकः नन्दितयैव निर्मितः। गृहविज्ञानेऽपि प्राप्तप्रशिक्षणा अतिकुशलेयम्।

सुवीराः — वस्तुतः स्वादिष्ठो लवणपदार्थः। (इतस्ततः अवलोकयन्ती) भवतां कक्षेऽस्मिन् दूरदर्शनयन्त्रं न दृश्यते।

गौरी— (दुःखिता सती) दूरदर्शनं क्रेतुं तु न समर्था जाता वयम्, अल्पेन वेतनेन किं भवति?

सुवीराः— मध्यस्थेन श्यामलालेन तु कथितं यत् कन्यायाः पिता अस्मिन्नेव वर्षे प्रोन्नतिं प्राप्तवान्। पुनर्व्यक्तिगतरूपेण शिक्षणकरणात् तस्यातिरिक्त आयोऽपि भूयान्।

श्रीपाल— पहला तो पूर्व में ही सम्पन्न हो चुका है। अब दूसरा भी धूमधाम से सम्पन्न करना है।

गिरिनाथ— मेरे लिए तो तीन यज्ञ हो गए हैं। दो वर्ष पहले ही द्वितीय यज्ञरूप प्रथम पुत्री का विवाह हो चुका है। तीसरी महायज्ञ दूसरी लड़की का विवाह है।

गौरी— बातचीत के साथ—साथ मिठाई भी आप लोग ग्रहण करें। यह नमकीन पदार्थ चटनी के साथ नन्दिता के द्वारा ही बनाया गया है। यह गृह विज्ञान में भी प्रशिक्षण प्राप्त की हुई अत्यन्त कुशल है।

सुवीरा— वास्तव में नमकीन पदार्थ अत्यन्त स्वादिष्ट है। (इधर—उधर देखती हुयी) आपके कमरे में टेलीविजन नहीं दिखाई दे रहा है।

गौरी— (उदास होकर) टेलीविजन खरीदने में हम सब समर्थ नहीं हैं। कम वेतन से क्या—क्या हो सकता है?

सुवीरा— मध्यस्थ श्यामलाल ने तो बताया था कि लड़की के पिता को इसी साल प्रमोशन मिला है। फिर व्यक्तिगत रुप से शिक्षण करने से उनकी अतिरिक्त आय भी है।

गौरी— उत्कोचात् अन्यस्मात् वा असतः स्रोतसः आहृतम् कृष्णं धनम् अस्मिन् गृहे न वर्तते।

श्रीपालः — स्वकीयप्रयोगाय तु दूरदर्शनं न क्रीतं भवद्भिः, परं स्वपुत्र्यै तु दास्यन्त्येव।

सुबीरा— दूरदर्शनं, स्कूटरयानं, प्रशीतकयन्त्रं सर्वमिदं साधारणं देयमिदानीम्। अतिसामान्यजना अपि वस्तून्येतानि लभन्ते, पुनरस्माकं पुत्रस्तु 'जूनियर इंजीनियरः'। एकलक्षयौतुकस्य प्रस्तावोऽप्येकः अस्माभिः निराकृतः।

गौरी— अस्माभिः लक्षरूप्यकाणां दर्शनं न कदापि कृतम्। अस्माकं गुणवती, शीलवती, सुशिक्षिता, सुमनोहरा, प्रेम्णा पालिता लालिता च कन्यैव महद् धनम्।

गिरिनाथः— नन्दिताया उत्तमं शैक्षणिकविवरणमेव भावि स्थायि धनम्। सा सुसेवां कामपि.........

श्रीपालः— किं भवत्सम्बन्धिना श्यामलालेन वञ्चिता वयम्? तेन इदं दास्यते, इदं प्राप्स्यते इति भूयसी प्राप्त्याशा प्रदत्ता। परमत्र तु दुर्भिक्षं, दारिद्र्यं च दृश्यते।

गौरी— इस घर में रिश्वत अथवा अन्य झूठे स्रोत से लिया गया कोई भी काला धन विद्यमान नहीं है।

श्रीपाल— आपने अपने प्रयोग के लिए टेलीविजन नहीं खरीदा है। लेकिन अपनी पुत्री को तो देंगे ही।

सुवीरा— इस समय तो टेलीविजन, स्कूटर, रेफ्रिजरेटर यह सब कुछ साधारण देने की वस्तुएं है। अत्यन्त सामान्य लोग भी इन वस्तुओं को पाते हैं। फिर मेरा लड़का तो जूनियर इंजीनियर है। एक लाख दहेज का भी एक प्रस्ताव मेरे द्वारा ठुकराया जा चुका है।

गौरी— मेरे द्वारा लाख रुपये का दर्शन कभी नहीं किया गया है। मेरी गुणवती, शीलवती, सुशिक्षित, सुमनोहर और प्रेमपूर्वक पाली—पोसी पुत्री ही बहुत बड़ी सम्पत्ति है।

गिरिनाथ— नन्दिता का उत्कृष्ट शैक्षिक रिकार्ड ही भविष्य की एक मात्र स्थायी सम्पत्ति है। वह अच्छी नौकरी भी करेगी।

श्रीपाल— क्या हमें आपके रिश्तेदार श्यामलाल के द्वारा धोखा दिया गया है। उनके द्वारा ये दिया जायेगा, ये प्राप्त करोगे ऐसी अनेकशः आशा दी गयी। परन्तु यहाँ तो भुखमरी और गरीबी दिखाई दे रही है।

गिरिनाथः— क्षाम्यन्तु श्रीमन्तः। क्षाम्यन्तु। स्वसामर्थ्यानुसारं वयमपि स्वसुतायै यथाशक्ति यौतुकं प्रदास्यामः।

श्रीपालः— किं स्वपुत्र्यै एव सर्वं प्रदास्यन्ति भवन्तः? न वराय, वरजनकाय वा। कति सुवर्णमयानि आभूषणानि दास्यन्ते भवता? वररक्षायां तिलकावसरे च रूप्यकाणां कियत्सहस्रं दास्यते भवता?

गरिनाथः— यथासम्भवम् अधिकाधिकम्। तिलकोत्सवाय अष्टसहस्र—रूप्यकाणां प्रबन्धः कृतो मया।

श्रीपालः— किम् अवमूल्यनं क्रियते अस्मत्पुत्रस्य? तिलकोत्सवे त्रिंशत्सहस्ररुप्यकेभ्यः एकपणमपि न्यूनं न ग्रहीष्यामि। पञ्चसहस्ररूप्यकाणि मम सम्बन्धिभ्यः वितरणाय अपेक्षितानि। यदि नास्ति दातुं शक्तिः, निराकृतोऽयं विवाह—प्रस्तावः। चलन्तु सर्वे। (वरपक्षिणो गन्तुमिच्छन्ति)

गिरिनाथः— मर्षयन्तु मर्षयन्तु श्रीमन्तः! प्रस्तावोऽयं धनस्य कृते नास्वीकरणीयः। अस्माकं कन्यां, कुलशीलं पश्यन्तु। अहम् अञ्जलिं बद्ध्वा प्रार्थये यत्......

श्रीपालः— नायं सम्बन्धः चलिष्यति। चलन्तु सर्वे।

(इति निष्कान्ताः वरपक्षिणः, अन्ये च सर्वे)

गिरिनाथ— क्षमा करें श्रीमान्! क्षमा करें। अपनी सामर्थ्य के अनुसार हम भी अपनी पुत्री को यथाशक्ति दहेज देंगे।

श्रीपाल— क्या अपनी बेटी को ही सब कुछ देंगे? दूल्हे या वर के पिता को नहीं। आप कितने सोने के आभूषण देंगे? वररक्षा और तिलकोत्सव में कितने हजार रुपये आप देंगे?

गिरिनाथ— अधिक से अधिक प्रयास करूंगा। मेरे द्वारा तिलक समारोह के लिए 8 हजार का प्रबन्ध किया गया है।

श्रीपाल— क्या हमारे बेटे को कमतर आँका जा रहा है? तिलकोत्सव में तीस हजार रुपये से एक पैसा भी कम नहीं लूँगा। मेरे सगे सम्बन्धियों को बांटने के लिए पाँच हजार रुपये और चाहिए। यदि देने में समर्थ नहीं हो तो यह विवाह प्रस्ताव अस्वीकार है। चलो सब चलें। (दूल्हे पक्ष वाले जाना चाहते हैं)

गिरिनाथ— मुझे क्षमा करें, क्षमा करें श्रीमान्! धन के लिए यह प्रस्ताव अस्वीकार नहीं करें। हमारी कन्या, कुल के चरित्र को देखो। मैं हाथ जोड़कर प्रार्थना करता हूँ कि.....

श्रीपाल— नहीं, यह रिश्ता नहीं चल सकता। चलो सब चलें।

(वर पक्ष तथा अन्य सब बाहर जाते हैं)

चतुर्थं दृश्यम्

प्रमिलायाः श्वसुरालयः

(ततः प्रविशति प्रमिलायाः स्वश्रूः तारावती)

तारावतीः — प्रमिले! रे प्रमिले! किं सम्मार्जितं त्वया सकलं गृहम् अङ्गणं द्वारं च?

प्रमिलाः — आम् मातः! सर्वं सम्मार्जितम्। अधुना किं करणीयमस्ति?

तारावतीः – इदमपि प्रतिदिनं शिक्षणीयं कि करणीयमिति। सर्वेषां मलिनवस्त्राणि स्नानगृहे सञ्चितानि। सर्फप्रयोगेण प्रक्षालय तानि।

प्रमिला– एवम्, प्रक्षालयामि। गच्छामि स्नानगृहम्।

(स्नानगृहं गच्छति। पुनः प्रक्षालितवस्त्राणि आनीय बहिरागच्छति)

तारावतीः – (वस्त्राणि पश्यन्ती) अरे! इयं मे शाटिका प्रक्षालनेन विपाटिता। किमिदं कृतम्? केवलं हानिरेव। न लाभः कश्चित् क्रियते।

प्रमिला– ज्ञात्वा हानिर्न कृता। स्वयमेव जाता।

तारावतीः – स्वयमेव जाता। न तव पित्रा बह्वयः बहुमूल्याः शाटिकाः प्रदत्ताः। वयं तु लुण्टिताः, वञ्चिताः। अस्माकं सामाजिकप्रतिष्ठानुरूपं न किमपि प्रदत्तं तव जनकेन। शून्यतां दृष्ट्वा कः कथयिष्यति यदस्मिन् गृहे पी–एच०डी० धारकस्य पुत्रस्य विवाहः सम्पन्नः।

चौथा दृश्य

प्रमिला की ससुराल

(प्रमिला की सास तारावती प्रवेश करती है)

तारावती– प्रमिला ओ प्रमिला! क्या तुमने पूरे घर, आंगन और दरवाजे की सफाई कर दी है।

प्रमिला– हां माता जी, सब कुछ साफ कर दिया अब क्या करना है।

तारावती– अब यह भी प्रतिदिन बताना है कि क्या करना है। सारे गंदे कपड़े स्नान गृह में इकट्ठे हैं। उन सब को साबुन से धो दो।

प्रमिला– अच्छा धो देती हूँ, स्नान घर में जाती हूँ।

(स्नानघर को जाती है, पुनः धुले हुए वस्त्र लेकर बाहर आती है)

तारावती– (वस्त्रों को देखकर) अरे, यह मेरी साड़ी धोने से फाड़ दी। तुमने क्या किया केवल नुकसान ही करती हो, कोई लाभ का काम नहीं।

प्रमिला– जानकर हानि नहीं की है। खुद ही से हो गया।

तारावती– खुद ही से हो गया। तुम्हारे बाप ने बहुत सारी बहुमूल्य साड़ियां नहीं दे दी हैं। हम लोग तो लूट लिए गए, ठग लिए गए। हमारी सामाजिक प्रतिष्ठा के अनुसार तुम्हारे पिता ने कुछ भी नहीं दिया। सब कुछ सूनेपन को देखकर कौन कहेगा कि घर में पी.एच.डी. पुत्र का विवाह संपन्न हुआ है।

रमापतिः– (प्रविश्य) अरे! कि जातं येनाधिकं तारस्वरेण किञ्चिद् उच्यते?

तारावती– न किञ्चिद् जातम्। स्वस्याः वध्वाः चरित्राणि पश्यतु भवान्। दरिद्रकुलात् समागता महतीं वार्तां करोति।

रमापतिः– वध्वाः पितृगृहात् नाधिकं लब्धमस्माभिः इति विचार्य सामाजिक–प्रतिष्ठाया अधःकरणात् दुःखितोऽहम्। अस्मत् प्रतिवेशिना रामराजेन सुतस्य विवाहे लक्षाधिकं धनं लब्धम्।

तारावती– अस्मद् भाग्यानि एव विपरीतानि जातानि, येनेदृशैः जनैः सह सम्बन्धः सञ्जातः।

रमापतिः– पूर्वं विचारितमासीद् यद् तद्धनेन नगरे नवमेकं गृहनिर्माणं कारयिष्यामः, तत्रैव उद्योगमेकं स्थापयिष्यामः। परमस्याः पितृमहोदयास्तु सदा प्रणामाञ्जलितयैव स्वकार्यं सम्पादयन्ति। आसीद् विचारो यत् सन्दीपस्य अहमदाबादे एम०बी०ए० अध्ययनकार्यं, सर्वेशस्य च रासायनिकोद्योगस्थापनं, द्वे एव तव श्वसुरालयादागतेन द्रव्येण सम्पत्स्येते, परन्तु किमपि न सिद्धम्। कृपणैः अपणैश्च सम्बन्धः जातः।

(ततः प्रविशति सर्वेशः)

रमापति– (प्रवेश करके) क्या हुआ? क्यों इतनी अधिक ऊँचे स्वर में बोल रही हो?

तारावती– कुछ भी नहीं हुआ। अपनी बहू के चरित्र को देखिए। दरिद्र कुल से आई हुई बहुत बातें करती है।

रमापति– पिता के घर से ज्यादा नहीं लाई है यही सोच कर और हमारी सामाजिक प्रतिष्ठा नीची होने से हम लोग दुखी हैं। हमारे पड़ोसी रामराज ने पुत्र के विवाह में लाखों से अधिक धन प्राप्त किया है।

तारावती– हमारा भाग्य हमसे विपरीत हो गया है जो इस तरह के लोगों से संबंध बना है।

रमापति– पहले ही सोचा था कि उसी धन से नगर में एक नए घर का निर्माण करेंगे और वहीं एक इण्डस्ट्री भी स्थापित करेंगे, किंतु इसके पिता तो हमेशा हाथ जोड़कर ही अपने सारे कार्य संपादित कर लेते हैं। हमारा विचार था कि संदीप का अहमदाबाद में एम0बी0ए0 अध्ययन कार्य और सर्वेश का रासायनिक उद्योग स्थापना दोनों ही कार्य तुम्हारे ससुराल से आए हुए धन से संपन्न करेंगे, किंतु कुछ भी नहीं हुआ। कंजूस और दरिद्र के साथ संबंध हो गया।

(सर्वेश प्रवेश करता है)

सर्वेशः – नाद्यापि मे कार्यं सम्पन्नम्। रसायनशास्त्रे पी–एच०डी० इत्युपाधिं गृहीत्वाऽपि तदनुरूपा सेवा न प्राप्यते।

रमापतिः – किं कथितं तेन आयोगलिपिकेन?

सर्वेशः– स पूर्वं दशसहस्रमुद्रां याचते।

रमापतिः – दशसहस्रमुद्राः!

सर्वेशः – आम्, तद्धनस्य अधिकारिणि लिपिके च विभाजनं भविष्यति। तावेव चयनतालिकायाम् अन्यथाकर्तुं समर्थौ।

रमापतिः – तव रासायनिकोद्योगस्य स्थापनमेव वरम् इति मे विचारः।

सर्वेशः – तस्य स्थापनायाः सर्वा योजना एव निराकृताः। तस्मिन् विकसिते लक्षकोटिमितरूप्यकेषु क्रीडितुं शक्ताः वयम्। परमस्माकं श्वसुरेण तु पूर्वप्रतिज्ञातं सर्वं धनमेव न दत्तम्।

तारावती– (प्रविश्य) अस्माकं तु भागधेयानि रुष्टानि। गृहाल्लक्ष्मीरेव विलुप्ता, ईदृशी भार्या लब्धा त्वया।

सर्वेश– आज भी मेरा कार्य पूरा नहीं हुआ रसायन शास्त्र में पी0एच0डी0 करने के बाद भी उसके अनुरूप नौकरी नहीं प्राप्त हुई।

रमापति– उस आयोग के लिपिक (क्लर्क) ने क्या कहा?

सर्वेश– वह पहले दस हज़ार रुपये घूस माँग रहा है।

रमापति– दस हज़ार रुपये।

सर्वेश– हाँ, उस धन का अधिकारी और लिपिक के बीच में विभाजन होगा। तभी वे चयन तालिका (सिलेक्शन लिस्ट) में परिवर्तन कर पाएंगे।

रमापति– तुम्हारे लिए दवा की कंपनी (रासायनिक उद्योग) की स्थापना ही श्रेष्ठ है यह मैं सोचता हूँ।

सर्वेश– इसकी स्थापना की सारी योजना बेकार हो गई। उसके चलने पर वो हम लाखों करोड़ों रुपयों से खेलने वाले हो जायेंगे। किंतु हमारे ससुर तो पहले की प्रतिज्ञा के अनुसार पूरा धन नहीं दिया।

तारावती– प्रवेश करके हमारा तो भाग्य ही रूठ गया। घर से लक्ष्मी विलुप्त हो गई जो प्रकार की पत्नी तुम्हें मिल गई।

सर्वेशः– पुनस्तस्मै पत्रं लिखिष्यामि, लेखयिष्यामि वा वधूमाध्यमेन यत् पश्चाद दातुं प्रतिज्ञातं स्कूटर शीघ्रं प्रेषणीयम्। (स्वगतम्) तावत् प्रमिलासमीपं गच्छामि। (अग्रे सरति)

प्रमिला– कथं बहुपरिश्रान्त इव लक्ष्यसे? कि चायमानयानि?

सर्वेशः– अहं परिश्रान्तस्तु तव जनकेन कृतः। अद्यैव पत्रं लिखित्वा प्रेषय तं यत् पूर्वं प्रतिज्ञातं पश्चाद् दातव्यं स्कूटर तत् क्रययोग्यं द्रव्यं वा शीघ्रं प्रेषय, अथवा नय स्वकीयां सुतां स्वगृहाय इति।

प्रमिला– साम्प्रतं तु इदमेव मे स्वगृहम्। पिता तु मे अनुजायाः नन्दिताया विवाहयोजनायां चिन्तितः। कथं भवदीयामिच्छां पूरयिष्यति?

सर्वेशः– न हि पूरयिष्यति तदा करोतु यथेच्छम्। छलिनः मृषावादिनस्ते। न तैः सह सम्बन्धो मे कश्चित्। त्वमपि यथेच्छं कुरु। यत्रेच्छा तत्र गच्छ। अपसर मम दृष्टिपथात् (इति चपेटामेकां ददाति)।

प्रमिला— ताडय मां, मारय मां, घातय मां समग्रतया, येन सकला समस्या एव समाप्येत। अहो! वधकेभ्यः प्रदत्ता अहम्, व्याधानां हस्ते पतिताऽहम्!

(इति विलपन्ती निष्क्रान्ता, निष्कान्ताः सर्वे)

सर्वेश— फिर से उनको पत्र लिखूंगा अथवा लिखवाऊंगा कि बाद में स्कूटर देने का जो वादा किया था वह शीघ्र ही भिजवाइए। (अपने मन में) तब तक प्रमिला के पास जाता हूँ। (आगे बढ़ता है)

प्रमिला— क्यों, बहुत थके हुए से दिखते हो क्या चाय ले आऊँ?

सर्वेश— मुझे थका तो तुम्हारे पिता ने दिया है। आज ही पत्र लिखकर उनका भेज दो कि पहले जो वचन दिया था कि बाद में स्कूटर दूंगा अथवा उसके खरीदने के लिए पैसे दूंगा वह शीघ्र भेज दें अथवा अपनी पुत्री को अपने घर ले जाएं।

प्रमिला— अब तो यही मेरा घर है। पिताजी तो छोटी बहन नंदिता के विवाह के लिए चिंतित हैं। वह कैसे आपकी इच्छा पूरी करेंगे।

सर्वेश— अगर पूरी नहीं करेंगे तो जो चाहे करें। वे छली—कपटी हैं, झूठे हैं। अब उनके साथ मेरा कोई संबंध नहीं है। तुम्हारी भी जो इच्छा हो करो। जहाँ इच्छा हो वहां जाओ। मेरी आंख के सामने से दूर हटो (ऐसा कहकर एक थप्पड़ मारता है।)

प्रमिला— मुझको मारिए, पीटिये मुझको, मुझे पूरी तरह से जान से मार दो जिससे सारी समस्या ही समाप्त हो जाए, हे भगवान्! मैं कसाइयों को दे दी गई हूँ, मैं शिकारियों के हाथ में पड़ गई हूँ।

(ऐसा कहकर रोती हुई निकल जाती है, सभी निकल जाते हैं।)

पञ्चमं दृश्यम्

छात्रावासीयः कक्षः

(ततः प्रविशतः मित्रे)

अखिलः— भोः विभास! किं सावधानतया पठ्यते समाचारपत्रे?

विभासः— आम्, अद्य कति युवतयः अग्नौ दग्धा इति तासां संख्यां गणयामि।

अखिलः— किं समीचीना सा संख्या? बहुसंख्याका ज्वलन्ति, केवलं स्वल्पीयसी संख्या एव समाचारपत्रेषु दीयते।

विभासः— ज्वलनमिदं बहु विधम्। काश्चिद बाल्यकाल एव विवाहबन्धनं प्राप्य, काश्चिच्च अधिके आयुषि जातेऽपि सहचरम् अप्राप्य तपन्ति। काश्चिज्जातेऽपि परिणये अनुचितवरप्राप्त्या आजीवनं पश्चात्तापाग्नौ ज्वलन्ति। अपराः काश्चित् इन्धनाग्निना स्टोवाग्निना वा आत्मानं दाहयन्ति। ततोऽपि रक्षिताः पतिमरणसमकालमेव वैधव्यमसहमानाः काश्चित् सतीभूता अग्नौ पतन्ति। यदि स्वयम् न पतन्ति तदा धर्मान्धैः कैश्चित् अग्नौ पात्यन्ते दाह्यन्ते च।

पाँचवा दृश्य

छात्रावास का कक्ष

(दो मित्र प्रवेश करते हैं)

अखिल– अरे विभास तुम सावधानी से समाचार पत्र पढ़ते हो?

विभास– आज कितनी युवतीयाँ आग में जलाई गईं उनकी संख्या भी गिनता हूँ।

अखिल– क्या वह संख्या सही है। बहुत अधिक जलती हैं केवल थोड़ी सी संख्या ही समाचार पत्र में दी जाती है।

विभास– यह जलना कई प्रकार का है। कोई बचपन में ही विवाह के बंधन को प्राप्त करके, कोई अधिक उम्र की होने पर भी साथी को न प्राप्त कर जलती हैं। कुछ विवाह होने पर भी अनुचित वर की प्राप्ति से आजीवन पश्चात्ताप की अग्नि में जलती है। अन्य दूसरी रसोई की आग से या स्टोव की आग से अपने को जला लेती है। उनसे भी बढ़कर कुछ पति के मरने के साथ ही विधवा होने को न सहते हुए सती होकर अग्नि में गिर जाती हैं। यदि खुद नहीं गिरती हैं तो कुछ धर्मान्ध लोगों के द्वारा अग्नि में गिरा दी जाती हैं या जला दी जाती हैं।

अखिलः– ताः दहन्ति प्रतिदिनम्। परं त्वं कथं प्रातरेव दहसि?

विभासः– अहमपि दहामि एकस्मिन्नग्नौ।

अखिलः– कस्मिन्नग्नौ?

विभासः– कि कथयानि? प्रेमाग्नौ, क्रोधाग्नौ वा?

अखिलः– किं ते अग्निदाहस्य मूलं कारणम्?

विभासः– आसीन् मदीयायां परास्नातककक्षायामेका कन्या नन्दिता नाम, तस्यामासीत् कापि गुणसम्पत्, रूपवैभवम्, असामान्यं किन्चिदाकर्षणकारणं, येन मनो मे तां प्रति कोमलभावनया भृतम्।

अखिलः– शोभनम्! अग्रे किं जातम्?

विभासः– तयाऽपि स्वचक्षूरागेण प्रकटितं किमपि सहजं पुलकितत्त्वकरं माधुर्यम्।

अखिलः– बीजमिदं कथायाः। अग्रे किं जातम्?

अखिल– वे सब प्रतिदिन जलती ही है। किंतु तुम क्यों सवेरे सवेरे ही जल रहे हो?

विभास– मैं भी एक अग्नि में जल रहा हूँ।

अखिल– कौन सी अग्नि में?

विभास– क्या कहूँ प्रेम की अग्नि या क्रोध की अग्नि?

अखिल– तुम्हारा अग्नि में जलने का मूल कारण क्या है?

विभास— मेरी परास्नातक की कक्षा में एक नंदिता नाम की कन्या थी। उसमें एक ऐसी गुणसम्पत्ति एवं रूपवैभव था, उसमें ऐसा असाधारण कुछ आकर्षण था, जिससे मेरा मन उसके प्रति कुछ कोमल भावना से युक्त हो गया।

अखिल— बहुत अच्छा, फिर क्या हुआ?

विभास— उसने भी अपने नेत्रों के राग से पुलकित करने वाला माधुर्य प्रकट कर दिया था।

अखिल— यह तो कथा का बीज है। आगे क्या हुआ?

विभासः— शनैः शनैः वार्ताक्रमविकासेन कदाचित् तया आवयोः दाम्पत्यसूत्रे बन्धनाय अभिलाषः प्रकटितः स्वपित्रोरग्रे। परं प्रतिकूलतां गता तत्पित्रोः प्रतिक्रिया।

अखिलः— कस्याः जातेः बालिका सा?

विभासः— सा ब्राह्मणकुलजाता कन्या ठक्कुरसुतेन परिणेतुं कथम् अनुमन्यते?

अखिलः— इदमेव दुःखावहम्। शिक्षिता बुद्धिजीविनोऽपि जनाः ब्राह्मणेष्वपि अयं वर्गः उच्चः, अयं नीच इति उपजातीनां नीचोच्चविवेचने एव जीवनं यापयन्ति। रुढिवादिनो यदा स्वजातौ एव निम्नतर इति मन्यमाना विवाहं न कारयन्ति, कथं ते अन्तर्जातीयविवाहं सहिष्यन्ते?

विभासः— यथार्थमिदम्। क्षत्रियजातिश्रवणेनैव कुपिताः नन्दिताया गुरुजनाः।

अखिलः— अपरमपि अनर्हत्वं ते किं तेषां विचारेण?

विभासः— द्वितीया मे अयोग्यता यत् पितृविहीनोऽहम्। विधवायां मातरि आश्रितत्त्वेन अयोग्यः। तृतीया पुनः यत् कृतेऽपि परास्नातकपरीक्षोत्तरणे अद्यावधि व्यवसायविहीनोऽहम् वृत्तिहीनश्च। नास्ति काऽपि यौतुकवाञ्छा इति प्रकटितं मया।

विभास— धीरे—धीरे बातचीत बढ़ने से उसने हम दोनों के दाम्पत्य सूत्र में बँधने की इच्छा को अपने माता—पिता के आगे प्रकट किया। किंतु उसके माता—पिता की प्रतिक्रिया इसके प्रतिकूल थी।

अखिल— वह बालिका किस जाति की है?

विभास— ब्राह्मण कुल में उत्पन्न उस लड़की को ठाकुर के पुत्र से विवाह की अनुमति कैसे दे दें?

अखिल— दुःख की बात है? शिक्षित और बुद्धिजीवी ब्राह्मण लोग भी यह उच्च वर्ग के यह निम्न वर्ग या जाति के हैं; इसी ऊपर नीचे के विवेचन में जीवन बिता देते हैं। रूढ़िवादी लोग जब अपनी ही जाति में यह निम्नतर है ऐसा मानकर विवाह नहीं करते तो वह कैसे अंतरजातीय विवाह को सहन करेंगे?

विभास— यह सच है। क्षत्रिय जाति को सुनकर ही नंदिता के घर के बड़े लोग क्रोधित हो गए हैं।

अखिल— तुम्हारी दूसरी अयोग्यता के विषय में उनका क्या विचार है?

विभास— दूसरी मेरी अयोग्यता है कि मैं पितृविहीन हूँ। विधवा माँ के आश्रित और अयोग्य हूँ। तीसरी कि मैं परास्नातक परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद भी आज भी नौकरी से और धन से भी रहित हूँ। मैंने कोई धन या दहेज की इच्छा भी प्रगट नहीं की।

अखिलः— त्वं हि मूर्खः। प्रथमं सेवाम् अन्वेषय, तदा मेवां प्राप्स्यसि। प्राप्तायां सुसेवायां सुकन्यां सुवर्णपरिलिप्तां लब्धुं शक्ष्यसि।

विभासः— नन्दितायाः पितरौ प्रभूतकृष्णधनसंयुतं कुमारं कमपि अन्वेषयन्ति। तद् गृहं च धनदानेन पूरयितुम् इच्छन्ति।

अखिलः— अहमपि प्रथमं प्रतियोगिता परीक्षासु चयनं प्राप्य अफसरो भविष्यामि, सेचनविभागे अभियन्ता वा। लक्षद्वयमूल्येन तुलिते सत्येव लक्ष्मीं लप्स्ये।

विभासः— सर्वे पूर्णं घटं पूरयन्ति, न रिक्तं घटम्।

अखिलः— एम०ए० परीक्षायां सर्वोच्चस्थानप्राप्तिकारणात् यत् स्वर्णपदकं त्वया लब्धं, तत् स्ववक्षसि वसने पिनह्य आदर्शवादडिण्डिमं घोषयन् भ्रम सर्वत्र समाजे। न स्वानुरूपा बालिका मिलिष्यति, न च स्वानुरूपा जीविका।

अखिल— तुम मूर्ख हो। पहले सेवा या नौकरी ढूँढ़ो, तभी मेवा प्राप्त करोगे।

विभास— नंदिता के माता—पिता बहुत धन वाले किसी वर को ढूँढ़ रहे हैं, और उसके घर को भी धन के दान से पूरा करने की इच्छा करते हैं।

अखिल— मैं भी पहले प्रतियोगिता परीक्षाओं में चयन प्राप्त कर अफसर बनूँगा या सिंचाई विभाग में अभियंता बनूँगा। मेरा खुद का 2 लाख मूल्य होने पर ही पुनः लक्ष्मी को प्राप्त करूंगा।

विभास— सभी लोग भरे हुए घड़े को ही भरते हैं, खाली घड़े को कोई नहीं।

अखिल— एम0ए0 की परीक्षा में सर्वोच्च स्थान प्राप्त करने से जो स्वर्ण पदक तुमने प्राप्त किया था, उसको अपने वस्त्रों पर पहन कर आदर्शवाद का डिम डिम घोष करते हुए पूरे समाज में घूमो। इससे न तो अपने अनुरूप बालिका मिलेगी और ना ही अपने अनुरूप जीविका या नौकरी।

विभासः— कदाचिच्चिन्तयामि सर्वमग्नौ प्रक्षिपामि—सर्वं स्वकीयानि उपाधिपत्राणि, विशिष्टयोग्यतापदकानि, अस्य समाजस्य कुप्रथाः, कुत्सितनियम—बन्धनानि। भ्रष्टं दूषितं गलितं सर्वमत्र प्रदह्येत।

अखिलः— न कस्यापि प्रदाहो भविष्यति। परमस्मिन् प्रयासे तव प्रदाहस्तु साम्प्रतं प्रत्यक्षं दृश्यते।

विभासः— नो, नहि, अद्यैवाहं नन्दिताया गृहं गच्छामि। अद्य सुस्पष्टं कथयिष्यामि तस्याः पितरौ—अहं नन्दितायाः पाणिग्रहणं कर्तुमिच्छामि। न यौतुकं वाञ्छामि। आवाम् उभावपि सेवावृत्तिम् अन्विष्यावः, धनमर्जयिष्यावः, सुखेन जीवनं यापयिष्यावः। द्वयोरर्जनेन द्विगुणितो धनागमः, द्विगुणित आनन्दः। अहो! सुखमयम् आवयोः भावि दाम्पत्यजीवनम्। सम्प्रति गच्छ। तस्याः गृहमेव गच्छामि।

(इति निष्क्रान्तः विभासः साखिलः)

विभास– कभी–कभी सोचता हूँ अपने सभी उपाधि पत्रों, विशिष्ट योग्यता पदकों को, इस समाज की बुरी प्रथा को और कुत्सित नियमों को सब कुछ आग में फेंक दूँ। सब कुछ यहाँ भ्रष्ट दूषित गलित को जला दिया जाना चाहिए।

अखिल– यहां किसी का भी जलना नहीं होगा, किंतु तुम्हारा जलना अभी प्रत्यक्ष दिख रहा है।

विभास– नहीं, नहीं आज ही नंदिता के घर जाता हूँ। आज ही उसके माता–पिता से स्पष्ट कहूँगा कि मैं नंदिता से विवाह करना चाहता हूँ। मैं दहेज नहीं चाहता हूँ। हम दोनों नौकरी ढूंढेंगे, धनार्जन करेंगे और सुखपूर्वक जीवन यापन करेंगे। दोनों के धनार्जन से दुगना धन आएगा और दुगना आनंद भी। अहो! हम दोनों का दांपत्य जीवन सुखमय होगा। अभी तुम जाओ। मैं उसके घर जाता हूँ?

(ऐसा कहकर विभास अखिल के संग निकल जाता है)

षष्ठं दृश्यम्

गिरिनाथस्य गृहम्. रमापतेश्च गृहम्

(ततः प्रविशति ससम्भ्रमम् अवनीशः)

अवनीशः– गिरिनाथ! अरे गिरिनाथ! कुत्रासि त्वम्?

नंन्दिताः– अहो पितृव्यः। तात! किं जातम्? कथं भवान् भ्रशं समाकुलो दृश्यते?

अवनीशः– वत्से! अत्याहितम्! वत्से! कुत्र गिरिनाथः?

नन्दिताः– पितः! शीघ्रमागच्छतु। तात! किं किम् अनिष्टं जातं किमपि?

गिरिनाथः– (प्रविश्य) अहो अवनीशः। पूजानन्तरं वसनानि परिदधानः आसम्। कथं सम्भ्रमः, किं..

अवनीशः– मित्र! अनर्थः सम्पतितः। (सस्वेदं दीर्घं श्वसन्) यत् श्रुतं तत् कथं कथयानि?

गिरिनाथः– कथय, कथय। कि मे जातम्?

छठा दृश्य

गिरिनाथ और रमापति का घर

(तब घबराहट के साथ अवनीश का प्रवेश)

अवनीश– गिरिनाथ! अरे गिरिनाथ तुम कहाँ हो?

नंदिता– अरे चाचा जी! चाचा जी क्या हुआ? क्यों आप बहुत अधिक व्याकुल दिखाई दे रहे हैं?

अवनीश– बेटा! अनर्थ हो गया! गिरिनाथ कहाँ है?

नंदिता– पिताजी! शीघ्र आइये! चाचा जी, क्या कुछ अनिष्ट हो गया?

गिरिनाथ– (प्रवेश करके) अरे अवनीश, मैं पूजा के बाद वस्त्र ही पहन रहा था। क्या हुआ घबराए हुए क्यों........ हो?

अवनीश– मित्र! अनर्थ हो गया! (पसीने के साथ और लंबी सांस लेकर) जो सुना है वही तुमसे कहता हूँ।

गिरिनाथ– कहो, कहो क्या हुआ?

अवनीशः – रामपुरात् तव समधी–सम्बन्धी एकः समागतः। तेन सूचितं यत् पुत्री प्रमिला भोजनं पचन्ती स्टोवाग्निना दग्धा।

गिरिनाथः – दग्धा! कुत्र, कदा कियती दग्धा? कुत्र सा, कथं सा?

नन्दिताः – रे रे दग्धा। भगिनी मे घातिता। नूनं न दग्धा, दाहिता सा। ज्वालिता हा ज्वालिता!

गौरी– (ससम्भ्रमं प्रविश्य) हा! कुत्र मे वत्सा? कुत्र मे वराकी? (इति क्रन्दति)

अवनीशः – तेनोक्तं यद् दिनद्वयपूर्वमेव दग्धावस्थायां राजकीये चिकित्सालये आनीता, तत्रैव घण्टानन्तरं मृता।

गौरी– हा हा रे मृता। अरे मारिता सा। घातिता मे तनया घातिता...। (इति तारस्वरेण विलपति)

अवनीश– रामपुर से तुम्हारे समधी का एक सम्बन्धी आया हुआ था। उसने बताया कि तुम्हारी पुत्री प्रमिला भोजन बनाते समय स्टोव से जल गई।

गिरिनाथ– जल गई ! कहाँ, कब कितना जल गई? वह कहाँ है, वह कैसी है?

नंदिता– अरे अरे जल गई! मेरी बहन मार दी गई। निश्चित रूप से वह जली नहीं है जलाई गई है। जलाई गई, हां जलाई गई है।

गौरी– (हड़बड़ाहट में प्रवेश करके) हाय मेरी पुत्री कहाँ है ? मेरी बिचारी पुत्री कहाँ है? (ऐसा कहकर रोने लगती है)

अवनीश– उसने बताया कि दो दिन पहले जली हुई अवस्था में वह यहाँ के सरकारी अस्पताल में लाई गई थी और वहीं पर एक घंटे में मर गई।

गौरी– हाय मर गई। अरे, वह मारी गई है अरे वह मारी गई है। मेरी पुत्री मार दी गई........(ऐसा कहकर ऊंचे स्वर में विलाप करती है)

नन्दिता– याऽऽशङ्का आसीत् सा सत्यं घटिता। मारिता मे स्वसा, घातिता मे स्वसा।

गिरिनाथः – अवनीश! टैक्सी–शकटीम् आनय। रामपुरं चलावः। (अवनीशः बहिर्गच्छति, पुनरायाति)

अवनीशः – शकटी आगता। चलत् भवान्।

गौरी– अहमपि चलिष्यामि। स्वपुत्रीमुखं द्रक्ष्यामि।

अवनीशः – नास्माकं पुत्र्याः मुखं दर्शनाय अवशिष्टम्। सर्व नष्टम्। सम्प्रति आवामेव गच्छावः। गिरिनाथ। आरोहतु शकटीम्।

गिरिनाथः – चालकबन्धो! कृपया शीघ्रतां कुरु। वेगेन चालय, वेगेन! (टैक्सी वेगेन धावति)

अवनीशः – प्राप्ताः स्मः रामपुरम्। प्रमिलाया श्वसुरालयो दृश्यते। अवरोधय यानम् (उभौ टैक्सीयानाद् अवतरतः)

गिरिनाथः – कुत्र मे वत्सा? कुत्र मे पुत्री? (इति रोदिति)

नंदिता– जो आशंका थी वही सच में हो गई। मेरी बहन को मार दिया गया मेरी बहन को मार दिया गया।

गिरिनाथ– अवनीश टैक्सी को बुलाओ। रामपुर चलेंगे।

(अवनीश बाहर जाता है पुनः आता है।)

अवनीश– गाड़ी आ गई आप चलिए।

गौरी– मैं भी चलूंगी अपनी पुत्री का मुख देखूंगी।

अवनीश– अब हमारी पुत्री का मुंह देखने के लिए नहीं बचा। सब कुछ समाप्त हो गया। हम सभी चलते हैं। गिरिनाथ! गाड़ी पर चढ़ो।

गिरिनाथ– चालक बंधु (ड्राइवर साहब) जल्दी चलिए। तेज गाड़ी चलाइए।

(टैक्सी जोर से तेज चलती है।)

अवनीश– हम लोग रामपुर आ गए। प्रमिला का ससुराल दिखाई दे रहा है। गाड़ी रोको।

(वे दोनों टैक्सी से उतरते हैं।)

गिरिनाथ– मेरी पुत्री कहाँ है? कहाँ है मेरी पुत्री? (ऐसा कहकर रोता है।)

रमापतिः – अयि बन्धो! वधूः मे अनले दग्धा, कुलवधूः मे अनले दग्धा।

गिरिनाथः – कथं दग्धा, कस्यां स्थितौ दग्धा।

रमापतिः – पाकगृहे स्टोवं पाचकयन्त्रं चालयन्ती कथञ्चित् तैल–संयोगेन अग्निना गृहीता। चिकित्सालये शीघ्रं नीयमाना, चिकित्सकैः चिकित्स्यमानाऽपि न जीवितुं शक्ताऽभूत्।

(प्रमिलायाः श्वश्रूः, पतिः, अन्ये च केचिद् अधोमुखास्तिष्ठन्ति)

अवनीशः – नास्मभ्यं तद्दिन एव सूचना दत्ता।

रमापतिः – शोकाकुलतया सर्वं विस्मृतमस्माभिः। ह्यस्तनात् पूर्वे दिने घटना जाता। अद्य प्रातरेव जनः भवत्सकाशं प्रेषितः।

रमापति– अरे भाई, मेरी बहू आग में जल गई, मेरी कुलवधू आग में जल गई।

गिरिनाथ– कैसे जल गई, किस स्थिति में जल गई।

रमापति– रसोई घर में स्टोव को जलाती हुई न जाने कैसे तेल के संयोग से आग लग गई। जल्दी ही अस्पताल ले आए। चिकित्सकों ने चिकित्सा भी की, किंतु बचा नहीं पाए।

(प्रमिला की सास, पति और अन्य कुछ लोग नीचे मुख किए बैठे हुए हैं)

अवनीश– हम लोगों को उसी दिन सूचना नहीं दी?

रमापति– शोक के कारण हम सब भूल गए। परसों की ही यह घटना है। आज प्रातः आप लोगों के पास सूचना भेजी।

गिरिनाथः– कथं त्वरितं न सूचितम्? सम्भवतः अस्मत्प्रयासेनैव अस्मत्सुता मृत्योः रक्षिता अभविष्यत्। युष्माभिः अनर्थः कृतः। घातका यूयं मत्सुतायाः। लुब्धा यूयम्, वञ्चका वधका यूयम्।

रमापतिः– कि प्रलपसि त्वम्? किं पुत्रीशोकेन कथ्याकथ्यविचारमपि विस्मृतवान्।

गिरिनाथः– अधुनैव आरक्षिभिः बन्धनं कारयामि युष्माकम्। तत् आरक्षिसूचनार्थम् आवां कोतवालीं चलावः।

(अग्रे चलतः, किञ्चिद् दूरं गच्छतः)

गिरिनाथ– क्यों नहीं तुरंत बताया। शायद हमारे प्रयास से हमारी बेटी मृत्यु से बचा ली जाती। आप लोगों ने अनर्थ किया है। आपने मेरी बेटी को मार डाला। आप लोग लालची हैं, धोखेबाज हैं, हत्यारे हैं।

रमापति– क्या कह रहे हो तुम? क्या पुत्री के शोक से सही गलत कथ्य अकथ्य का विचार भी भूल गए।

गिरिनाथ– अभी पुलिस से आपको पकड़वाता हूँ। पुलिस को सूचना देने हम दोनों कोतवाली चलते हैं।

(आगे चलते हैं और कुछ दूर जाते हैं)

रामेश्वरः – (प्रविश्य) अस्य बृहद्ग्रामस्य प्रधानोऽहम्। भवतां सुतायाः ह्वत्या एव जाता इति प्रतिवेशिभिः कथ्यते पोष्यते च। भवतां साहाय्यं कर्तुं प्रस्तुतोऽहम्, अन्येऽपि च केचित्।

गिरिनाथः – किं यूयं मे वत्सां पुनर्मह्यं दातुं समर्थाः? वदत, कुरुत सहायताम्। दत्त मे प्रियां पुत्रीम्, दत्त।

(इति रोदिति, तत्र स्थिताः जनाः साश्रवो भवन्ति)

अवनीशः – शीघ्रं पुलिससमीपमेव गच्छावः। कुत्र तावद् पुलिसस्थानम्?

रामेश्वरः – दक्षिणस्यां दिशि क्रोशद्वयानन्तरं पुलिसस्थानं प्राप्स्यते।

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

रामेश्वर– (प्रवेश करके) मैं इस बड़े से गांव का प्रधान हूँ। आपकी बेटी की हत्या ही की गई है ऐसा पड़ोसी लोग कहते हैं। मैं आपकी सहायता के लिए प्रस्तुत हूँ और भी कुछ बताइए।

गिरिनाथ– क्या तुम सब मिलकर मेरी बेटी को पुनः मुझे दे सकते हो? बोलो करो सहायता, मेरी प्रिय पुत्री को मुझे दे दो।

(ऐसा कहकर रोता है और वहां खड़े सभी लोग के आंसू बहते हैं)

अवनीश– शीघ्र ही पुलिस के पास चलते हैं। पुलिस स्थान कहाँ है?

रामेश्वर– दाहिनी दिशा में दो कोस के बाद पुलिस स्थान (स्टेशन) मिल जाएगा।

(ऐसा कहकर सभी निकलते हैं)

सप्तमं दृश्यम्

ग्रामक्षेत्रीयं पुलिसस्थानम्

(ततः प्रविशति पुलिसपरिधानघारी धृतोपनेत्रः किञ्चिल्लिखन् पुरुषः)

पुरुषः– केन कार्येण आगतौ युवाम्?

गिरिनाथः– प्रथमसूचनावेदनार्थम्। अस्मत् सुता रामपुरग्रामे अग्निना दग्धा इति आवेदयितुम् आगतौ आवाम्।

पुरुषः– रमापतिगृहे या घटना जाता शनिवासरे, अद्य आगच्छथः। वधूः भोजनं पचन्ती अग्निना दग्धा तत्र पुलिसकर्मिणः कि करिष्यन्ति?

अवनीशः– अद्यैव अस्माकं सूचना जाता इति हेतोः विलम्बेनागतौ। पुनर्न दग्धा सा, दाहिता श्वसुरालयजनैः।

पुरुषः– (तीक्ष्णदृष्ट्या पश्यन्) नाहं जानामि। अस्मदधिकारिमहाशयैः संलापं कुरुतम्। (निष्क्रामति)

सातवां दृश्य

गाँव का पुलिस स्थान

(तब पुलिस वेश में चश्मा लगाए हुए और कुछ लिखते हुए पुरुष प्रवेश करता हैं)

पुरुष– आप दोनों किस काम से आए हैं?

गिरिनाथ– पहली सूचना की रिपोर्ट देने। हमारी पुत्री रामपुर के गांव में आग से जल गई है इसी सूचना को देने हम दोनों आए हैं।

पुरुष– जो घटना रमापति के घर में शनिवार को घटी थी उसके लिए आज आ रहे हो। बहू भोजन बनाती हुई आग से जल गई तो उसमें पुलिस वाले क्या करेंगे।

अवनीश– हमें आज ही सूचना मिली इसीलिए देर से आ रहे हैं और फिर वह जली नहीं है, बल्कि ससुराल वालों के द्वारा जलाई गई है।

पुरुष– (तीखी दृष्टि से देखता हुआ) मैं नहीं जानता हूँ। हमारे अधिकारी महोदय के साथ बात करिए। (कह कर निकल जाता है।)

थानाध्यक्षः– **(पुरुषेण सह प्रविश्य, ताम्बूलं चर्वन्)** किं, किं तावद् भवतोः विषयः?

गिरिनाथः– रामपुरे शनौ अस्मत्सुता प्रमिलानाम्नी अग्नौ ज्वालिता तस्याः पतिश्वसुरादिभिः इति पुलिसावेदनं कर्तुमागतौ आवाम्।

थानाध्यक्षः– तस्मिन् दिने चिकित्सालये या स्त्री दग्धा समानीता, चिकित्सकस्य आख्यानुसारं सामान्य एव तस्याः मृत्युः।

गिरिनाथः— न दहनप्रसङ्गः, दाहनप्रसङ्गोऽयम्, मारणविषयोऽयम्। सर्वदा अधिकाधिकयौतुकानयनाय पीड्यते स्म मत्सुता, तथाविधानि पत्राणि लिखितानि तया यत् 'नयत माम्, अन्यथा कस्मिंश्चिद् दिने ते मारयिष्यन्ति माम्'। तैर्मारिता मे तनया। गृहीत्वा बन्धनागारे निक्षिप तान् आततायिनः।

थानाध्यक्ष—(पान चबाते हुए पुरुष के साथ प्रवेश करके)

आप लोगों का क्या मामला है, क्या हुआ?

गिरिनाथ— शनिवार को रामपुर में हमारी प्रमिला नाम की पुत्री उसके पति, ससुर आदि के द्वारा आग में जला दी गई। यही रिपोर्ट करने पुलिस कार्यालय में हम लोग आए हैं।

थानाध्यक्ष— उस दिन जो जली हुई स्त्री चिकित्सालय में लाई गई थी। चिकित्सकों के अनुसार उसकी सामान्य मृत्यु हुई है।

गिरिनाथ— यह जलने का प्रसंग नहीं है, बल्कि जलाने का और मारने का मामला है। हमेशा अधिक से अधिक दहेज लाने के लिए वे मेरी पुत्री को पीटते थे। और उसी तरह के पत्र उसने लिखे थे कि 'या तो मुझे ले जाओ अन्यथा किसी दिन वे लोग मुझे मार डालेंगे।' उन लोगों ने मेरी पुत्री को मार दिया। उन आतताइयों को पकड़कर जेल में डाल दीजिए।

अवनीशः— सुस्पष्टं हत्याभियोगोऽयम्। दहेजविरोधिविध्यनुसारं बध्नातु, दण्डयतु भवान् तानपराधिणः।

थानाध्यक्षः— आकस्मिकघटनां हत्याभियोगे परावर्तयितुमिच्छन्तः भवन्तः किमपेक्षन्ते? किमेतत् प्रतिफलरूपेण किञ्चिद् द्रव्यमपेक्षन्ते तस्याः श्वसुरालयजनेभ्यः?

गिरिनाथः— वयं घातकान् दण्डं दापयितुम् इच्छामः, नान्यत्। पुत्रीशोकेन विह्वलान् अस्मान् कथं विषवचनैः मारयसि?

थानाध्यक्षः— नाहं किमपि जानामि। बहिर्निस्सरतम् अस्मात् थानापरिसराद्, अन्यथा.......

(गिरिनाथावनीशौ अपमानदग्धौ बहिर्निस्सरतः)

अवनीश— यह एकदम स्पष्ट हत्या का अपराध है। दहेज विरोधी कानून के अनुसार उन अपराधियों को पकड़िए और दंडित कीजिए।

थानाध्यक्ष— आप लोग आकस्मिक घटना को हत्या के अभियोग में बदलने की इच्छा से क्या चाहते हैं? क्या इसके बदले में उसके ससुराल वालों से कुछ धन की इच्छा करते हैं।

गिरिनाथ— हम लोग केवल हत्यारों को दंड दिलवाना चाहते हैं और कुछ नहीं। पुत्री के शोक से विह्वल हम लोगों को क्यों विष वचन के बाणों से मारते हो?

थानाध्यक्ष—मैं कुछ नहीं जानता हूँ। इस थाना परिसर से बाहर निकलो नहीं तो.....

(गिरिनाथ और अवनीश अपमान की आग से जलते हुए बाहर निकलते हैं)

पत्रकारः – (प्रविश्य)

कि भवन्तौ तद्वधूसम्बन्धिनौ या शनिवासरे रामपुरे दग्धा। अस्ति भवतोः कथनीयं किञ्चित्? अहं स्वकीये समाचारपत्रे प्रकाशयिष्यामि, सत्यम् उद्घाटयिष्यामि। इमं थानाध्यक्षम् उत्तरदायिनं घोषयिष्यामि।

नेताः – (प्रविश्य)

अहं समाजसेवको नेता। अस्य क्षेत्रस्य विगते निर्वाचने पराजितः। निःशङ्कं कथयतं माम्। नूनम् अनेन थानाध्यक्षेण अस्मिन् प्रसङ्गे उत्कोचो गृहीतः। सर्वेषाम् अपमानं करोत्येषः अधमः। मन्त्रिमहोदयान् आवेद्य स्थानान्तरणमस्य कारयिष्यामि। कथयतं मां कि जातम्?

पत्रकार– (प्रवेश करके) क्या आप दोनों उस वधू के संबंधी हैं जो शनिवार को रामपुर में जल गई क्या आप लोगों को कुछ कहना है? मैं अपने समाचार पत्र में प्रकाशित करूंगा। और सत्य को प्रकट करूंगा। इस थानाध्यक्ष को भी उत्तरदाई घोषित करूंगा।

नेता– (प्रवेश करके)

मैं समाज सेवक नेता हूँ। इस क्षेत्र के पिछले निर्वाचन में हार गया था। बिना किसी शंका के मुझसे सब कहें। अवश्य ही इस प्रसंग में इस थानेदार ने रिश्वत ली है। यह नीच सभी का अपमान करता है। मंत्री महोदय से आवेदन करके इसका स्थानांतरण करवाऊंगा। मुझे बताइए कि क्या हुआ है?

युवसंघमन्त्रीः – (प्रविश्य)

भवतां पुत्री यौतुककारणात् मृता इति विरोधं प्रदर्शयितुम् अद्यैवाहं युवसदस्यानाहूय रामपुरे रमापतिगृहस्याग्रे जनपदाधिकारिसमक्षं च प्रदर्शनमेकं कारयिष्यामि।

गिरिनाथः – (सावेगम्) यथेच्छं कुर्वन्तु भवन्तः। यद् यस्मै रोचते तत् करोतु। पुत्री मे मारिता न पुनरागच्छति। हा पुत्रि! हा वत्से! क्व त्वां प्राप्नोमि? क्व गच्छामि? किं करोमि? (इति बहुविधं क्रन्दति)

(ततः प्रविशति ससम्भ्रमं ग्राम्यो युवा नन्दनः)

युवा संघमंत्री –(प्रवेश करके)

आपकी पुत्री दहेज के कारण मारी गई है इस विरोध को प्रदर्शित करने के लिए आज ही में युवा सदस्यों को बुलाकर के रामपुर में रमापति के घर के आगे जनपद अधिकारियों के सामने एक प्रदर्शन करूंगा।

गिरिनाथ– (आवेग पूर्वक) आप लोगों की जो इच्छा हो करिए। जिसको जो अच्छा लगता है वह करें। मेरी पुत्री मारी गई है वह फिर लौट कर नहीं आएगी। अरे पुत्री! अरे बेटी! तुम कहाँ मिलेगी? मैं कहाँ जाऊं? क्या करूं? (इस प्रकार से बहुत रोता है)

(इसके बाद घबराहट के साथ ग्राम के एक युवा नन्दन का प्रवेश)

नन्दनः– अद्यैव मया दृष्टम्। अधुनैव दृष्टम्। निकटवर्तिग्रामस्य बीसलपुरस्य निवासी मदिराव्यापारी रमापतिगृहं समागतः। पूर्वमपि आयाति स्म। तस्य पूर्वपत्न्याः एका बालिका वर्तते, या स्वचारित्र्यदोषैः कलङ्किता कुख्याता च जाता। तयैव सह रमापतिपुत्रस्य विवाहयोजना पुनरपि निर्मीयते, साम्प्रतं निष्कण्टकत्वेन। सुराविक्रेतृणा बहुधनं तस्मै दीयते। दशसहस्रमुद्रास्तु तेन पूर्वमेव प्रदत्ताः नूनं ता एव पुलिसस्योदरान्तः प्रविष्टाः। अनर्थः क्रियते, अनीतिर्भवति।

सर्वे– कथं ज्ञायते? कुतो ज्ञायते पुनर्विवाहवार्तेयम्?

नन्दनः– पूर्वमेव इयमेव शङ्का आसीत् सर्वेषां प्रतिवेशिनां, ग्रामवासिनाञ्च। सर्वं भविष्यकाले भविष्यति। यद् भावि तद् दृश्यते, तन्नूनमेव अस्माकं नेत्रयोरग्रे घटिष्यति।

सर्वे:– अस्मासु सत्सु नेदं भवितुं शक्नोति।

गिरिनाथः– (सक्षोभम्) युष्मासु सत्सु एव पुत्री मे मारिता। युष्मासु सत्सु पुलिसावेदनं न लिख्यते, उत्कोचदानं नावरुध्यति, घातकाः न दण्ड्यन्ते। पुनर्विवाहोऽपि भविष्यति। भवन्त एव गत्वा तत्र कन्यादानं करिष्यन्ति। इदमेव चलितं, इदमेव चलति, इदमेव चलिष्यति–प्रथमं कन्यादानम्, पश्चात् कन्यादहनम्, प्रथमं कन्यादानम्, पश्चात् कन्यादहनम् पूर्वं वधूग्रहणम्, पश्चात् वधूदहनम्।

नन्दन– आज ही मैंने देखा। अभी मैंने देखा। पास के ही बीसलपुर गांव का निवासी जो मदिरा व्यापारी है, रमापति के घर आया था। पहले भी आता था। उसकी पहली पत्नी से एक लड़की है जो अपने चरित्र दोष से कलंकित और कुख्यात हो गई है। उसी के साथ रमापति के पुत्र की पुनः विवाह की योजना बन रही है और वह भी अब निष्कंटक रूप से। वह सुराव्यापारी रमापति को बहुत धन भी देगा। दस हजार रुपये तो उसने पहले ही दे दिए थे। इसी प्रकार निश्चित ही पुलिस के पेट में चले गए। महान् अनर्थ हो रहा है, अनीति हो रही है।

सभी लोग– कैसे जानते हो और इस पुनर्विवाह की वार्ता का कैसे पता चला?

नन्दन– पहले ही सभी पड़ोसी और ग्रामवासी इस बात की शंका कर रहे थे कि सब कुछ भविष्य में होगा। जो हुआ वह दिखाई दे रहा है। वह निश्चित रूप से हमारे नेत्रों के आगे घटित होगा।

सभी लोग– हम लोगों के रहते हुए यह बिल्कुल नहीं हो सकता।

गिरिनाथ– (क्रोधपूर्वक) तुम सबके होते हुए मेरी पुत्री मारी गई। तुम सबके होते हुए पुलिस रिपोर्ट नहीं लिखा गया। रिश्वत देना भी नहीं रुक रहा है। हत्यारों को दंड नहीं दिया जा रहा है। पुनर्विवाह भी होगा। आप सब वहां जाकर ही कन्यादान भी करेंगे। यही होता था यही होता आया है और यही होता रहेगा–पहले कन्यादान, फिर कन्यादहन, पहले कन्यादान, फिर कन्यादहन, पहले वधू का ग्रहण या विवाह और बाद में वधू का दहन।

(सभी निकल जाते हैं)

3.5 युगबोध

'वधूदहनम्' लघुनाट्य कृति आधुनिक भारत की एक विकराल समस्या दहेज प्रथा को लेकर लिखी गयी है। आज 20वीं शताब्दी के अन्त में भी दहेज के लोभवश नारियों को कठोरतम यातनाएँ दी जा रही हैं और सभ्यता के इस युग में हजारों बहुएँ दहेज–दानव के कारण मारी जा रही हैं। अतः प्रस्तुत लघुनाटक की वर्तमान युग में प्रासंगिकता परिलक्षित होती है। जहाँ एक ओर समाज में ''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः'' कहकर नारी की स्थिति को समाज में सम्माननीय माना गया है वहीं दूसरी ओर दुःख की बात यह है कि समाज में नारियों का जिन हाथों से पाणिग्रहण किया जाता है उन्हीं हाथों से उसका वध कर दिया जाता है–''प्रथमं कन्यादानम्, पश्चात् कन्यादहनम्, प्रथमं कन्यादानम्, पश्चात् कन्यादहनम् पूर्व वधूग्रहणम्, पश्चात् वधूदहनम्''।

3.6 बोधप्रश्न

1. प्रोफेसर हरिदत्तशर्मा द्वारा संस्कृत साहित्य को दिए गए अवदान को अपने शब्दों में लिखिए?
2. प्रस्तुत एकांकी में किस सामाजिक समस्या का वर्णन किया गया है? इससे समाज को क्या शिक्षा मिलती है?
3. प्रस्तुत एकांकी के पात्रों का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

इकाई–4 प्रो0 शिवजीउपाध्यायकृत 'यौतकम्'

इकाई–4 प्रो0 शिवजीउपाध्यायकृत 'यौतकम्'।

इकाई की रूपरेखा

उद्देश्य

4.1 कवि का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व

4.2 एकांकी की कथावस्तु

4.3 अभिनेयता

4.4 एकांकी का अनुवाद

4.5 एकांकी में युगबोध

4.6 बोधप्रश्न

उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई नाट्य काव्य या एकांकी पर आधारित है। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप–

1. प्रो0 शिवजी उपाध्याय के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व से परिचित हो सकेंगे।
2. उनके द्वारा लिखित एकांकी 'यौतकम्' की कथावस्तु और उसके अनुवाद को समझ सकेंगे।
3. एकांकी के युगबोध के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
4. प्रश्न उत्तर के माध्यम से कवि एवं उनकी रचना के विषय में अवगत हो सकेंगे।

4.1 कवि का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व

आचार्य शिवजी उपाध्याय का जन्म दि० 03.03.1943 ईशवीय वर्ष में ग्राम पण्डितपुर, मीरजापुर उ०प्र० में हुआ। स्वर्गीया श्रीमती राजेश्वरी देवी माता तथा स्वर्गीय पण्डित संकठा प्रसाद उपाध्याय पिता थे। वे मीरजापुर के संस्कृत महाविद्यालय वरियाघाट से मध्यमा परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण करके वाराणसी में (पूर्व वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय) सम्प्रति सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय से शास्त्री एवं आचार्य प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण कर, आचार्य में स्वर्णपदक प्राप्त करके विश्वविद्यालय में वर्ष 1975 में साहित्य–विभाग के प्राध्यापक पद पर नियुक्त हुए। आपका निधन 5 फरवरी 2021 को काशी में हुआ।

प्रो० उपाध्याय ने वेदान्त, सांख्य, मीमांसा, न्याय, साहित्य आदि विविध विषयों का अध्ययन तथा स्वाध्याय काशी में प्रख्यात गुरुजनों, विशेषकर स्व० म०म० पट्टाभिरामशास्त्री एवं कवितार्किकचक्रवर्ती काशी सुमेरुपीठाधीश्वर महेश्वरानन्द सरस्वती जो पूर्वाश्रम में आचार्य महादेवशास्त्री नाम से ख्यात एवं हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी में संस्कृत कालेज के प्राचार्य पद से सेवा मुक्त हुए थे, के सन्निधान में सम्पन्न किया। मीरजापुर संस्कृत महाविद्यालय

बरियाघाट के तत्कालीन प्राचार्य स्व० पं० सरयू प्रसाद उपाध्याय व्याकरण–वेदान्त–साहित्याचार्य से प्रो० उपाध्याय ने व्याकरण की सम्यक् शिक्षा ग्रहण की प्रथम गुरु स्व० सरयू प्रसाद उपाध्याय ही थे। संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेज़ी, पाली, प्राकृत आदि भाषा का अभिज्ञान प्रो० उपाध्याय ने किया है।

प्रथमा परीक्षा से आचार्य पर्यन्त सभी परीक्षाओं को प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण कर प्रो० उपाध्याय ने आठ अगस्त 1971 से जून 2003 तक सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय में शास्त्री कक्षा से आचार्य कक्षा पर्यन्त प्राध्यापक, उपाचार्य और अध्यक्ष के रूप में 32 (बत्तीस) वर्षों तक अध्यापन किया। लगभग 65 (पैंसठ) शोधच्छात्रों ने विद्यावारिधि (पी–एच0डी०) की उपाधि प्रो० उपाध्याय के निर्देशन में प्राप्त की है। शताधिक लेख और विशिष्ट शोध लेख तथा अन्य शास्त्रीय, सामाजिक विषयक लेख विविध पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं। प्रो० उपाध्याय जी के अन्यान्य काव्य, नाटकलक्षणग्रन्थ प्रकाशित हैं।

साहित्य तथा दर्शनों में सविधि तलस्पर्शी परिशीलन करके प्रो० उपाध्याय ने ''सर्वदर्शनविमर्शः'' स्वरचित एक हजार से अधिक कारिकाओं में (संस्कृतश्लोक) निर्मित एवं ''साहित्यसन्दर्भः'' स्वरचित कारिका–वृत्ति प्रणीत लक्षण ग्रन्थ का निर्माण किया है। ये दोनों ग्रन्थ क्रमशः दर्शन और साहित्य में प्रतिष्ठित हैं। इनके द्वारा रचित पाँच नाटक–ग्रन्थों का सङ्कलन **नाटयपञ्चरत्नम्** वाराणसी से प्रकाशित हुआ है, जिसमें निम्न पाँच एकांकी नाट्य रचनाएँ सङ्कलित हैं–

(1) यौतकम्–इसमें कन्या के विवाह के समय दिये जाने वाले दहेज की प्रथा की सामाजिक कुरीति पर कुठाराघात किया गया है। यह एकाङ्की नाटक है। (2) राष्ट्रगौरवम्–जिसमें भारतवर्ष के राष्ट्रगौरव की व्याख्या हुई है। यह भी एकाङ्की नाटक ही है। (3) कालकृतकम्–यह एक एकाङ्की नाटक है। (4) प्रतिभापलायनम्–सम्प्रति भारतवर्ष के अच्छे प्रतिभाशाली लोग धन की लालसा से विदेश का आश्रयण कर रहे हैं। इस समस्या का उजागर उक्त एकाङ्की में किया गया है। (5) स्वातन्त्र्यशौर्यम्–इसमें चन्द्रशेखर आजाद जैसे संस्कृ त छात्र की भारतमाता की स्वतन्त्रता के प्रति निष्ठा को व्यक्त किया गया है।

संस्कृत संस्थान, लखनऊ द्वारा कालिदास, महर्षि वाल्मीकि, विश्वभारती (वर्ष 2018) आदि अनेक पुरस्कार प्रो० उपाध्याय के अनेक ग्रन्थों पर प्राप्त हुए हैं। प्रो० उपाध्याय ने 2006 ईशवीय वर्ष में पूर्व स्व० राष्ट्रपति श्री अब्दुल कलाम के द्वारा आजीवन राष्ट्रपति सम्मान प्राप्त किया तथा 2012 ई० वर्ष में तिरुपति राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ (मानित विश्वविद्यालय) से ''महामहोपाध्याय'' सम्मानोपाधि प्राप्त की। प्रो० उपाध्याय ने वाराणसी में अपने आवास पर संस्कृत साहित्य के उन्नयन के लिये निरन्तर अध्ययन, अध्यापन, लेखन, काव्य–निर्माण आदि करते हुए काशी में अत्यन्त प्राचीन सुप्रसिद्ध श्रीकाशी विद्वत्परिषत् के महामन्त्री के दायित्व का निर्वहण भी किया।

इस प्रकार प्रो० शिवजी उपाध्याय उभयविध श्रव्य एवं दृश्य शैली में पारङ्गत होते हुए एक कुशल समीक्षक भी हैं।

4.2 एकांकी की कथावस्तु

प्रस्तुत एकांकी में चार दृश्य है। इसमें अन्य एकांकियों की तरह स्थापिका द्वारा नान्दीपाठ की योजना न करके प्रारम्भ में मंगलाचरण की योजना की गयी है। मंगलाचरण के पश्चात् यौतकदानव (दहेज रूपी दानव) को मंच पर प्रवेश कराकर यौतक (दहेज) को गम्भीर सामाजिक समस्या के भयावह परिणाम की सूचना उसके मुख से प्रस्तुत करा कर एकाङ्की रूपक की विषयवस्तु का संकेत किया गया है।

प्रथम एवं द्वितीय दृश्य में सत्यस्वरूप मिश्र के पुत्र सुधीर को एक अपरिचित व्यक्ति एक पत्र थमा कर कहता है कि इसे अपने पिता जी को दे देना। सुधीर उस पत्र को अपने पिता को देता है। सत्यस्वरूप मिश्र उस पत्र को पढ़ते ही अत्यन्त हताश और दुखी होते हैं, क्योंकि पत्र श्रीलम्बोदर त्रिपाठी का है जिसके पुत्र के साथ मिश्र जी की सुशिक्षित कन्या सुरुचि का विवाह स्थिर हुआ है। श्रीत्रिपाठी ने पत्र में दहेज की राशि तिलक के अवसर पर ही देने के लिए लिखा है, जबकि तय था कि विवाह के दिन द्वारपूजा पर देना है। मिश्र जी की पत्नी भी सुनकर दुःखी होती है और मध्यस्थ (घटक) के साथ उन्हें स्वयं जाकर त्रिपाठी से बात करने के लिए कहती है। दोनों जाते हैं, किन्तु विनय करने पर भी त्रिपाठी नहीं मानते और तिरस्कृत कर लौटा देते हैं। वे अपने मामा की सलाह पर कायम रहते हैं और कन्या पक्ष के वचन पर विश्वास नहीं करते। तिलक के आयोजन में मात्र एक दिन शेष है।

तृतीय दृश्य में दुःखी और निराश होकर चारपायी पर लेटे हुए श्रीसत्य स्वरूप मिश्र को घटक महोदय समाश्वस्त करते हैं। सारी घटना जानकर कन्या सुरुचि साहसपूर्वक दोनों के समक्ष आकर ऐसे दहेज–लोभी घर में अपना विवाह करने का निषेध करती है। वह कहती है कि मैं सारी परीक्षायें प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण करके एम0ए0 में पढ़ रही हूँ और वर महोदय बी.ए. मात्र उत्तीर्ण हैं। ऐसे घर में विवाह करने से अच्छा है कि में आजीवन कुमारी ही रहूँ। घटक महोदय कन्या के इस दृढ़ संकल्प की प्रशंसा करते हैं और उसके अनुरूप वर के अन्वेषण का आश्वासन देकर विदा होते हैं।

चतुर्थ एवम् अन्तिम दृश्य में श्री सत्यस्वरूप मित्र का ज्येष्ठ पुत्र जो प्रयाग में अध्ययनरत है, अपनी बहन के विवाह की सूचना पाकर घर आता है। परस्पर कुशलक्षेम के पश्चात् वह पिता को खिन्न देखकर कारण पूछता है तो पिता श्री मिश्र जी उससे निषेध पत्र न मिलने की बात पूछते हैं। इस पर उसकी जिज्ञासा के कारण पूर्व निश्चित सम्बन्ध के टूटने का वृत्तान्त अत्यन्त दुःखपूर्वक बताते हैं। माता सुशीला उसे आया हुआ देखकर प्रसन्न होती है। तीनों ही सुरुचि की विवाह–चिन्ता में वार्तालाप करते हैं कि सहसा घटक महोदय का आगमन होता है। वे सूचित करते हैं कि उन्हें अच्छे ब्राह्मण का प्रस्ताव प्राप्त हुआ है जो अपने आई.ए.एस. लड़के के लिए सुरुचि का हाथ माँग रहे हैं और यह विवाह दहेजरहित होगा। अतः पूर्व में विवाह के आयोजन की जो तिथियाँ निर्धारित हैं, उन्हीं तिथियों में सारा वैवाहिक अनुष्ठान सम्पन्न होगा। इसी समय सुरुचि और सुधीर भी विद्यालय से आते हैं। सभी लोग प्रहर्षित होते है और सुशीला (मिश्र जी की धर्मपत्नी) सबका मुँह मीठा कराती है।

4.3 अभिनेयता

प्रस्तुत एकाङ्की (दहेज जैसी) सामाजिक–समस्या–प्रधान रूपक है जो सर्वथा अभिनेय है।

प्रस्तुत एकांकी प्रख्यात सामाजिक समस्या पर लिखित है। इसमें पुरुष पात्रों के साथ ही नारी पात्रों की भी प्रभावी भूमिका है। प्रथम तीन दृश्यों में वस्तु दुःखात्मक है, किन्तु चतुर्थ दृश्य में अद्भुत रस की योजना करके एकाङ्की को सुखान्त बनाया गया है।

4.4 एकांकी का अनुवाद

यौतकम्

मङ्गलाचरणम्

विश्वबीजप्ररोहार्थं, मूलाधारतया स्थितम् ।
धर्तृशक्तिमयं वन्दे, धरणीरूपमीश्वरम् ।।1।।

नमोऽस्तु सर्वदेवेभ्यः प्रजाभ्यश्च शुभं तथा।
जितसत्येन राष्ट्रेण शिवं गोसंस्कृताय च।।2।।

राष्ट्रं प्रवर्धतां चैव रङ्गश्चायं समृद्धयताम्।
नाट्येनानेन रङ्गस्थाः प्रीयन्तां सर्वमानवाः।।3।।

आङ्गिकं भुवनं यस्य वाचिकं सर्ववाङ्मयम्।
आहार्यं चन्द्रतारादि तं नुमः सात्त्विकं शिवम्।।4।।

विश्वबीज के प्ररोह के लिये (उत्पत्ति के लिए) जो मूल आधार के रूप में स्थित है, धर्तृशक्तिमय उस धरणी रूप ईश्वर की मैं वन्दना करता हूँ।

सभी देवों के लिये नमस्कार है, तथा प्रजाओं के लिये शुभ हो, सत्य को जीतने वाले राष्ट्र से गौ (धेनु, पृथ्वी, वाणी) और संस्कृत–भाषा का कल्याण हो।

भारतराष्ट्र निरन्तर वृद्धिशील हो (उन्नति पथ पर अग्रसर हो) और यह रङ्ग (नाट्यमञ्च) समृद्ध हो एवं इस नाट्यप्रयोग से रङ्गस्थल में विद्यमान नाट्यप्रेमी सहृदय–जन सभी मानव प्रसन्न हों।

समग्र भुवन (सम्पूर्ण विश्व) जिसका आङ्गिक समाहार है और समस्तवाङ्मय जिसका वाचिक विलास है तथा चन्द्रतारकादि जिसके आहार्य हैं–उस सात्त्विक शिव को हम प्रणाम करते हैं–अर्थात् उसके प्रति हम सभी प्रणत हैं।

(मङ्गलाचरणानन्तरं यौतकदानवप्रवेशः)

यौतकदानवः–(अत्युच्चाट्टहासं कुर्वन्)

हा! हा!! हा!!!.....ननु कोऽहं कोऽहं भोः! सावधानं श्रूयताम्–

व्यादाय वक्त्रं परितोऽपि कन्याः

कुमारिकाः क्लेशयितुं प्रवृत्तः।

तासां जगत्यां विपदेकहेतुः,

केतुः कलेर्यौतकदानवोऽहम्।।

हा! हा !! हा!!!.....(इति दीर्घकालं प्रहसति)

यौतक–दानव–(मङ्गलाचरण के पश्चात् यौतक दानव का प्रवेश) (अत्युच्च अट्टहास करता हुआ–हा हा!!हा!!!...ओ मनुष्यो! मैं कौन हूँ? सावधान होकर तुम लोग सुनो मैं कौन हूँ?–

अपने विशाल वक्त्र को (मुख को) फाड़कर चारों ओर से संसार में कुमारी कन्याओं को पीड़ित करने के लिए (हर प्रकार का क्लेश देने के लिये) मैं प्रवृत्त हूँ तथा संसार में उन कुमारी कन्याओं के माता–पिता की विपत्ति (दुःख) का एकमात्र हेतु (कारण) एवं इस कलियुग का केतु (ध्वज) हूँ। मैं प्रबल पराक्रमी दहेज–दानव हूँ।

यौतकं ननु सर्वस्वं यौतकं मानमूलकम्।

यौतकं कन्यकाशूलं यौतकं वरमूल्यकम्।।1।।

इस समय यौतक (दहेज) ही सर्वस्व है, यौतक ही सम्मान का मूल है, यौतक कुमारी कन्याओं का शूल है और यौतक वर का मूल्य है।

विक्रीयते ननु वरो बहुयौतकेन,

सम्प्रत्यनेकजनकैरनिशं यदत्र।

धिक् तं विधिं परिणयं च तथेदृशं धिक्,

धिक् कन्यकाहृदयकीलकयौतकं तत्।।2।।

सम्प्रति अनेक पिता अधिकतर दहेज से इस देश में जो अपने वर (पुत्र) को बेच रहे हैं– उस विधि (नियम, परम्परा) को धिक्कार है, तथा इस प्रकार के परिणय (विवाह–सम्बन्ध) को भी धिक्कार है और कन्याओं के हृदय के कीलक (पीड़ादायकशूल) उस यौतक (दहेज) को भी धिक्कार है।

प्रथमं दृश्यम्

(स्थानम्–कस्यचिन्मध्यमवित्तस्य गृहम्)

समयः –पूर्वाह्णः। कश्चिद् द्वादशवर्षीयो बालः प्रविशति, आसनस्थस्तत्पिता च)

(प्रथम दृश्य)

(स्थान–किसी मध्यमवित्तीय व्यक्ति का घर।

समय–पूर्वाह्ण। कोई बारह वर्ष का बालक प्रवेश करता है, उसका पिता बैठा है।)

बालकः – (पितरमुपेत्य) तात! गोपनीयं पत्रमिदं भवन्नामाङ्कितं कश्चिन्नितान्तम् अपरिचितो जनो मदन्तिकं शनकैः समुपेत्य मह्यं प्रदाय च प्रतिनिवृत्तः। मया बहुशः पृष्टोऽपि सः 'पित्रे पत्रकं देयम्' इत्युक्त्वा झटिति प्रस्थितः।

बालक– (पिता के पास आकर) पिता जी! यह आपके नाम का गोपनीय पत्र कोई नितान्त अपरिचित व्यक्ति धीरे से मेरे पास आकर और मुझे देकर चला गया। मेरे बहुत पूछने पर भी वह 'यह पत्र अपने पिता जी को दे देना' यह कहकर शीघ्रता से चला गया।

पिता– एहि वत्स। एहि, देहि तत्पत्रम्, कीदृशं तत्? केन दत्तम्? तेन स्वकीयः परिचयः कथं न प्रदत्तः? किमत्राकूतम्? (उपरि संवीक्ष्य निःश्वस्य च) हन्त! देव! सर्वं सुखकरं सम्पद्येत। किमपि दुःखकरं न स्यात्। (वामाक्षिस्पन्दनं सूचयित्वा, पाणिभ्यां वक्षः संस्पृश्य, नेत्रे निमील्य च) भगवन् विधातः! कुशले विमुखेन त्वया न भवितव्यमिति भूयसा प्रार्थये। मम शिरसः कन्यकाभारः प्रतिसारणीयः। तत्र कश्चिद् विघ्नलेशो नापतेत्।

पिता– आओ बेटा। आओ, वह पत्र दो, कैसा है वह पत्र? किसने दिया है? उसने अपना परिचय क्यों नहीं दिया? इसमें क्या रहस्य है? (ऊपर देखकर और दीर्घ श्वास लेकर) हे दैव! सब सुखकर ही सम्पन्न हो, कुछ दुःखकर न हो। (वामनेत्र के स्फुरण का संकेत कर, दोनों हाँथ से वक्षःस्थल का स्पर्श कर और नेत्रों को निमीलित कर) भगवन् विधाता! कुशल–कार्य में तुम विमुख न होना–यह बार–बार प्रार्थना कर रहा हूँ। मेरे शिर से कन्या का भार दूर करना है। इसमें कोई विघ्न न पड़े।

बालकः– पितः! कथमेवं भवान् अन्यथा शङ्कते? मन्ये सुरुचिभगिन्या स्नेहातिशयाद् अन्यथाऽऽशङ्कि भवदीयं मनः–इति पितुः पाणौ पत्रमर्पयति)

बालक– पिताजी! आप क्यों इस प्रकार अन्यथा शङ्का कर रहे हैं। सुरुचि बहन में अधिक स्नेह के कारण आपका मन प्रतिकूल आशङ्कित हो रहा है। (पिता के हाथ में पत्र देता है।)

पिता– (पत्रमादाय वाचयति)

"श्रीमन्! सत्यस्वरूपमिश्रमहोदय!

कुशलानन्तरं सप्रणाममिदं निवेद्यते तिलकोत्सवो विधेयश्चेत्तदा तदवसर एव सम्पूर्णं पूर्वतो निश्चितं यौतकं प्रदेयम्। मासावधिर्न मर्षणीय इति मन्मातुलस्याभिमतोऽभिप्रायः। मया तु 'पश्चाद् देयम्' इति भवद्वचनं ऋजुस्वभावात् स्वीकृतम्, किन्तु सम्बन्धिजनो विरुध्यतीति मदीयां द्वार–प्रतिष्ठां परिरक्षतु भवान् अन्यथा गृहान्तरम्.......।

भवदीयः

लम्बोदर त्रिपाठी

पिता– (पत्र लेकर पढ़ता है)

श्रीमान् सत्यस्वरूपमिश्र महोदय!

कुशल के पश्चात् प्रणामपूर्वक यह निवेदन है कि यदि तिलकोत्सव करना है तो उसी समय पहले से निश्चित सम्पूर्ण दहेज की द्रव्य–राशि देनी होगी। एक मास की अवधि तक प्रतीक्षा नहीं की जायेगी–यह मेरे मामा जी का अभिमत है। मैंने तो 'बाद में दीजियेगा' यह आपका वचन सरलस्वभाव के कारण स्वीकार कर लिया था, किन्तु सम्बन्धी जन विरोध कर रहे हैं, इसलिये मेरे द्वार की प्रतिष्ठा की आप रक्षा करें, अन्यथा दूसरा घर........।

आपका

लम्बोदर त्रिपाठी

बालकः– **(पत्रं पाणिभ्यां वक्षसि निदधानं दीर्घं निःश्वसन्तं मूर्च्छितुमिव चेष्टमानं पितरं समाश्वासयन्) पितः! समाश्वसितु भवान्। किमस्ति? कस्य पत्रमिदम्? कथं ग्लायति? सुरुचिभगिन्याः श्व एव तिलकोत्सवः, तदर्थमस्माभिः सज्जीभूय गन्तव्यम्। तदद्य को नु प्रत्यूहः? को वा क्लेशः समापतितो येन खिद्यते भवान्?**

बालक– (हाथ से पत्र को सीने पर रखते हुए, दीर्घ निःश्वास लेते हुए, मूर्च्छित से होते हुए पिता को समाश्वस्त करता हुआ।)

पिताजी! आप आश्वस्त हों। क्या है? यह किसका पत्र है? आप क्यों खिन्न हो रहे हैं? सुरुचि बहन का कल ही तिलकोत्सव है, उसके लिये हम लोगों को तैयार होकर जाना है, तो आज कौन विघ्न आ गया? अथवा कौन कलेश आ पड़ा–जिससे आप खिन्न हो रहे हैं?

पिता– वत्स! त्वमनभिज्ञोऽसि एतद्विषयस्य। गच्छ, स्वमातरं मत्सकाशे प्रेषय। (बालको निष्क्रान्तः)। दीर्घं निःश्वस्य)–

धातः! कथं नु तनया धनहीनगेहे,
सन्दीयते जगति दुःखशतानि सोढुम्।
कन्या भवेद् यदि तदा तु भवेत्समृद्धिः,
नो चेत्सुताविरहिताः पितरो भवेयुः।।3।।

(प्रविशन्तीं पत्नीं सशोकं वीक्ष्य) सुरुच्यम्ब! सुशीले! लम्बोदरत्रिपाठी सर्वं निश्चित्य स्वीकृत्य च स्वमातुलवचनात् सम्पूर्णं यौतकद्रव्यराशिं तिलकावसर एव याचते। मासावधिस्तत्प्रतिष्ठां बाधते।)

पिता– पुत्र! तुम इस विषय के अनभिज्ञ हो। जाओ, अपनी माँ को मेरे पास भेज दो। (दीर्घ निःश्वास लेकर)

हे विधाता! धनहीन के घर में सैकड़ों दुःख सहने के लिये कन्या क्यों देते हो? यदि कन्या हो तो धन–समृद्धि हो, नहीं तो सभी पिता कन्यारहित ही हों।

(प्रवेश करती हुई पत्नी को शोकपूर्वक देखकर)

सुरुचि की माँ! सुशीला! लम्बोदर त्रिपाठी सब निश्चित करके और स्वीकार करके अपने मामा के कहने से सम्पूर्ण दहेज की द्रव्यराशि तिलक के अवसर पर ही माँग रहे हैं। एक मास की अवधि उनकी प्रतिष्ठा में बाधक बन रही है।

सुशीला— **(ससम्भ्रमं विस्मयं नाटयन्ती) तत् किन्नु करणीयम्? (किञ्चिद् विमृश्य) भोः! अत्र घटकः प्रष्टव्यः। तेन संगत्य परामृश्य च तत्र भवता किमपि निश्चेतव्यम्।**

सुशीला— (घबरा कर आश्चर्य प्रकट करती हुई) तो क्या करना चाहिए? (कुछ सोचकर) हाँ, इस विषय में घटक (अगुआ) से पूछना चाहिए। उनसे मिलकर और परामर्श करके आप कुछ निश्चय करें।

पिता— **निश्चयकाले तेन घटकस्य सकलग्रामजनस्य च समक्षमङ्गीकृतम्। कन्यावलोकनकालेऽपि तद्रूपगुणादिप्रशंसा भूरिशः कृता। तिलका— नन्तरं विवाहस्य मासावधिर्दत्तः। विवाहे द्वारचारसमये यौतकद्रव्यराशेः प्रदानपणबन्धः स्वयमेव स्थिरीकृतः। तदा तत्र तन्मातुलोऽप्यासीत्। इदानीमेवं प्रतिकूलं वक्ति। सर्वः सम्रारम्भो जातः। किं प्रतिविधेयमिति निश्चेतुं न शक्यते। वराको घटकोऽपि किमत्र प्रतिकर्तुं शक्ष्यतीति न जाने। देव! त्वमेव शरणम्। (दीर्घं निःश्वसति)**

पिता— निश्चय के समय उन्होंने घटक के और सभी ग्रामजनों के समक्ष स्वीकार किया था। कन्या देखने के समय भी उसके रूप, गुण की खूब प्रशंसा की थी। तिलक के अनन्तर विवाह के लिये एकमास की अवधि दी थी। विवाह में द्वारचार के समय दहेज की द्रव्यराशि प्रदान करने का पणबन्ध (शर्त) स्वयं स्थिर किया था। उस समय उनके मामा भी वहाँ थे। अब इस प्रकार प्रतिकूल बोल रहे हैं। सब कुछ बुरा आरम्भ हो गया। क्या निराकरण करें यह तय नहीं कर पा रहे। बेचारा घटक (अगुआ) भी इसमें क्या प्रतिकार कर सकेगा? यह में नहीं जान पा रहा हूँ। हे दैव! अब तुम्हीं एकमात्र शरण हो।

सुशीला— **(समाश्वासयन्ती) ननु भवान् स्वयं घटकेन सह तत्र गच्छतु। सर्वथा अन्यथैव न चिन्तनीयम्। मन्ये मध्ये केनापि वञ्चकेन भवितव्यम्। नैके कन्यकाजनमक्षिकापहारिणो भवन्ति। यतश्च—**

अहेतुकं कौतुकमाचरन्तः,
सुसिद्धकार्यं प्रतिरोधयन्तः।
वृथा नराकारधराः खलास्ते,
सर्वत्र कीटा इव पर्यटन्ति।।4।।

सुशीला— (आश्वासन देती हुई) आप स्वयं घटक (अगुआ) के साथ वहाँ जाइये। सदैव अन्यथा ही नहीं सोचना चाहिये। मुझे लगता है बीच में कोई धोखेबाज हो सकता है। बहुत से लोग कन्या जनों की मक्खी हटाने वाले होते है। क्योंकि—

बिना कारण ही बीच में पड़कर कौतुक (कुटिलतापूर्ण क्रीडा) करते हुए, भलीभांति सिद्धकार्य में भी प्रतिरोध उत्पन्न करते हुए, व्यर्थ ही मानव के आकार को धारण करने वाले वे खल (दुष्ट जन) सर्वत्र कीड़े की तरह (मशक आदि कीड़े के समान) पर्यटन करते रहते हैं।

पिता– **(उष्णं निःश्वस्य) सुरुच्यम्ब! त्वद्वचनानुकूलं सर्वं विधातुं प्रयते। घटकमद्यैव साक्षात्करिष्ये। किन्तु मनो मे अन्यथा शङ्कते। किं करवाणि? क्व यामि? कं नु शरणं याचे? हा! दैव!**

कन्या रूपगुणैर्युक्ता स्वानुरूपं वरं विना।

क्लेशमाप्नोति हा! हन्त!! यौतकद्रव्यमन्तरा ।।5।।

पिता– (उष्ण निःश्वास लेकर) सुरुचि की माँ। तुम्हारे कथनानुसार सब करने का प्रयन्त करूँगा। आज ही घटक (अगुआ) से मिलूँगा। किन्तु मेरा मन कुछ अन्यथां ही सशङ्क हो रहा है। क्या करूँ? कहाँ जाऊँ? किसके शरण की याचना करूँ? हे दैव! रूप और गुणों से युक्त कन्या अपने अनुरूप वर के विना तथा दहेज की द्रव्यराशि के अभाव में क्लेश प्राप्त कर रही है। यह परम दुःखास्पद है।

(इस प्रकार दोनों निकल जाते हैं)

'पटाक्षेप'

।। प्रथम दृश्य समाप्त ।।

द्वितीयं दृश्यम्

(स्थानम्–लम्बोदरत्रिपाठिनो गृहम्। सत्यस्वरूपमिश्रः (कन्यापिता) घटकेन सह प्रविशति। सगर्वमासनस्थो लम्बोदर–त्रिपाठी किमपि पठन्नास्ते।)

घटकः – **त्रिपाठिप्रवर! प्रणामोऽस्तु। केनापि अपरिचितेन पुरुषेण प्रदत्तं मुधापवादगर्भमेकं पत्रमधिगतमस्माभिः। तच्च भवताऽप्यक्षिलक्ष्यी– कर्तव्यमिति बुद्ध्या इहैवानीतम्।**

(इति पत्रमुन्मोच्य तस्मै अर्पयति)

(स्थान–लम्बोदरत्रिपाठी का घर। सत्यस्वरूपमिश्र (कन्या के पिता) घटक (अगुआ) के साथ प्रवेश करते हैं। लम्बोदर त्रिपाठी गर्वोन्मत्त आसन (कुर्सी) पर बैठे हुए कुछ (समाचार पत्र आदि) पढ़ रहे हैं।

घटक– त्रिपाठी प्रवर! प्रणाम। किसी अपरिचित व्यक्ति के द्वारा दिया हुआ, मिथ्या अपवाद से भरा हुआ एक पत्र हम लोगों ने प्राप्त किया है। वह आप स्वयं अपनी आँखों से देख लें–इस बुद्धि से यहीं लेता आया हूँ।

(पत्र खोलकर उन्हें (लम्बोदर त्रिपाठी को) देते हैं।)

लम्बोदरत्रिपाठी–(सगर्वं किञ्चिद विहस्य सकटाक्षमीक्षमाणः) घटकप्रवर! नेदं मुधापवादगर्भं पत्रमिति मन्तव्यम्। वास्तविकं तत्। मयैव प्रहितं भवदक्षिलक्ष्यीकरणाय। मह्यं तदर्पणेन किं स्यात्? तदनुकूलमनुष्ठीयताम्। उच्चस्तरीयः सम्बन्धः केवलं सुमधुरवचनैर्निर्मूल्यकं न सम्पद्यते। (इत्युपहसति)

लम्बोदर त्रिपाठी–(गर्वसहित कुछ मुस्कुराकर, कटाक्ष से देखते हुए) घटकप्रवर! यह मिथ्या अपवाद से भरा हुआ पत्र है, यह मत सोचिये। यह वास्तविक पत्र है। आपको देखने के लिये मैंने ही भेजा है। मुझे यह देने से क्या होगा? उसके अनुकूल आचरण करिये। उच्चस्तर का सम्बन्ध केवल सुमधुरवचनों से बिना मूल्य के सम्पन्न नहीं होता। (इस प्रकार उपहास करते हैं।)

घटकः – श्रीमन्! क्षेत्रेऽस्मिन् सर्वप्रतिष्ठितो भवान् कथं स्ववचनात् प्रतिकूलं गच्छति?

घटकः – श्रीमान्! इस क्षेत्र में आप सर्वाधिक प्रतिष्ठित हैं। अपने वचन से प्रतिकूल क्यों जा रहे हैं?

लम्बोदरत्रिपाठी–(सस्मितं विशालमुदरं हस्तेन परामृशन्) हा! हा!! हा!!! भोः। मया तु ऋजुस्वभावात् स्वीकृतमेव, यथा कथयति भवान् मघुरमधुरं तथैव विश्वासो विहितः । हुं! भोः! भवन्तस्तु कन्योद्वाहकलाकुशलाः सन्ति। परन्तु मम मातुलोऽपि नास्ति न्यूनः, सोऽपि परिणय–काण्डपण्डितः। अतो न मन्यते। स ब्रवीति–'कन्यापक्षीया न सर्वथा विश्वासयोग्याः' इति।

लम्बोदरत्रिपाठी–(मुस्कुराते हुए, विशाल उदर (तोंद) को हाँथ से सहलाते हुए) हा! हा.!! हा!!!....! अरे, जी! मैंने तो सरलस्वभाव के कारण स्वीकार कर ही लिया था। हूँ...। भाई, आपलोग तो कन्या के विवाह की कला में बड़े कुशल हैं। परतु मेरे मामा जी भी कम नहीं हैं। वे भी परिणयकाण्ड के पण्डित हैं। इसलिए वे नहीं मान रहे हैं। उनका कहना है कि–'कन्यापक्ष के लोग कभी विश्वास के योग्य नहीं होते हैं।'

घटकः – परं सत्यस्वरूपमिश्रोऽयं न तादृशो मन्तव्यः। नामानुरूपं कार्यमस्य सर्वैः प्रशस्यते। एष सर्वथा विश्वासयोग्यः।

घटक– किन्तु सत्यस्वरूपमिश्र को आप वैसा न समझिये। नाम के अनुरूप इनके कार्य की सभी प्रशंसा करते हैं। यह सर्वथा विश्वास के योग्य हैं।

लम्बोदरत्रिपाठी–तर्हि तिलककाल एव पूर्वतो निश्चितं निखिलं यौतकं देयम्। तत्र का विप्रतिपत्तिः? प्रतिष्ठाप्रश्नोऽयम्। हा! हा!! हा!!!...। ननु भोः! सत्यस्वरूपमिश्र!

नाम्नैव सत्यं नु भवत्स्वरुपं,
यथार्थतः सत्यमिदं करोतु।
न यौतकद्रव्यमृते ममाग्रे,
विवाहवार्ता भवता विधेया ।।6।।

लम्बोदर त्रिपाठी–तो तिलक के समय पर ही पहले से निश्चित की गयी सम्पूर्ण दहेज की द्रव्यराशि दे दीजिये। इसमें क्या आपत्ति है? यह मेरी प्रतिष्ठा का प्रश्न है। हा!हा!!हा!!!...! क्यों जी, सत्यस्वरूप मिश्र!– केवल नाम से ही आप सत्यस्वरूप हैं? इसे यथार्थरूप में सत्य प्रमाणित कीजिए। सुन लीजिये–दहेज की द्रव्यराशि के विना मेरे सामने आप लोग विवाह की कोई बात न करें।

सत्यस्वरूपमिश्रः –(निरीहं सकरुणमुष्णं निःश्वस्य) त्रिपाठिमहाशय! इदानीमहं सेवामुक्तः संवृत्तोऽस्मि। मासाभ्यन्तर एव मम भविष्यनिधिर्लप्स्यते। ततो निखिलं यौतकं दास्यते। शरणं प्राप्तोऽयं जनः स्वीकरणीयः। स्ववचनान्न स्खलितो भविष्यामि। मान्यवर! मां परित्रायताम्, क्वान्यत्र यामि श्रीमन्तमपहाय? (इति पादयोः पतति)

सत्यस्वरूप मिश्र–(निरीह करुणापूर्ण उष्ण श्वास लेकर) त्रिपाठी महाशय। इस समय मैं सेवामुक्त हो गया हूँ। एक मास के पूर्व ही मेरी भविष्यनिधि मिल जायेगी। उसके बाद में सम्पूर्ण दहेज की द्रव्यराशि दे दूँगा। मैं आपके शरण में आया हूँ, मुझे स्वीकार करें। अपने वचन से मैं प्रतिकूल नहीं जाऊँगा। मान्यवर! मेरी रक्षा कीजिये। आपको छोड़कर अब मैं अन्यत्र कहाँ जाऊँ? (इस प्रकार पैरों पर गिर पड़ते हैं।)

लम्बोदरत्रिपाठी–(सगर्वं विहस्य पादौ अपसार्य च) अलमलं विनयप्रदर्शनेन। यदि मत्प्रतिष्ठाऽनुकूलं कर्तुं न शक्यते, तत्कथं पणबन्धः कृतः? भविष्यनिधेः का किलाशा मासाभ्यन्तरप्राप्तेः? तथाप्यहं तु ऋजुस्वभावादनुकूल एव, मम मातुलोऽनुनेयः। (सोपहासं घटकं विलोक्य) किं भोः घटकप्रवर! भविष्यनिधिनिर्भरः कन्याविवाहविधिरिति श्लाघ्यः प्रयासः। भवानपि घोटक इव घटक इति प्रत्येमि। कश्चिदन्यो वञ्चनीयः, न मे केशा घर्मे श्वेताः सञ्जाताः। गच्छतां भवन्तौ, द्वारान्तरं पश्यताम्। हूँ......हा! हा!! हा!!!.....।

लम्बोदर त्रिपाठी–(सगर्व हँसकर और पैरों को दूर हटाकर) बस, बस, विनय का प्रदर्शन मत कीजिये। यदि मेरे प्रतिष्ठा के अनुकूल नहीं कर सकते, तो क्यों प्रतिज्ञा की थी? भविष्यनिधि की क्या आशा है कि एक मास में ही मिल जायेगी? फिर भी मैं तो सरलस्वभाव के कारण अनुकूल ही हूँ, मेरे मामाजी को मनाइये। (उपहासपूर्वक–घटक को देखकर) क्यों जी! घटक! (अगुआ महोदय!) कन्या का विवाह भविष्यनिधि पर निर्भर है? यह प्रयास प्रशंसनीय है। आप भी घोटक (घोड़े) के समान घटक प्रतीत हो रहे हैं। किसी दूसरे को ठगिये (धोखा दीजिये) मेरे बाल घाम (धूप) में सफेद नहीं हुए हैं। आप लोग जाइये, दूसरा द्वार (दरवाजा) देखिये। हूँ.....हा! हा!!हा!!! .....।

घटकः –(सकष्टं निःश्वस्य) श्व एव तिलकोत्सवदिनम्। अद्य परिहासपूर्वकं भवान् प्रतिकूलं वदति, किमेतदुचितम्?

घटक–(कष्ट से श्वास लेकर) कल ही तिलकोत्सव का दिन है। आज आप उपहासपूर्वक (मजाक करके) प्रतिकूल बोल रहे हैं–क्या यह उचित है?

लम्बोदरत्रिपाठी–(साम्रेडं हुङ्कृत्य) तत् किमुचितम्? प्रतिष्ठां विक्रीय नैकमात्रपुत्रस्य विवाहो ममाभीष्टः। मातुलः सत्यं ब्रवीति–'विवाहेऽस्मिन् स्वीकृते कन्यापक्षीयैः प्रतारितो भविष्यसि त्वम्।' शिक्षिता, रूपगुणसम्पन्ना, कुलजा कन्यकेति कृत्वा वरो न वञ्चनीयो भवति।

यतो हि–

बी०ए० कक्षां समुत्तीर्य क्लर्को भवितुमिच्छुकः।

सुतो मेऽमूल्य एवास्ति न हातव्योऽल्पराशिना।।7।।

लम्बोदर त्रिपाठी (क्रोध और गर्व सहित हुङ्कार करके) तो क्या उचित है? अपनी प्रतिष्ठा को बेचकर एकमात्र पुत्र का विवाह मुझे अभीष्ट नहीं है। मामाजी सत्य कह रहे थे–इस विवाह को स्वीकार करने पर कन्या पक्ष के लोगों द्वारा ठगे जाओगे। कन्या शिक्षित है, रूप और गुणों से सम्पन्न है तथा उत्तमकुल में उत्पन्न हुई है–इससे वर को नहीं ठगा जा सकता। क्योंकि–

बी०ए० कक्षा को उत्तीर्ण करके क्लर्क (बाबू) होने (बनने) के लिये इच्छुक (उद्यत) मेरा पुत्र अमूल्य है। उसको में अल्प द्रव्यराशि से व्याहने के लिए नहीं छोड़ सकता।

घटकः– (किञ्चिद् विमृश्य) एष भवदीयोऽन्तिमो निर्णयो निश्चयश्च।

घटक– (कुछ सोचकर) यह आपका अन्तिम निर्णय और निश्चय है?

लम्बोदर त्रिपाठी–अथ किम्? भविष्यनिधिर्भविष्यद्गर्भस्थितो यथा तथैव मम निर्णयोऽपि ज्ञेयः।

भविष्यति यदा पार्श्वे भविष्यनिधिजं धनम्।

भविष्यति तदा कन्याविवाहोऽपि भविष्यति।।8।।

हा! हा !! हा!!!.....(इत्युपहसनिष्क्रान्तः सत्यस्वरूपमिश्रोऽपि घटकेन सह सखेदं निष्क्रान्तः)।

(पटाक्षेपः)

इति द्वितीयं दृश्यम्

लम्बोदर त्रिपाठी–तो और क्या? भविष्यनिधि जैसे भविष्य के गर्भ में स्थित हैं, वैसे ही हमारे निर्णय को भी जानिये। जब आपके पास भविष्यनिधि का धन होगा तब भविष्य में कन्या का विवाह भी हो जायेगा। हा! हा!! हा!!!......

(इस प्रकार उपहास करते हुए निकल जाते हैं। सत्यस्वरूपमिश्र भी घटक के साथ खिन्न होकर निकल जाते हैं)।

(पटाक्षेप)

।। द्वितीय दृश्य समाप्त।।

तृतीयं दृश्यम्

(स्थानम्–सत्यस्वरूपमिश्रस्य गृहम्। सत्यस्वरूपमिश्रो निजेऽतिथिकक्षे खट्वायां निश्चेष्टमान इव शयानः प्रविशति। तं समाश्वासयन् घटक आसनान्तरमधितिष्ठति)

(स्थान—सत्यस्वरूपमिश्र का घर। सत्यस्वरूपमिश्र अपने अतिथिकक्ष में खाट पर निश्चेष्ट से लेटे हुए प्रवेश करते हैं। उनको आश्वस्त करते हुए घटक (अगुआ) अन्य आसन (कुर्सी) पर बैठे हुए हैं।)

सुशीला—(प्रविश्य पतिमवलोक्य च ससम्भ्रमम्) सुरुचिपितः। कथमतितरां खिन्नो भवान्? कुतो नु असमये खट्वामधिशयानो म्लानिमुपगच्छति? (घटकं विलोक्य) श्रीमन्! किं जातम्? किञ्चिदन्यथा आपतितम्? को हेतुरत्र? न किमपि गोपायतु, सर्वं सत्यं ब्रवीतु श्रीमान्।

सुशीला— (प्रवेश करके और घबराहट से पति को देखकर) सुरुचि के पिता! क्यों आप अत्यन्त खिन्न हैं? असमय में खाट पर लेटकर क्यों दुःखम्लान हैं? (घटक को देखकर) श्रीमन्। क्या हुआ? क्या कुछ प्रतिकूल हो गया इसमें? आप कुछ भी न छिपायें, आप सब कुछ मुझसे सत्य कहें।

घटकः — (सनिःश्वासम्) देवि! लम्बोदरत्रिपाठिना सोपहासमावां तिरस्कृतौ। सम्पूर्णं यौतकं विना विवाहो नाङ्गीक्रियते।

घटक— (दीर्घ श्वास लेकर) देवि! लम्बोदरत्रिपाठी ने उपहास करके हम लोगों को तिरस्कृत कर दिया। सम्पूर्ण दहेज के बिना विवाह नहीं स्वीकार कर रहे हैं।

सुशीला— (सखेदं रुदतीव किञ्चित्तारस्वरेण) हा! हन्त!! दैव!!! किं स्यादतः परम्? तिलकार्थमखिलं सामग्रीजातं सम्पन्नम्, सम्बन्धिनोऽप्यामन्त्रिताः किं विधेयमधुना? क्व मुखं दर्शयिष्यामि? क्वचित् किं नु वक्ष्यामि? (सोरस्ताडम्) उरो मे झटिति विदीर्णमस्तु। (इति बाष्पं विसृजति)

सुशीला— (खिन्न होकर रोती हुई कुछ ऊँचे स्वर से) हा! दैव!! अब क्या होगा? तिलक के लिये सब सामग्री (सामान) तैयार है। सम्बन्धी जन भी आमन्त्रित किये जा चुके हैं। अब क्या करूँ? कहाँ मुख दिखाऊँगी? कहाँ क्या कहूँगी? (छाती पीटकर) मेरी छाती फट जाय। (इस प्रकार आँसू बहाती है)।

सुरुचिः— (सत्वरं प्रविश्य सोत्साहम्) मातः! पितः!! कन्येति कृत्वा भवन्तौ भारमनुभूय स्वात्मानं मैवं क्लेशयताम्। यौतकप्रियस्य तस्य पुत्रविक्रेतुर्गृहे ममोद्वाहश्चेत् स्यात्तदा नूनमहं स्वप्राणान् त्यक्ष्यामि। सर्वाः परीक्षाः प्रथमश्रेण्यामुत्तीर्य साऽहं एम०ए० कक्षायां पठामि। मदपेक्षया तदीयः पुत्रः सर्वथा अयोग्यः। नाहं कदाचिदपि भवत्समक्षं किमप्युक्तवती, तथापि कालोऽयं नास्ति मौनावलम्बनस्य। पुत्रवन्मां ज्ञात्वा न खेदमनुभवतां भवन्तौ। अहं तावन्नो पाणिं ग्राहयिष्यामि यावद् यौतकं दातव्यमिति मे सुदृढा प्रतिज्ञा।

सुरुचि— (शीघ्रता से प्रवेश कर सोत्साह) माताजी! पिता जी!! लड़की समझकर और भार मानकर आप लोग अपने को दुःखी न करें। दहेज के लोभी बेटे को बेचने वाले उनके घर यदि मेरा विवाह हुआ तो निश्चित मैं अपना प्राण त्याग दूँगी। सभी परीक्षाओं को प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण कर मैं एम०ए० कक्षा में पढ़ रही हूँ। मेरी अपेक्षा उनका पुत्र सर्वथा अयोग्य है। मैंने आप लोगों के सामने कभी कुछ नहीं कहा, किन्तु यह मौन रहने का समय नहीं है। पुत्र के समान मुझको मानकर आप लोग खिन्न न हों। मैं तब तक विवाह नहीं करूँगी जब तक दहेज देना होगा—यह मेरी दृढ़ प्रतिज्ञा है।

घटकः— (सोल्लासं कन्यां विलोकयन् हस्तमेकमुद्यम्य) धन्यासि वत्से धन्यासि। सत्यं ब्रवीषि। तवानुरूपः सर्वथा नास्ति त्रिपाठिपुत्रः, तथापि तं विक्रेतुकामोऽसौ प्रकामं द्रव्यं ग्रहीतुमिच्छति। तव पिता दातुमपि स्वीकृतम्। किन्तु लोभाकृष्टोऽसौ कष्टमनुभवति, कालक्षेपं न सहते। अद्योपहासपूर्वकमावयोस्तेन तिरस्कारः कृतः। परिहासभयेनावां मौनमालम्ब्य तिष्ठावः।

धनमदज्वरघूर्णितविग्रहाः,

न गणयन्ति वचो विनयान्वितम्।

स्वतनयस्य तुलाधृतयौतकै—

र्विदधते क्रयविक्रयणक्रियाम्।।9।।

घटक— (उल्लास से कन्या को देखते हुए एक हाथ उठाकर) धन्य हो बेटी! तुम धन्य हो। सच कह रही हो। त्रिपाठी का पुत्र सर्वथा तुम्हारे अनुरूप नहीं है। फिर भी वे उसको बेचने की इच्छा से अधिक द्रव्य लेना चाहते हैं। तुम्हारे पिता ने देने के लिये स्वीकार भी कर लिया। किन्तु लोभ से आकृष्ट हो वे कष्ट का अनुभव कर रहे हैं, कुछ विलम्ब सह नहीं सकते। आज उपहास करके हम दोनों का उन्होंने तिरस्कार किया है। अपने परिहास के भय से हमलोग चुप ही रह रहे हैं।

धन के गर्वरूपी ज्वर से चक्कर खाये शरीर वाले वे विनययुक्त बचन को नहीं मान रहे। तुला (तराजू) पर दहेज की धनराशि रखकर वे अपने पुत्र का क्रय—विक्रय व्यापार कर रहे हैं।।9।।

सुरुचिः— (स्वाभिमानं सूचयन्ती) भवानपि मे धर्मपिता एव। यद्यपि सामाजिकरीत्या कन्यायाः स्वविवाहप्रसङ्गे किमपि वक्तुं नास्त्यधिकारः, तथापि सम्प्रति युगं परिवर्तितम्। यावान्नरस्य तावान्नार्याश्च समानोऽधिकारः स्वीकृतोऽधुना। कस्यापि हतकस्य हस्ते कन्यां प्रदाय तज्जीवनं क्रीडनकं विधातुं कथमपि नोचितम्। यद्येवं तदाऽऽजीवनं कौमार्यव्रतमेव वरम्।

वरं कौमार्यमक्षुण्णं वरं ह्याजीवनं व्रतम्।

वरं वासः पितुर्गेहे धिग्वरं यौतकप्रियम्।।10।।

सुरुभि— (स्वाभिमान प्रकट करती हुई) आप भी मेरे धर्मपिता ही हैं। यद्यपि सामाजिक रीति से कन्या का अपने विवाह के प्रसङ्ग में बोलने का कुछ भी अधिकार नहीं हैं। किन्तु इस समय युग बदल गया है। इस समय जितना पुरुष का उतना ही नारी का अधिकार स्वीकार किया गया है। किसी हत्यारे के हाथ में कन्या को देकर उसके जीवन को खिलौना बनाना किसी प्रकार भी उचित नहीं है। यदि ऐसा होता है तो जीवनपर्यन्त कुमारी रहने का व्रत ही श्रेष्ठ है।

निरन्तर अक्षत कौमार्यव्रत धारण करणा श्रेष्ठ है, जीवनपर्यन्त नियम व्रत उपयुक्त है, पिता के घर में ही सदैव निवास करना उचित है—किन्तु दहेज के लोभी पर (पति) का वरण करना ठीक नहीं है। ऐसे वर को धिक्कार है।

घटकः – साधु पुत्रि। दिष्ट्या वर्धस्व। त्वादृश्येव वीराङ्गना कन्यका सम्प्रति युगं परिवर्तयितुं शिक्षयितुं च क्षमते। तवानुरूपं योग्यं वरमन्वेष्टुं नूनं प्रयतिष्ये। यदि विधिना एतादृशी कन्या रचिता तदा वरोऽप्येतादृशः क्वचन स्यादेव, इति मे द्रढीयान् विश्वासः।

योग्यानुरूपो विधिनाऽपि योग्यः,

समागमः संरचितो विभाति।

सुरासुरैश्चाधिगता समानं,

क्षीराब्धिकन्या हरिणैव लब्धा।।11।।

घटक – बहुत अच्छा बेटी। सौभाग्य से तुम सुखी रहो। तुम्हारे समान ही वीराङ्गना कन्या इस समय इसको (समाज को) बदलने और उसे शिक्षा देने में समर्थ है। तुम्हारे अनुरूप योग्य वर खोजने के लिये मैं निश्चित प्रयास करूँगा। यदि ब्रह्मा ने ऐसी कन्या बनाई है तो ऐसा वर भी कहीं होगा ही–यह मेरा दृढ़ विश्वास है।

विधाता के द्वारा भी योग्य के अनुरूप योग्य समागम किया हुआ सुशोभित होता है। देवता और असुरों के द्वारा समान रूप से अधिगत की गयी समुद्रकन्या लक्ष्मी को विष्णु ने ही प्राप्त किया, किसी अन्य ने नहीं। क्योंकि विष्णु और लक्ष्मी का ही समागम सभी प्रकार से अनुरूप है।।11।।

सत्यस्वरूपमिश्रः – (समाश्वासपूर्वकमुच्चैर्निश्वस्य) पुत्रि। त्वमावयोर्ज्येष्ठा कन्यकाऽसि। पुत्रनिर्विशेषं त्वामावां मन्यावहे। तवैष निर्णयः साधीयान् श्लाघीयाँश्च। त्वादृशीं कन्यामवाप्य यौतकप्रियेण तेन तिरस्कृता अपि

वयमात्मानं गर्वोन्नतमनुभवामः।

ये ज्वालयन्ति ज्वलने स्नुषां स्वां,

ये थीतक्रव्यभुजः पिशाचाः।

ते पुत्रविक्रेतृजनाः समाजे,

कालाहितुल्याः किल दण्डभाजः।।12।।

सत्यस्वरूपमिश्र – (आश्वस्त होकर और दीर्घश्वास लेकर) बेटी! तुम हम दोनों की ज्येष्ठ कन्या हो। बेटे से बढ़कर तुमको हमलोग मानते हैं। तुम्हारा यह निर्णय उचित और प्रशंसनीय है। तुम्हारी जैसी पुत्री को प्राप्त कर दहेज के लोभी उनसे (लम्बोदर त्रिपाठी से) तिरस्कृत होने पर भी हम अपने को गर्वोन्नत अनुभव कर रहे हैं।

जो आग में अपनी पुत्रवधू को जलाते हैं, तथा जो दहेज रूपी मांस को खाने वाले पिशाच हैं–वे अपने पुत्रों को बेचने वाले लोग समाज में काले साँप के समान निश्चित ही दण्ड के पात्र हैं।।12।।

सुशीला – (साश्वासं दीर्घं निःश्वस्य), यथोक्तं साधयतु भगवानाशुतोषः, येन कन्याकुलं कुशलमधिगच्छतु।

सुशीला— (आश्वस्त होकर दीर्घश्वास लेकर) जैसा आपने कहा उसे भगवान् आशुतोष शङ्कर सिद्ध करें, जिससे कन्या का कुल कुशलता को प्राप्त करे।

घटकः— मिश्रवर्य! मासाभ्यन्तर एव कन्यानुरूपं वरमन्विष्य इमां भवत्सुतां तेन मेलयिष्यामीति ममापि सुदृढा प्रतिज्ञा (इति निष्क्रान्तः)।

घटक— मिश्रजी! एकमास के अन्तर्गत आपकी कन्या के अनुरूप वर को खोजकर आपकी इस कन्या का पाणिग्रहण उससे कराऊँगा यह मेरी दृढ़ प्रतिज्ञा है। (यह कह कर निकल जाते हैं)।

पिता— **(सोत्कण्ठमाशास्यमानः)**

कुलजा सद्‌गुणोपेता तनुजा नौ गरीयसी।

स्वानुरूपं वरं प्राप्य सुखमत्र समश्नुताम्।।13।।

। इति तृतीयं दृश्यम्।

पिता— (सत्यस्वरूपमिश्र)—(उत्कण्ठापूर्वक आशा करते हुए) सत्कुल में उत्पन्न हुई, सद्‌गुणों से सम्पन्न हमारी पुत्री अपने अनुरूप पति को प्राप्त करके इस संसार में सुख का उपभोग करे।

तृतीय दृश्य समाप्त।

चतुर्थ दृश्यम

(स्थानम्—सत्यस्वरूपमिश्रस्यावासः। तत्रासौ पूर्ववृत्तं चिन्तयन् आसम्दिकामधितिश्ठन्नास्ते। तदीयते ज्येष्ठपुत्रः समीरः प्रयागेऽधीयानो भगिनी विवाहसूचनां सम्प्राप्य गृहमागच्छति। सपेटिकं प्रविश्योपगम्य च चरणस्पर्शपुरस्सरं पितरं प्रणमति)

सत्यस्वरूपमित्रः (पिता) — वत्स! आगच्छ, उपविश। (अपरामासन्दिकां निर्दिशति) अपि कुशलं ते? अध्ययनं सुष्ठु प्रवर्तते? किं त्वया निषेधसूचना नाधिगता मया ह्य एव पत्रं प्रहितम्।

स्थान— सत्यस्वरूपमिश्र का आवास। वहां से पूर्व घटना का स्मरण करते हुए कुर्सी पर बैठे है। उनका ज्येष्ठ पुत्र समीर जो प्रयाग में पढ़ रहा है—अपनी बहन के विवाह की सूचना पाकर घर आया है। हाथ में पेटी (सूटकेस) लिये प्रवेश करता है और पिता के पास जाकर उनकी चरणस्पर्शपूर्वक प्रणाम करता है।

सत्यस्वरूप मिश्र—(पिता) पुत्र आओ, बैठो। (दूसरी कुर्सी की और संकेत करते हैं) तुम कुशल से हो? क्या परीक्षा हो गयी? तुम्हारी पढ़ाई ठीक से चल रही है? क्या तुम्हें निषेध की सूचना नहीं मिली? मैंने कल ही पत्र भेजा है।

समीरः — (साश्यर्यम्) पितः! किं ब्रवीति भवान् उद्विग्नमना इवातितरां निर्विण्णस्तत्र भवान् लक्ष्यते। कीदृशी निषेध—सूचना दत्ता? कीदृशं पर्व प्रहितम्? पत्रन्त्वेकसप्ताहपूर्वमेव सुरुचेर्विवाह—सम्बन्धि भवत्प्रहितं मयाऽधिगतम्, येन त्वरितमागतोऽस्मि। इदानीं किं संवृत्तम्? यद्‌वशात् खिन्नो भवान् विपरीतं वक्ति।

समीर– (आश्चर्य सहित) पिताजी। आप क्या कह रहे हैं? आप अत्यन्त उद्यिग्न और खिन्न दिखायी दे रहे हैं? आपने कैसी निषेध की सूचना दी थी? कैसा पत्र भेजा था? सुरुचि के विवाह सम्बन्धी पत्र को एक सप्ताह पहले ही आपके द्वारा भेजा हुआ मैंने पाया था, जिससे में शीघ्र ही चला आया। इस समय क्या हुआ? जिस कारण खिन्न होकर आप विपरीत बोल रहे हैं।

सत्यस्वरूपमिश्रः (पिता)–(दीर्घं निःश्वस्य) वत्स! किं ब्रवीमि? किं वा विदधामि? क्व यामि? किमपि निश्चेतुं न शक्यते। सर्वमङ्गीकृत्य लम्बोदरत्रिपाठी सम्पूर्णं यौतकं विना विवाहं न स्वीकरोति। सघटकं मामधिक्षिप्य सोपहासं तेन सम्बन्धो निराकृतः।

सत्यस्वरूप मिश्र–(दीर्घ निश्वास लेकर) बेटा! क्या कहूँ? अथवा क्या करूं? कहाँ जाऊँ? कुछ भी निश्चय नहीं कर रहा हूँ। सब स्वीकार करके लम्बोदर त्रिपाठी ने सम्पूर्ण दहेज के बिना विवाह को अस्वीकार कर दिया। घटक (अगुआ) सहित परिहासपूर्वक मेरा तिरस्कार कर उन्होंने सम्बन्ध का निराकरण कर दिया।

यया प्राप्ता कन्या सकलगुणधन्याऽपि विदुषी,
सती साध्वी सौम्या सुभगतनुरम्या सुनिपुणा।
पितुर्गेहे सीदत्यहह! ननु योग्यं वरमृते,
समाजं सव्याजं जडयतितरां यौतकमिदम्।।14।

समस्त गुणों से युक्त, पढ़ी–लिखी योम्य, कन्या युवावस्था को प्राप्त कर चुकी है। वह सत्यनिष्ठा, साधु स्वभाव सम्पन्न, सुन्दर शरीर से रम्य और गृहकार्य में निपुण है। किन्तु योग्य वर के बिना पिता के घर में दुःख (पीड़ा) प्राप्त कर रही है। यह दहेज कपटपूर्ण समाज को अत्यन्त जड़ बना रहा है।

अपि च– पूरा पुरारातिरसौ हि पार्वतीं
सुराधिपः किञ्च शचीं श्रियं हरिः।
विवाहयाञ्चक्रुरमीश्वराः स्वयं–
कृतार्थना यौतकबन्धमन्तरा।।15।।

और भी, प्राचीनकाल में त्रिपुरारि शंकर ने पार्वती को, देवराज इन्द्र ने शची को तथा विष्णु ने लक्ष्मी को स्वयं याचना करके बिना किसी दहेज–बन्धन के इन ईश्वरों में विवाहविधि से ग्रहण किया था।

अधुना तु– सर्वतोऽप्यधिकारेण यौतकप्रोतविग्रहाः।
दृश्यन्ते कन्यकालोकं ग्रसमाना ग्रहा इव।।16।।

(इति हस्ताग्रेण शिरः संस्पृश्य खेदं नाटयति)

इस समय तो, सभी ओर से अधिकारसम्पन्न होकर दहेज के लोभ से आपादमस्तक ग्रस्त हुए लोग कन्या लोगों को ग्रसते हुए राहु–केतु–शनि प्रभृति ग्रहों के समान प्रतीत हो रहे हैं।

(इस प्रकार हाथ से सिर पकड़कर खेद का अनुभव करते हैं।)

समीरः – (गभीरं निःश्वस्य) पितः! मैवं खेदातिशयमुपगच्छतु भवान्। लम्बोदरत्रिपाठितनयस्तु मम सुरुचिभगिन्याः कृते रूपगुणशीलादिभिः कथमपि नास्ति योग्यः। तदीयः पिता लम्बोदरस्तु प्रचुरं यौतकं याचमानः साक्षाल्लम्बोदर एव संवृत्तः। भवतु, धैर्यमादधातु भवान्। मदीया भगिनी निखिलगुणगरिम्णा कन्यारत्नमिव केनापि रत्नाकरेण नूनमुररीकरिष्यते। ''न रत्नमन्विष्यति मृग्यते हि तत्'' इति कविकुलगुरोः सुभाषितं कथमप्यसुभाषितं भवितुं नार्हति।

रत्नं रत्नाकरं याति चन्द्रिका शशिनं यथा।

हिमवन्तं हिमानीव कन्या वरमनुत्तमम् ।।17।।

समीर– (गम्भीर श्वास लेकर) पिताजी! आप अधिक खिन्न) दुःखी न हों। लम्बोदर त्रिपाठी का बेटा रूपगुण शील में मेरी सुरुचि बहन के अनुरूप किसी प्रकार योग्य नहीं है। उसके पिता लम्बोदर त्रिपाठी तो अधिक दहेज माँगते हुए साक्षात् लम्बोदर ही प्रतीत हो रहे हैं। खैर, आप धैर्य धारण करें। समग्र गुण गरिमा से युक्त मेरी बहन कन्याओं में रत्न के समान है, उसको कोई रत्नाकर अवश्य स्वीकार करेगा। ''रत्न किसी का अन्वेषण नहीं करता, क्योंकि वही अन्वेषण के योग्य होता है'' कविकुलगुरु (कालिदास) का यह सुभाषित कथमपि असुभाषित (असत्य) नहीं हो सकता।

जैसे रत्न, रत्नाकर को प्राप्त करता है, चन्द्रिका चन्द्रमा को प्राप्त करती है, हिमानी (हिम–समूह) हिमालय को प्राप्त करती है वैसे ही साध्वी कन्या श्रेष्ठ वर (पति) को प्राप्त करती है।

सुशीला– (प्रविश्य खिन्नाऽपि सहर्षं पुत्रं विलोक्य) एहि वत्स! एहि मां परिष्वजस्व। (समीरस्तत्पादयोः प्रणमति, सा च पाणिभ्यां तच्छिरः स्पृशन्ती शुभाशिषाऽभिवर्द्धयति) वत्स। अपि कुशली त्वमसि? अपि भगिन्या विवाहवृत्तं त्वयाऽवगतम्? सर्वं सम्पन्नमप्यसम्पन्नम्, निश्चितमप्यनिश्चितम्, कृतमप्यकृतमिव संवृत्तम्। इदानीं कुशले विधुरो विधाता श्रेयः प्रतिबध्नाति। किं कुर्मः? किमपि निर्णेतुं न पार्यते।

सुजीता– (माता)–(प्रवेश करके दुःखी होकर भी सहर्ष पुत्र को देखकर) आओ बेटा! आओ मेरे गले लग जाओ। (समीर माता के पैरों पर झुककर प्रणाम करता है, वह दोनों हाँथों से उसके सिर का स्पर्श करती हुई शुभाशीर्वाद से अभिवर्धन करती है) बेटा! तुम कुशल से हो? क्या तुमने बहन के विवाह का समाचार जान लिया? सब सम्पन्न होकर भी नहीं सम्पन्न हो सका, निश्चित होकर भी अनिश्चित हो गया, करके भी न किया हुआ सा हो गया। विधाता इस समय कुशल के, कल्याण के प्रतिकूल होकर मंगलमय कार्य का प्रतिबन्धक हो गया है। क्या करें? हमलोग कुछ निर्णय नहीं कर पा रहे हैं।

समीरः मातः! पित्रा संश्रावितं सर्वमभिज्ञातम्। न खेदमनुभवतु भवती। समये सर्वमपि साधु सम्पत्स्यते। (परितः सदृष्टिक्षेपम्) ननु सुरुचिः कुत्रास्ति? सुधीरश्चापि न दृश्यते। उभावपि क्व गतौ?

माता जी! पिता जी से सुनकर सब जान गया हूँ। आप खेद का अनुभव न करें। समय पर अच्छी तरह सम्पन्न हो जायेगा। (चारों ओर दृष्टिपात करके) माँ! सुरुचि कहाँ है? सुधीर भी नहीं दिखायी पड़ रहा है। दोनों कहाँ गये हैं?

सुशीला (माता)–वत्स! उभावपि विद्यालयमध्येतुं गतौ। आसन्नपरीक्षायां सविशेषमध्ययने व्यापृतौ स्तः।

बेटा! दोनों पढ़ने के लिए विद्यालय गये हैं परीक्षा समीप है, इसलिये अध्ययन में विशेषरूप से संलग्न हैं।

(प्रसन्नमुखो घटकः प्रविशति। उत्थाय सर्वे सप्रणाममभिनन्दन्ति।) सत्यस्वरूपमिश्रः (सोत्कण्ठं घटकमभिमुखीभूय) ननु घटकप्रवर! भवान् झटिति सम्प्राप्तः, प्रसन्नवदनश्च सन्दृश्यते। अप्यस्ति काऽपि शुभा वार्ता? यदि स्यात्, कृपया सपदि श्रावयतु। श्रोतुमुत्सुका वयम्।

(प्रसन्नमुख अगुआ का प्रवेश। सभी उठकर हाथ जोड़कर अभिवादन करते हैं)

सत्यस्वरूपमिश्र–(उत्कण्ठापूर्वक घटक की ओर देखकर) अये! मित्रवर घटक! आप शीघ्र ही आ गये और प्रसन्नमुख दिखायी दे रहे हैं। क्या कोई शुभ समाचार है? यदि हो, तो कृपया उसे जल्दी सुनायें। सुनने के लिए हमलोग उत्सुक हैं।

घटकः – (सहर्षम्) अयि मिश्रवर! व्यपगतचिन्तो भवान् सुस्थिरो भवतु। सुरुचेर्विवाहो निश्चितः। तदेव दिनं तदेव लग्नं सैव तिथिर्यदा विवाहसमारम्भः सम्पादनीयः। (इति सर्वे हर्षं नाटयन्ति।)

घटक– (अगुआ)–(प्रसन्न होते हुए) अये मिश्र जी! आप चिन्तारहित होकर सुस्थिर हो जाइये। सुरुचि का विवाह निश्चित हो गया। वही दिन, वही लग्न और वही तिथि है जब आप को विवाहोत्सव का समारम्भ करना है। (इससे सभी हर्ष का अभिनय करते हैं।)

सत्यस्वरूपमिश्रः –(सानन्दम्) अयि मित्रवर! कुत्र? केन सह विवाहो निश्चितः? कियद् यौतकं दातव्यम्?

सत्यस्वरूपमिश्र– (आनन्दित होते हुए) अये मित्रवर! कहाँ? किसके साथ विवाह निश्चित हुआ? कितना दहेज देना है?

घटकः – (सोत्साहम्) मिश्रवर्य! अत्रैव पार्श्वस्थे रामपुरग्रामे रघुनाथशुक्लः सुख्यातनामा सर्वविध आढयो लब्धप्रतिष्ठस्तिष्ठति। तत्पुत्रश्च स्नातकोत्तरः संघलोकसेवायोगस्य सर्वोच्चप्रतियोगितापरीक्षोत्तीर्णो योग्यतमो वरो वरीवर्ति। तदर्थं शुक्लमहोदयो मदन्तिकमुपेत्य स्वयमेव भवदीयां कन्यकां विवाहविधिना ग्रहीतुं प्रस्तावमकार्षीत्। तत्र किमपि यौतकं न दातव्यम्। तेन निखिलमपि घटितं वृत्तमभिज्ञायते। इयमेव संक्षिप्ता शुभा वार्ता। (सर्वेऽपि हर्षोल्लासं व्यज्जयन्ति)

घटक— (उत्साहपूर्वक) मिश्रजी! यहीं समीप में स्थित रामपुर ग्राम में विख्यात नाम वाले सब प्रकार से सम्पन्न सर्वत्र प्रतिष्ठित रघुनाथशुक्ल निवास करते हैं। और उनका पुत्र स्नातकोत्तर होकर संघ लोकसेवायोग की सर्वोच्च प्रतियोगितापरीक्षा (आई०ए०एस०) को उत्तीर्ण कर योग्यतम वर है। शुक्ल महोदय ने उस अपने पुत्र के लिये मेरे पास स्वयं आकर आपकी कन्या को विवाहविधि के द्वारा ग्रहण करने के लिये प्रस्ताव किया है। इसमें किसी प्रकार का दहेज नहीं देना है। वे सभी घटित वृत्तान्त को जानते हैं। यही संक्षेप में शुभ वार्ता है। (सभी हर्षोल्लास को व्यक्त करते हैं।)

सत्यस्वरूपमिश्रः —(सगद्गदं सोल्लासं च घटकमालिङ्गति) अये घटकप्रवर! भवानेव सुरुचेर्वस्तुतः पिता, भवानेव ममोद्धारकस्त्राता, भवानेव नः सर्वस्वप्रदाता। किन्नु ब्रवीमि? वाणी मूकायते। आजीवनं भवदुपकारं न प्रत्युपकर्तुमीशोऽस्मि ।

क्व शुक्लवर्यो विपुलो धनाढ्यः,

क्व चाहमेष द्रविणप्रहीणः।

तदात्मजो योग्यतमः सुतां मे,

वृणोति सौभाग्यमिदं मदीयम्।।18।।

सत्यस्वरूपमिश्र (गद्गद होकर उल्लास से घटक का आलिङ्गन करते हैं) अये घटक प्रवर! वस्तुतः आप ही सुरुचि के पिता हैं, आप ही मेरे उद्धारक त्राता (रक्षक) हैं और आप ही हमलोगों के सर्वस्व प्रदाता हैं। क्या कहूँ? वाणी मूक सी हो रही हैं। जीवनपर्यन्त आपके उपकार का प्रति उपकार नहीं कर सकता हूँ। कहाँ विपुल धनधान्यसम्मन्न श्री रघुनाथ शुक्ल और कहाँ सब प्रकार से धनहीन यह मैं? परम योग्य उनका पुत्र मेरी पुत्री का वरण कर रहा है यह मेरा सौभाग्य ही है।

सुशीला— (सोल्लासम्) घटकप्रवर! अहमधमर्णाऽस्मि भवतः। क्षणं तिष्ठतु भवान्। भवन्मुखं मधुरमोदकैरापूरयामि। (सर्वेऽपि मन्दोच्चैर्हसन्ति। (सुशीला मोदकानादातुं गृहाभ्यन्तरं गच्छति। ततः प्रविशतो विद्यालयादागतो सुरुचिसुधीरौ। उभौ सजिज्ञासं सर्वान् विलोक्य घटकं ज्येष्ठभ्रातरं च क्रमेण प्रणमतः)।

सुशीला— (उल्लास सहित) घटकप्रवर! में आपकी अत्यन्त कृतज्ञ हूँ। आप थोड़ी देर बैठे रहें। मैं मीठे लड्डू से आपका मुँह मीठा कराऊँगी। (सभी कुछ उच्चस्वर में हँसते हैं। सुशीला लड्डू लेने के लिये घर के अन्दर जाती है।) इसके बाद विद्यालय से आये हुए सुरुचि और सुधीर प्रवेश करते हैं। दोनों जिज्ञासा से सबको देखकर घटक (अगुआ) और बड़े भाई समीर को क्रमशः प्रणाम करते हैं)।

सुधीरः — (सोत्कण्ठम्) पितः! सर्वेऽपि भवन्तो हर्षनिर्भरसमानसा लक्ष्यन्ते। तदत्र को हेतुः?

सुधीर— (उत्कण्ठा से) पिताजी! आप लोग सभी अत्यधिक हर्ष से प्रफुल्लित दिखायी दे रहे हैं। तो इसमें क्या कारण है?

सत्यस्वरूपमिश्रः –(सहर्षम्) वत्स! सुरुचेर्विवाहो रामपुरग्रामवास्तव्येन श्रीरघुनाथशुक्लेन आई०ए०एस० इति सर्वोच्चप्रतियोगितापरीक्षोत्तीर्णेन स्वतनयेन सह स्वयमेवाङ्गीकृतः।

(सुरुचिः स्वहस्ते स्थितस्य पुस्तकस्य पत्राणि गणयन्ती लज्जां नाटयति। सुधीरस्तन्मुखं वीक्ष्य विहसति। अत्रान्तरे समोदकपात्रं पाणौ निदधाना सुशीला प्रविशति। आदौ घटकाय ततः सर्वस्मै एकैकं मोदकं वितरति। सर्वेऽपि सोल्लासमास्वादयन्ति)

सत्यस्वरूपमिश्र–(हर्षसहित) बेटा! सुरुचि का विवाह रामपुर ग्राम के निवासी श्री रघुनाथ शुक्ल ने आई०ए०एस० की सर्वोच्च प्रतियोगिता परीक्षा उत्तीर्ण किये हुए अपने पुत्र के साथ करना स्वयं स्वीकार कर लिया है।

(सुरुचि अपने हाथ में लिये पुस्तक के पन्नों को उलटती हुई लज्जित हो जाती हैं। सुधीर उसके (सुरुचि के) मुहँ को देखकर हँसता है। इसी बीच लड्डू से भरा हुआ पात्र हाथ में लेकर सुशीला प्रवेश करती है। पहले घटक (अगुआ) को बाद में सबको एक–एक मोदक (लड्डू) देती है। सभी उल्लास से खाते हैं)।

घटकः– (समोदं मोदकमास्वादयन् संकेतमुद्रया सुरुचिमुद्वीक्ष्य) ननु सुरुचिवत्से! त्वमपि स्वविवाहवृत्तविशेषकं मोदकं समास्वादय।

(सुरुचिः सस्मितं मुखं हस्तेनाच्छाद्य सलज्जं झटिति गृहाभ्यन्तरमभिद्रवति। सर्वे हसन्ति)

घटक– (आनन्द के साथ मोदक (लड्डू खाते हुए संकेतमुद्रा से सुरुचि को देखकर) अरे सुरुचि बेटी! तुम भी अपने विवाह समाचार के विशिष्ट मोदक का आस्वादन करो।

(सुरुचि हँसती हुई हाथ से मुख ढक कर लजा जाती है और शीघ्र घर के अन्दर भाग जाती है। सब हँसने लगते हैं)।

घटकः – (शनकैरुत्थाय) मिश्रवर्य। कार्यान्तरव्यापृतोऽयं जनः सम्प्रति गन्तुमनुमन्यताम्।

घटक–(धीरे से उठकर) मिश्र जी। अन्य कार्य में मैं व्यस्त हूँ, इस समय जाने की अनुमति दीजिये।

सत्यस्वरूपमिश्रः – (अञ्जलिं बद्ध्वा) घटकप्रवर! मैवं लज्जयतु मां ननु कोऽहं **भवद्गमनार्थमनुमतिं प्रदातुम्?–**

घटयन्नघटितामेतां पूर्वं विघटितामपि।

विवाहघटनां भूयस्तादृशो घटको भवान्।।19।।

(इत्युभौ परस्परं हस्तौ परामृश्य विहसतः)

सत्यस्वरूपमिश्रः– (हाथ जोड़कर) घटकप्रवर! आप मुझे इस प्रकार लज्जित न करें। भला मैं कौन हूँ–आपके जाने के लिये अनुमति प्रदान करने वाला?

अघटित (न होने योग्य) इस विवाह की घटना को जो पहले विघटित हो चुकी थी, उसको फिर से संघटित करने वाले आप (जोड़ने वाले) वैसे श्रेष्ठ घटक है। (इस प्रकार दोनों परस्पर हाथ मिलाकर हँसते हैं)।

घटकः – (सन्तुष्टमना विहस्य) मिश्रवर्य! अतः परं किं तवोपकरणीयम्?

घटक– (सन्तुष्टः मन से हँसकर) मिश्र जी! इससे अधिक मैं और आपका क्या उपकार करूँ?

सत्यस्वरूपमिश्रः–(सस्मितोल्लासम्) घटकप्रवर! सम्पन्नसमीहितार्थोऽस्मि न किञ्चिदवशिष्यते।

सत्सु दानेष्वसंख्येषु विद्यादानं विशिष्यते।

ततोऽप्यतिशयं लोके कन्यादानं महीयते।।20।।

तत्र भवता तद्दानयोग्यताप्रदानेन सोऽहमनुगृहीतोऽस्मि। (इति सविनयं प्रणमति)

सत्यस्वरूपमिश्र (मुस्कुराते हुए उल्लास से) घटकमहोदय! मेरी सारी इच्छा और प्रयोजन सम्पन्न हो गया। कुछ भी अवशिष्ट नहीं है।

लोक में विद्यमान असंख्य दानों में विद्यमान विशिष्टदान के रूप में माना जाता है। उससे भी अतिशय पुण्यदायक कन्यादान का महत्त्व स्वीकार किया जाता है।

आज आपने उस पुण्यप्रद दान की योग्यता मुझे प्रदान कर अनुगृहीत किया है। (ऐसा कहकर विनयपूर्वक प्रणाम करता है)।

घटकः– **तथापीदमस्तु–**

विश्वं समग्रं ससुखं समेधतां,

निर्यौतकोद्वाहविधिः प्रवर्तताम्।

कन्याकुलं सौख्यपदं प्रपद्यतां,

गीर्वाणवाणी परितः प्रवर्धताम्।। 21।।

(नेपथ्ये मङ्गलवाद्यध्वनिः, यौतकदानवनिपातश्च। सर्वे निष्कान्ताः)

पटाक्षेपः।

। इति चतुर्थं दृश्यम्।

घटक– तथापि ऐसा हो–

समग्र विश्व सुखपूर्वक समृद्धि को प्राप्त हो। दहेज के विना ही विवाहविधि सम्पन्न हो। कन्याओं का कुल सौख्य–पंद (सौभाग्य) को प्राप्त करे, और सुरवाणी संस्कृत–भाषा सर्वत्र समादृत होकर वृद्धिङ्गत हो। (नेपथ्य में मङ्गलवाद्य की ध्वनि होती है, यौतकदानव का पतन होता है। सब निकल जाते हैं।)

पटाक्षेप।

।। चतुर्थ दृश्य समाप्त।।

।। आचार्य श्री शिवजी उपाध्याय विरचित–

'यौतकम्' नामक एकांकी रूपक समाप्त।।

4.5 युगबोध

प्रस्तुत एकांकी भी दहेज प्रथा जैसी सामाजिक कुरीति पर कुठाराघात करती है तथा उच्च शिक्षा के महत्त्व को दिखाती हुई बालिका सुरुचि स्वयं विवाह करने से मना कर देती है और नाटक के अंत में सुरुचि की योग्यता पर ही एक आईएएस वर के द्वारा उसके पास विवाह का प्रस्ताव भेजा जाता है इस प्रकार नाटक का अंत अत्यन्त सुखदाई है।

4.6 बोधप्रश्न

1. प्रोफेसर शिवजी उपाध्याय का संक्षिप्त जीवन परिचय एवं उनकी रचनाओं को बताइए?
2. यौतकम् शब्द से आप क्या समझते हैं और इस कुप्रथा को कैसे दूर किया जा सकता है?
3. एकांकी की कथावस्तु को अपने शब्दों में लिखिए?

खण्ड–ख कथाकाव्य

इकाई–1 कथा साहित्य

इकाई की रूपरेखा

उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 संस्कृत कथा–साहित्य एक सामान्य परिचय

1.3 कथा–साहित्य का उद्भव एवं विकास

1.4 प्राचीन संस्कृत कथा एवं आधुनिक संस्कृत–कथाओं में अंतर

1.5 बोध प्रश्न

उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई कथा साहित्य एवं उसके उद्भव एवं विकास पर आधारित है। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप–

1. कथा का सामान्य परिचय जान सकेंगे।
2. कथा की उत्पत्ति उसका अर्थ, विकास।
3. प्राचीन संस्कृत कथा एवं आधुनिक संस्कृत कथाओं में अंतर समझ सकेगें।
4. प्रश्न–उत्तर के माध्यम से इस विषय में अवगत हो सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थी! आप इस खंड–ख में कथाकाव्य की सर्वप्रथम इकाई–1 में कथा–साहित्य का सामान्य परिचय एवं प्राचीन संस्कृत कथा एवं आधुनिक कथा–साहित्य के अंतर को पढ़ेंगे। इसके साथ ही इसी खंड की इकाई 2, 3, 4, 5 और 6 में विभिन्न आधुनिक कवियों एवं उनकी रचनाओं व कथाओं का अध्ययन करेंगे। ये सभी कथाएं अलग–अलग विषयों पर आधारित हैं। जैसे– इकाई–2 की कथा में दो युवा प्रशासनिक अधिकारी का एक सौम्य किंतु वेशभूषा के कारण वयोवृद्ध की आलोचना करना और बाद में पश्चात्ताप करना।

इकाई–3 अत्यंत संपन्न किंतु लालची व्यक्ति के बारे में बताती है।

इकाई–4 में जातिवाद तथा पुरुषप्रधान समाज को चुनौती देती एक मध्यमवर्गीय परिवार की कन्या अपर्णा की कहानी है।

इकाई–5 सत्यम् शिवम् सुंदरम् के रूप में सनातन भारतीय संस्कृति की कथाओं को एवं उनके आदर्शों को यथार्थ जगत् से जोड़ते हुए ग्रहण करने की कथा है।

इकाई–6 और अंतिम कथा में लाचारी, गरीबी से युक्त एक अन्धी बालिका और एक बेरोजगार व्यक्ति की कथा को पढ़ेंगे। ये सभी कथाएं हम सभी को जागरूक करने के लिए और समाज को एक बेहतर संदेश देने की दृष्टि से बहुत सुंदर हैं, उपदेशात्मक हैं।

1.2 संस्कृत कथा–साहित्य : एक सामान्य परिचय

शब्दार्थ के समुचित संयोजन द्वारा अभिव्यक्त हितसाधक वाङ्मय 'साहित्य' है–

हितेन सहितं यत्स्यात्तत्साहित्यमितीरितम्।
हितेन रहितं यत् तद् भ्रमात् साहित्यमुच्यते।।

अर्थात् साहित्य की प्रत्येक विधा की प्रकृति, स्वभाव अथवा धर्म मानवमात्र का हित करना है। साहित्य, साहित्यकार के विचारों की अभिव्यक्ति है और साहित्यकार समाज और साहित्य के बीच की कड़ी है। साहित्य समय और जीवन का सहचर होता है। साहित्य में तत्कालीन जीवन की जितनी सूक्ष्म पकड़ होती है, उतना अन्यत्र कहीं नहीं होती। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में ''ज्ञानराशि के संचित कोश का नाम साहित्य है'' प्रसिद्ध दार्शनिक अरस्तू के अनुसार–Literature (Poetry) is an imitation of nature through medium of Language. शब्दार्थ की समष्टि ही काव्य/साहित्य है–''सहितयोः भावः साहित्यम्''। भर्तृहरि के इस कथनानुसार–

''साहित्य–संगीत–कला–विहीनः साक्षात् पशुः पुच्छविषाणहीनः'' निश्चित रूप से साहित्य में, संगीत में और कला–चित्रकला, मूर्तिकला आदि में भारतीय दर्शन, मूल्यों व परम्पराओं की आत्मा विद्यमान है। संसार में बड़ी से बड़ी क्रान्ति को जन्म देने में साहित्य की सशक्त भूमिका रही है, तथा समाज को नई दिशा भी मिली है, चाहे वह क्षेत्र आज़ादी प्राप्त करने का हो, पर्यावरण–चिन्तन का हो, मानवीय मूल्यों का, धार्मिक सहिष्णुता या राष्ट्रवाद का हो।

गद्य का आविर्भाव मानव भाषा के साथ ही हुआ है। सृष्टि के आरंभ में मनुष्य ने जब आत्माभिव्यक्ति के लिए भाषा का प्रयोग किया तो वह गद्य रूप में ही प्रकट हुआ अथवा भावाभिव्यक्ति का मौलिक माध्यम गद्य ही है, और पद्य गद्य का ही एक नियमित और निश्चित प्रकार है। यही गद्य जब छंदों के नियमों द्वारा निबद्ध होता है तो वह पद्य बन जाता है। इस प्रकार गद्य पद्य की अपेक्षा अधिक प्राचीन और व्यापक है।

यदि दोनों की तुलना करें तो पद्य कोमल भावनाओं की अभिव्यक्ति का माध्यम है तथा गद्य तार्किक युक्ति का माध्यम है। पद्य में छन्दोबद्धता होने के कारण कवि परतंत्र रहता है, जबकि गद्य का लेखक स्वतंत्र रहता है। वह उन्मुक्त पक्षी के समान है, जो स्वतंत्रता के आनंद का रसिक बनकर विशाल साहित्य गगन में स्वेच्छापूर्वक उड़ान भरता है। इसीलिए तो गद्य कविप्रतिभा की लिए कसौटी माना जाता है।

सातवीं शताब्दी को साहित्यिक गद्य का स्वर्ण युग कहा जा सकता है जिसमें तीन महान् विभूतियां थीं– दंडी, सुबन्धु तथा बाणभट्ट ।

'गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति' काव्य की कसौटी है गद्य। और गद्य विधा की सर्व सरस विधा है–**कथा**। संस्कृतकथा लोकजीवन की निकटतम अभिव्यक्तियों में से एक है जो अपनी रोचक शैली, मनोरम विषय वस्तु,

प्रवाहमयी भाषा और आकर्षक कथोपकथन के माध्यम से मानव–हृदय पर सद्यः प्रहार करती है और 'कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे' की भाँति पाठक की मनोदशा को लोककल्याणोन्मुखी कर देती है।

हमारा देश कथाओं की भूमि है। ईसा के 1000 वर्षों पूर्व अनेक लोकप्रिय आख्यानों और कथाओं की वाचिक परम्परा रही है। वैदिककाल से सूत्रधार आख्यान उपाख्यानों को गा–गाकर या पाठ प्रस्तुत करते हुए कथा–साहित्य की प्राचीन धरोहर की रक्षा करते आ रहे थे। संस्कृत–वाङ्मय की अन्य विधाओं की भांति कथा की उत्पत्ति भी वेदों से मानी जाती है। कालान्तर में ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद् साहित्य, रामायण, महाभारत, पुराणों में आख्यानों की बहुलता प्राप्त होती है।

इसी क्रम में अद्भुतकथा, लोककथा, नीतिकथा, पशुकथा आदि के साथ बौद्ध व जैनकथा–साहित्य ने भारतीय कथा–साहित्य के भण्डार में अत्यधिक वृद्धि की है।

कथा शब्द 'कथ् वाक्य प्रबन्धे (चिति पूजि कथि कुम्बि चर्चिश्च उणादि, 3/3/105) 'कथ्' धातु से 'अङ्' व 'टाप्' प्रत्यय द्वारा निष्पन्न हुआ है, जिसके कथा, कहानी, वृत्तान्त, वर्णन, विवरण, कल्पित कथा, समाचारवाक्य संदर्भ, आख्यान, उपाख्यान आदि अनेक अर्थ प्रतिपादित होते हैं। (कोलाहलाचार्य–शब्दकल्पद्रुम)। संस्कृत–साहित्य–परम्परा में कथा के लिए संभवतः प्रारम्भ में 'कहा' शब्द प्रचलित था, यथा–'बड्ढकहा'।

संस्कृत–कथा–साहित्य लौकिक संस्कृत के साहित्यिक गद्य का महत्त्वपूर्ण भेद है। गद्य के भी 2 भेद प्राप्त होते हैं–

1. **स्वरूप के आधार पर**–अग्निपुराण में चूर्णक, उत्कलिका वृत्तगन्धि 3 भेद बताए गए, जबकि आचार्य विश्वनाथ ने गद्य के 4 भेद–वृत्तगन्धोज्झित वृत्तगन्धि, उत्कलिकाप्राय, चूर्णक माने हैं–**वृत्तगन्धोज्झितं गद्यं... ....तुर्यं चाल्पसमासकम्।।**

2. **बन्ध के आधार पर**–अग्निपुराण में 5 भेद किये गये है–आख्यायिका कथा, खण्डकथा परिकथा, कथानिका।

आख्यायिका कथा खण्डकथा परिकथा तथा।
कथानिकेति मन्यते गद्यकाव्यं च पंचधा।।

दण्डी हेमचन्द्र, वाग्भट्ट, आनंदवर्धन, राजाभोज आदि ने कथा के 10 से 14 भेदों तक का उल्लेख किया है। आधुनिक–संस्कृत–कथा–संसार पर दृष्टि डालें तो हम कह सकते है कि आचार्य आनन्दवर्धन की खण्डकथा ही वस्तुतः आधुनिक लघुकथा है और सकलकथा में हम दीर्घकथा को अन्तर्भावित कर सकते हैं। इसी प्रकार कथा ही परिकथा है। किन्तु परवर्ती आचार्यों का मत है कि कथा व आख्यायिका ही गद्यकाव्य की मुख्य विधा है व शेष भेदों का समाहार इन्हीं दोनों में हो जाता है, उदाहरणार्थ आचार्य दण्डी का काव्यादर्श, रुद्रट का काव्यालंकार, विश्वनाथकृत साहित्यदर्पण त्वं अमरकोष।

संस्कृत में दोनों प्रकार की रचनाओं को प्रस्तुत करने का श्रेय महाकवि बाणभट्ट को ही है। उन्होंने कादंबरी को अतिद्वयी कथा और हर्षचरित को आख्यायिका नाम दिया है। कादंबरी एक प्राचीन दंतकथा या लोककथा के ऊपर आश्रित है और हर्षचरित इतिहासप्रसिद्ध चरित्र घटनाओं के वर्णन के कारण आख्यायिका है।

नलचंपूकार त्रिविक्रम भट्ट कथा के वैशिष्ट्य को बताते हुए कहते हैं–

कर्णान्तविभ्रमभ्रान्त–कृष्णार्जुन–विलोचना।

करोति कस्य नाह्लादं कथा कान्तेव भारती।

महाकवि बाणभट्ट भी कहते हैं–

स्फुरत्कलालापविलासकोमला

करोति रागं हृदि कौतुकाधिकम्।

रसेन शय्यां स्वयमभ्युपागता

कथा जनस्याभिनवा वधूरिव।।

अपने को अभिव्यक्त करने और दूसरों की अभिव्यक्ति के प्रति सहृदय होने में कहानी का इतिहास छिपा हुआ है। साहित्यिक विधा के रूप में कथा कब से अस्तित्त्व में आई यह निश्चय पूर्वक का सकना संभव नहीं। अनुमानतः संस्कृत–वाङ्मय में गद्यात्मक कथाओं का उदय विक्रम से लगभग 400 वर्ष पहले हुआ था। प्रारंभ में संभवत कथा का उद्देश्य केवल कथा ही रहा होगा, कालांतर में कथा कहानी के अभिप्राय से हटकर ज्ञान के क्षेत्र से सम्बद्ध होने लगी, जो कहानी–लेखन के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण सोपान था।

1.3 संस्कृत–कथा–साहित्य का उद्‌भव और विकास

संस्कृत–कथा–साहित्य के उद्‌भव और विकास पर यदि दृष्टि डालें तो भारतवर्ष में लोकप्रिय कथा के प्राचीनतम उदाहरण वैदिक वाङ्मय में उपलब्ध होते हैं। ऋग्वेद के संवाद–सूक्तों जिनमें कथोपकथन की प्रधानता है, के रूप में कथा के मूल बीज प्राप्त होते हैं, जिनकी संख्या लगभग 29 है। इनमें पुरुरवा उर्वशी सूक्त 10/95, यम यमी सूक्त 10/10, सरमापणि संवाद 10/108 इत्यादि। इसी प्रकार शुनः शेप, मंडूक सूक्त, नचिकेता सूक्त, अगस्त्य लोपामुद्रा सूक्त आदि में अनेक आख्यान प्राप्त होते हैं ।

ऋग्वेद में बीज रूप में उपलब्ध आख्यान ब्राह्मण आदि ग्रन्थों में पुष्पित एवं पल्लवित दृग्गोचर होते हैं। शतपथ ब्राह्मण की कथा–मन एवं वाणी की कलह की कथा, च्यवन भार्गव तथा सुकन्या मानवी का आख्यान, मनु मत्स्य और जल प्लावन की कथा इत्यादि अनेक उदाहरण हैं।

इसी प्रकार उपनिषद् साहित्य, पौराणिक साहित्य तथा रामायण के विविध कांडों में मुख्य रूप से बालकांड में कथाओं में विषय में वैविध्य प्राप्त होता है। महाभारत को तो ''अनेक उपाख्यानों का सुंदर वन'' कहा गया है। यह दोनों ही आर्ष ग्रंथ परवर्ती अनेक रचनाओं के उपजीव्य कह गए हैं। कालांतर में बौद्ध एवं जैन नामक दो अन्य कथा धाराएं भी इसमें आ सम्मिलित हुई। 380 ई. पूर्व के लगभग प्राप्त जातकों कथाओं की संख्या अनुमानतः 500 है और इनका पंचतंत्र की कथाओं से अत्यंत साम्य माना जाता है। आर्यशूरकृत जातकमाला व अवदान साहित्य भी इसी से सम्बन्धि है।

जैन आचार्य ने भी आगम साहित्य व उनकी व्याख्या के रूप में निर्युक्ति भाष्य, चूर्णी, और टीका में अनेक कथाओं को तथा कालांतर में विविध प्रबंध साहित्य, चरित्र और चंपू साहित्य आदि काव्य विधाओं में धर्म, अर्थ, काम और नीति संबंधी कथाओं की रचना करके प्राकृत और संस्कृत साहित्य के भंडार को समृद्ध किया है।

कालांतर में स्वतंत्र कथा ग्रन्थों का भी प्रणयन हुआ जिनमें विष्णु शर्मा का पंचतंत्र, गुणाढ्य की बृहत्कथा व इसके विभिन्न संस्करण, वेतालपञ्चविंशतिका, सिंहासनद्वात्रिंशिका, शुकसप्तति, पुरुषपरीक्षा, भोजप्रबंध, कथाप्रकाश, सुबन्धु की वासवदत्ता, बाणभट्ट की कादम्बरी एवं हर्षचरित आदि प्रमुख ग्रंथों में मनोरंजन के साथ–साथ हिंदू धर्म तथा संस्कृति का उपदेश भी दिया गया है।

19वीं शताब्दी का अंतिम दशक और 20वीं शताब्दी का प्रारंभिक काल संस्कृत की लघु कथाओं के विकास का युग कहा जा सकता है। 1898 ई से 1910 ई के मध्य त्रयोदश वर्षों में सहस्राधिक लघु कथाएं लिखी गईं, जिनका प्रकाशन पत्र–पत्रिकाओं के अतिरिक्त स्वतंत्र संग्रह के रूप में हुआ। वस्तुः आधुनिक काल में प्रवर्तमान संस्कृत–लघु–कथा की सुदृढ़ और सुदीर्घ परंपरा का श्रेय संस्कृत–पत्र–पत्रिकाओं के प्रकाशन को ही दिया जा सकता है। संस्कृत में पहली पत्रिका काशी से 1866 में **काशी विद्यासुधानिधि** प्रकाशित हुई। संस्कृतचंद्रिका, संस्कृ–तरत्नाकर, सहृदय, शारदा, अमरवाणी, सूर्योदयः, भारती, संस्कृत–परिषद्–पत्रिका, संस्कृतप्रतिभा, दूर्वा, संभाषण संदेशः, परिशीलनम्, विश्ववाणी, कथासरित्, दृक् आदि देश के विभिन्न भागों से प्रकाशित विभिन्न पत्रिकाओं में संपूर्ण देश के कथाकारों की कथाएं प्रकाशित हुई हैं तथा वर्तमान में हो रही हैं। प्रादेशिक संस्कृत संस्थान, संस्कृत अकादमी तथा अन्य संस्कृत–संस्थाएं आधुनिक ज्वलंत विषयों पर संस्कृत–कथा–प्रतियोगिताओं का आयोजन कर कथा विधा को समृद्ध बनाने का उत्साहपूर्ण कार्य कर रही हैं।

आधुनिक संस्कृत–साहित्य का इतिहास नामक पुस्तक में डॉक्टर जगन्नाथ पाठक ने संपादकीय में संस्कृ त–साहित्य के आधुनिक काल को मुख्यतः तीन भागों में बांटा है–

राशिवडेकर युग 1860 से 1930, भट्ट युग 1930 से 1960, राघवन युग 1960 से 1980 तक, जबकि इसी काल को डॉ राजेन्द्रमिश्र ने 'देववाणी सुवासः' की भूमिका में–पुनर्जागरण काल 1784 से 1884, स्थापना काल 1884 से 1950 एवं समृद्धि काल 1950 से अब तक, इस रूप में तीन भागों में विभक्त किया है।

कुछ अन्य विद्वान् इसे स्वतंत्रतापूर्व काल, स्वतंत्रता संघर्षकाल तथा उत्तर स्वतंत्र काल के रूप में विभाजित करते हैं।

इस प्रकार हम आधुनिक कथा–साहित्य का उद्गम अंबिकादत्त व्यास, गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी, भट्ट मथुरानाथ शास्त्री, पण्डिता क्षमाराव की कथाओं में सहजतया देख पाते हैं।

आधुनिक कथा–

संस्कृत–वाङ्मय का गद्य–साहित्य गरिमा व मधुरिमा की अगाध निधि है उसमें भी कथा–साहित्य अति लोकप्रिय विधा है। कवि जिस काल–खण्ड में रहता है वह उस कालखण्ड से प्रभावित होता ही है और वे ही तत्त्व उसके काव्य/साहित्य में परिलक्षित भी होते हैं। संस्कृत के आधुनिक कवियों व आचार्यों द्वारा प्राचीन मानदण्डों

पर खरी उतरने वाली कृतियों का आज भी निरन्तर निर्माण द्योतक है संस्कृत–भाषा में अद्यावधि अविरल रूप से प्रवहमान प्रतिभा–तत्त्व के अक्षुण्ण प्रकाश का। 19वीं शताब्दी से अद्यतन लगभग दो सौ वर्षों का कालखण्ड संस्कृत–साहित्य का अर्वाचीन काल स्वीकार किया जाता है।

अर्वाचीन संस्कृत–काव्य में युगबोध का प्रतिबिंब व्यापक रूप में परिलक्षित होता है। परतंत्रता के विरुद्ध 1857 के गदर, प्रथम एवं द्वितीय विश्व युद्ध की उथल–पुथल और अंग्रेज़ी शासन के विरुद्ध चल रहे स्वतंत्रता–संग्राम का पूर्ण प्रभाव संस्कृत–काव्य सर्जन पर पड़ा। शिवाजी, महाराणा प्रताप, रानी लक्ष्मीबाई, स्वामी विवेकानंद, महात्मा गांधी, सुभाष चंद्र बोस तथा इंदिरा गांधी जैसे स्वतंत्रता–सेनानियों के अमूल्य योगदान, बलिदान एवं त्याग और उनके महनीय चरित्र और क्रियाकलापों ने संस्कृत–साहित्य को अपरिमित विषयवस्तु प्रदान की। इस काल में एक ओर जहाँ राष्ट्रीय चेतना, राष्ट्रानुराग, राष्ट्र–गौरव और राष्ट्रभक्ति परिलक्षित होती है तो दूसरी ओर भारत के सामाजिक जीवन की समस्याओं, विकृतियों, विसंगतियों एवं रूढ़ियों पर साहित्यकारों की सशक्त लेखनी की सक्रियता परिलक्षित होती है।

आधुनिक साहित्य ने अपनी रचनाधर्मिता एवं प्रवृत्तियों के द्वारा अनेक नये आयामों का स्पर्श किया है। प्राचीन कथावस्तु में युगोचित परिवर्तन भी कुछ प्रज्ञामण्डित कवियों द्वारा किया गया है। अपने विभिन्न विषयों एवं विधाओं के माध्यम से उसने अपने नवलेखन का शंखनाद किया है।

इस काल में जहाँ लघुकाव्य, नवगीत, रागकाव्य, संगीतिका, पैरोडीकाव्य, कथा, अनूदित रचनाएं, ललित निबन्ध, समस्यापूर्ति, पत्र–साहित्य, आत्मकथा, यात्रा–वृत्त, रेडियो रूपक आदि विधाओं पर अनवरत लेखन कार्य चल रहा है, वही आधुनिक कथा–साहित्य को समृद्ध बनाने में भी रचनाकारों की कई पीढ़ियाँ सक्रिय है। आज लघुकथा–संग्रह की संख्या लगभग 250 है, वर्तमान संस्कृत लघुकथाओं की कई उपविधाएं विकसित हो रही हैं यथा–स्पश् (जासूस) कथा, टुप् कथा, (जो एक पृष्ठ से भी छोटी) तथा (एक पृष्ठात्मक) पुट कथा, विज्ञान कथा, बालकथा, चित्रकथा, हास्यव्यङ्ग्य कथा, प्रेरक कथा आदि। लघुकथा को परिभाषित करते हुए विभिन्न विद्वानों का मत है–

"A short story is a narrative short enough to be read in a single sitting, written to make an impression on the reader excluding all that does not forward that impression complete and final in itself:.-**ELEN POE**

The Novel is a satisfaction; the short story is a stimulus-**Barry Paine**

इनके अतिरिक्त विलियम हेनरी हडसन, हिंदी कथाकार प्रेमचंद, डा गुलाबराय, अज्ञेय जी, डॉक्टर कृष्ण लाल, डॉ0 राजेंद्र मिश्र, डॉ रहसबिहारी द्विवेदी आदि ने भी कथा एवं कहानी की बहुत सटीक परिभाषाएं दी हैं। चित्रपर्णी कथासंग्रह के प्रारंभ में डॉ0 राजेंद्र मिश्र कहते हैं जिस प्रकार से महाकाव्य के ही एक खंड विशेष की अनुसारिणी कृति खंडकाव्य है, उसी प्रकार कथा के एक अंश से लघु कथा का बोध हो सकता है।' प्रोफेसर राधा

वल्लभ त्रिपाठी ने संस्कृत की कहानियों/ कथा को इस प्रकार सूत्रात्मक शैली में सार्थक रूप में परिभाषित किया है–

जीवनस्यैकदेशनिरूपण–परमाख्याननं कथा। लोकानुकीर्तनं काव्यम्।

अर्थात् यदि आकार की दृष्टि से विचार करें तो लघु कथा निःसंदेह कथा से छोटी होती होगी। संस्कृत–कथा साहित्य परंपरा में कादंबरी जैसी दीर्घाकार कथा है तो शुकसप्तति जैसी लघु कथाएं भी हैं। हिंदी साहित्य में लघु कथा लगभग एक या आधी पेज की होती है। अंग्रेज़ी साहित्य में लघु कथा या शार्ट स्टोरी प्रायः तीन चार पृष्ठों तक होती हैं। संस्कृत–कथाकार और विद्वानों ने अपने कथासंग्रह में लघुकथा को एक–दो पेज से लेकर 10, 12 पेज तक की कथाओं को लघु कथा नाम दिया है, जैसे डॉक्टर विश्वाल, डॉक्टर रवींद्र कुमार पण्डा, प्रोफेसर कलानाथ शास्त्री, प्रोफेसर राधा वल्लभ त्रिपाठी। डॉ राजेंद्र मिश्र ने 'अभिराजयशोभूषण' में कथा, लघु कथा, दीर्घ कथा आदि का स्पष्ट विवेचन करने के साथ ही इन्हें सम्यक् रूप से परिभाषित भी किया है।

आधुनिक संस्कृत कथा–साहित्य अपने नवीन परिदृश्य एवं नए भावबोध के साथ विश्व रंगमंच पर उतरा है। ये कवि न कल्पना की ऊंची उड़ान या अतिरंजित श्रृङ्गारवर्णन या अलंकृत शैली में उलझते हैं, बल्कि सरल सहज, सुबोध, माधुर्य व ओजमयी पदावली में दहेज प्रथा, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, अशिक्षा, भ्रूण हत्या, बालशोषण, पर्यावरण, दलित–विमर्श, नारी–विमर्श, आत्म–सम्मान, वर्ग–भेद, अफीम आदि दुर्व्यसन, करचोरी आदि सामाजिक संचेतना से सम्बद्ध विषयों को प्रमुखता से लेखनीबद्ध करते हैं तथा उनका समाधान भी प्रस्तुत करते हैं। इसमें जहाँ एक ओर अनाचार, दुराचार, नैतिकता–पतन आदि पर प्रहार किया गया है वहीं दूसरी ओर आधुनिक ज्वलन्त समस्याओं के प्रति भी आक्रोश वर्णित है।

आधुनिक संस्कृत–कथाओं में विभिन्न सामाजिक समस्याओं को वर्ण्य–विषय बनाया गया है यथा–ग्रामीण समाज की कुप्रथाएं, (चिन्ता, संघर्ष, अभाव, जनसामान्य की कुण्ठा) अशिक्षा, अन्धविश्वास, नगरीय समाज की विविध विसंगतियां और समस्याएं, सांस्कृतिक अवमूल्यन से उत्पन्न विविध समस्याएं, आर्थिक विसंगतियों एवं धार्मिक जगत् से सम्बद्ध विविध समस्याएं।

चूंकि संस्कृत भाषा पंजाबी, गुजराती आदि की तरह राज्य विशेष की नहीं, प्रत्युत समूचे राष्ट्र एवं विश्व की भाषा है, अतः इसके सर्जक, समीक्षक, लेखक अनुवादक आदि भी पूरे भारतवर्ष से हैं। सम्पूर्ण देश के प्रत्येक भाग में कथाओं की रचना हो रही है एवं कथासंग्रह अस्तित्त्व में आ रहे हैं। पं0 क्षमाराव, भट्ट मथुरानाथ शास्त्री, श्री नारायण शास्त्री, ढुढिराज ब्यास, आर0वी0 कृष्णम्माचार्य, अप्पाशास्त्री राशिवडेकर श्रीधर भास्कर वर्णेकर से लेकर रवीन्द्र कुमार पण्डा, देवर्षि कलानाथ शास्त्री, प्रशस्यमित्र शास्त्री, केशवचन्द्र दाश, प्रभुनाथ द्विवेदी, राधावल्लभ त्रिपाठी, अभिराज राजेन्द्र मिश्र, बनमाली विश्वाल, नलिनी शुक्ला, नारायणदाश, हरिदत्त पालीवाल, प्रमोद भारतीय, प्रमोद कुमार नायक, जगन्नाथ पाठक आदि अनेक कथाकारों की लम्बी सूची प्राप्त होती है।

1.4 प्राचीन एवं आधुनिक कथा में अंतर–

मनोरंजन, ज्ञान, अनुभव की शिक्षा के उद्देश्य से लिखी गई प्राचीन कथाओं में लौकिक रोमांचकारी, अलौकिक तत्त्वों की प्रमुखता थी। उनके पात्रों में राजा रानी, सेठ साहूकार, देवी देवता, विद्याधर आदि पात्र साधारण पात्रों की अपेक्षा अधिक प्रभावी थे। इन कहानियों में मनोवैज्ञानिकता, अनायास आ जाती थी, जबकि आधुनिक कथाकार विविध रूपों और शिल्प आदि की सहायता से अपने लक्ष्यों की पूर्ति करती नवीन कथा के उद्देश्यों में अनुभूति की गहराई तथा संवेदनशीलता को मनोरंजकता और शिक्षा से अधिक महत्त्वपूर्ण स्थान देते हैं। इन कथाओं में मानव–मस्तिष्क को आश्वस्त करने में समर्थ मानव के स्वाभाविक रूपों का यथार्थ अंकन है। आधुनिक मनुष्य में वैज्ञानिकता के प्रभाववश अलौकिक शक्तियों में आस्था समाप्त हो चुकी है। प्राचीन कथा किसी न किसी रस का परिपाक करने के निमित्त लिखी जाती थी, किंतु आज की कथा व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों का अंकन अधिक करती है। वस्तुतः **प्राचीन कथा आदर्शवादी और आधुनिक कथा यथार्थवादी** है।

भाग्य और भगवान् पर विश्वास करने वाली सुखांत प्राचीन कथा श्रवणगुणयुक्त होती थी। उसका प्रारंभ 'एक था राजा एक थी रानी' आदि से प्रायः होता था तथा श्रव्य की अपेक्षा पाठ्य गुणयुक्त होती थी जबकि छोटी–छोटी घटनाओं पर आधारित आधुनिक कथा सुडौलता, संयोजन और सटीक शिल्प–विधान के कारण मोटी–मोटी घटनाओं वाली प्राचीन कथा से एकदम भिन्न प्रतीत होती है। इन कथाओं का कलेवर भले ही एक या दो पृष्ठों का ही हो पर संपूर्ण कथा का मर्म एक वाक्य में ही सारे परिवेश को प्रकाशित कर देता है। रसचर्वणा या आनंद के साथ–साथ समाज में व्याप्त विसंगतियों को जन–जन तक पहुंचा कर उन्हें चेतन कर जगाना ही इन कथाओं का मुख्य उद्देश्य है।

वस्तुतः सफल कथा के न्यूनतम सात अनिवार्य तत्त्व हैं शीर्षक, कथावस्तु, पात्र एवं चरित्र–चित्रण, संवाद, वातावरण, भाषा शैली, उद्देश्य। कथा के यह तत्त्व ही कथा को आख्यायिका या उपन्यास से पृथक् कर देते हैं। विषयवस्तु की बहुरूपता ने कथा–साहित्य का हित यह किया कि संस्कृत भाषा नई परिस्थितियों के अनुकूल भाषा का नया रूप स्वीकार करने को तत्पर हुई।

संस्कृत–कथालेखक हिन्दी तथा अन्य प्रादेशिक भाषाओं में प्रयुक्त होने वाले मुहावरों व कहावतों को भी संस्कृत में अनुदित कर भावाभिव्यक्ति के लिए निर्द्वन्द्व रूप से प्रयुक्त कर रहे हैं–पास में फूटी कौड़ी भी नहीं–'पार्श्वे न स्फुटिता कपर्दिकाप्यधुना' उनका कोई बाल भी बाङ्का नहीं कर सकता है–'न च काऽपि तेषां बालमपि वक्रं कर्तुमर्हति' समझ में नहीं आता यह घर है या नरक–'बुद्धौ नायाति इदं गृहं वा नरकं वा' न नौ मन तेल होगा न राधा नाचेगी–'नं नवमणतैलं भविष्यति न राधा नर्तिष्यति' जेल की हवा खाएगा–'कारागारस्य पवनं खादिष्यति', प्रेम अन्धा होता है–'प्रेम नेत्रहीनं भवति', अंगूर खट्टे हैं–'द्राक्षा अम्लाः दुष्प्रापाः' इत्यादि। संस्कृत–कथा को प्राप्त यह महार्घ उपहार भाषा की जीवन्तता का सूचक बनकर संस्कृत–साहित्य को परिपुष्ट कर रहा है। शब्दों और भाषा के अन्य रूपों से सम्पन्न ये नवीन उद्भावनाएँ अमिधा शक्ति से तो कथा में रंग भरती ही हैं, व्यंजना शक्ति के माध्यम से संकेतों द्वारा भी संस्कृत–कथा को सार्थक और उपादेय बनाती हैं। दैनन्दिन जीवन में प्रयुक्त

होने वाले विभिन्न भाषिक रूपों ने कथा में समाविष्ट होकर भाषा की दुरूहता को समाप्त कर रसप्रवाह तथा भावसम्प्रेषण को सरल बनाया है।

अद्यतन युग में दूरदर्शन और क्रिकेट ने व्यक्ति से सर्वविध रुचियाँ छीन ली है तथापि संस्कृत–कथालेखन परम्परा से हटकर प्रयोगधर्मी शैली में संस्कृत साहित्य की श्रीवृद्धि में योगदान दे रहा है, यह संतोषजनक है।

कथा में युगबोध

युग का बोध अर्थात् युगचेतना। यहां युग का तात्पर्य वर्तमान युग से है न कि किसी अन्य युग से। अर्थात् जिस युग में हम जी रहे हैं। वस्तुतः अपने युग के बोध के बिना कोई रचनाकार आधुनिक नहीं हो सकता। संस्कृत साहित्य की कोई भी विधा अगर आधुनिक है तो उसमें युगबोध अवश्य है। यह युगबोध कभी सामाजिक है तो कभी सांस्कृतिक। कभी ऐतिहासिक है तो कभी राजनैतिक या फिर कभी आध्यात्मिक है तो कभी दार्शनिक। अर्थात् युगबोध के आकार प्रकार अनेक हो सकते है।

स्वातन्त्र्योत्तर काल में कथा–विधा अभिराज राजेन्द्र मिश्र, आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी, देवर्षि कलानाथ शास्त्री, केशव चन्द्र दाश, प्रभुनाथ द्विवेदी आदि कथाकारों से संवलित होती हुई नित–नई ऊंचाईयों को प्राप्त कर रही है। बनमाली बिश्वाल, प्रशस्यमित्र शास्त्री, इच्छाराम द्विवेदी, नारायण दाश, रवीन्द्र कुमार पण्डा, प्रमोद कुमार नायक आदि कथाकारों द्वारा यह विधा निरन्तर यथार्थवादी समान्तर युगबोध को रेखांकित कर रही है। इस युगबोध के मूल में साहित्यिक परिवेश एवं परिस्थितियाँ, परम्परा के प्रति विद्रोह, प्रयोगशीलता की नैसर्गिक प्रवृत्ति तथा कथाकारों की व्यक्तिगत स्थापना की आकाङ्क्षा आदि रहे हैं।

1.5 बोधप्रश्न

1. साहित्य किसे कहते हैं?
2. गद्य के दो भेद कौन से हैं? संस्कृत–कथा–साहित्य के उद्भव और विकास पर एक लघु निबंध लिखिए?
3. आधुनिक संस्कृत–कथा साहित्य में किन विषयों एवं विधाओं पर लेखन कार्य चल रहा है?
4. प्राचीन एवं आधुनिक कथा में पाँच अंतर बताइए?

इकाई–2 देवर्षि कलानाथशास्त्रीकृत ''दम्भज्वरः''

इकाई की रूपरेखा

उद्देश्य

2.1 कथाकार का जीवन परिचय

2.2 कथावस्तु

2.3 हिंदी अनुवाद

2.4 कथा में युगबोध

2.5 बोधप्रश्न

उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई कथाकाव्य पर आधारित है। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप–

1. देवर्षि कलानाथ शास्त्री के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व से परिचित होंगे।
2. उनके द्वारा लिखित कथा 'दम्भज्वरः' की कथावस्तु और उसके अनुवाद को समझ सकेंगे।
3. कथा के युगबोध के विषय में ज्ञान प्राप्त कर लेंगे।
4. प्रश्न उत्तर के माध्यम से कवि एवं उनकी रचना के विषय में और अवगत हो सकेंगे।

2.1 कथाकार का जीवन–परिचय

भाषाविद् एवं चिन्तक देवर्षि कलानाथ शास्त्री नाट्यवल्लरी, कवितावल्लरी एवं आख्यानवल्लरी के प्रणेता के रूप में क्रमशः नाटककार, कवि एवं कथाकार के रूप में विख्यात हैं। आपका जन्म 15 जुलाई 1936 को जयपुर राजस्थान में हुआ। आपने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से संस्कृत साहित्य में साहित्याचार्य तथा राजस्थान विश्वविद्यालय से अंग्रेज़ी–साहित्य में एम.ए. परीक्षा प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण की। आपने संस्कृत–साहित्य का अध्ययन अपने विद्वान् पिता श्री भट्टमथुरानाथ शास्त्री तथा वहाँ के शिखर विद्वानों म.म.पं. गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी, पं. पट्टाभिराम शास्त्री, आचार्य जगदीश शर्मा, आशुकवि पं. हरिशास्त्री आदि से किया। अंग्रेज़ी साहित्य के प्राध्यापक के रूप में आपने दशकों तक राजस्थान विश्वविद्यालय के विभिन्न महाविद्यालयों में अध्यापन कार्य किया। आपने अंग्रेज़ी साहित्य के अलावा वेद, भारतीय दर्शन, भाषाशास्त्र आदि का गहन अध्ययन करते हुए बंगला, गुजराती, तेलुगु आदि लिपियों पर मौलिक शोधकार्य किया है। आप बचपन से ही संस्कृत के छन्दों के लेखन और गायन में प्रवीण रहे। आपने संस्कृत–साहित्य का अवगाहन करते हुए एक नए छन्द का निर्माण भी किया, जिसका नाम पण्डित पद्मशास्त्री जी ने आप ही के नाम से 'कलाशालिनी' रखा। यह सम्पूर्ण संस्कृत–जगत् के लिए एक महान् उपलब्धि रही है।

आपके द्वारा हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेज़ी भाषा और भारतीय संस्कृति–विषयक अनेक ग्रंथ प्रकाशित हुए हैं जिनमें प्रमुख ग्रंथ निम्न हैं–'जीवनस्य पृष्ठद्वयम्' (उपन्यास), आख्यानवल्लरी, (कथा संग्रह) 'नाट्यवल्लरी' (नाटक), 'सुधीजनवृत्तम्' (जीवनी संग्रह),कवितावल्लरी' (काव्य संग्रह), आधुनिक काल का संस्कृत गद्य साहित्य, मानक हिन्दी का स्वरुप, संस्कृत–साहित्य का इतिहास, भारतीय संस्कृति–स्वरूप और सिद्धान्त, संस्कृति के वातायन, पोयट्री ऑफ जगन्नाथ पंडितराज, हॉराइजन्स ऑफ संस्कृत आदि प्रमुख रहे हैं।

शास्त्री जी के संपूर्ण गद्य लेखन के पीछे चिंतन की गहरी संपृक्ति है। वास्तव में आपका कर्तृत्त्व बोध–प्रबोध का कर्तृत्त्व है। गहरे जीवनबोध, परंपरा पर्यालोचन और युगीन विमर्श से वह विशिष्ट और शिष्ट है।

आपको अनेक राजकीय सम्मानों व उपाधियों से अलंकृत किया जा चुका है जिनमें प्रमुख हैं–महामहिम राष्ट्रपति द्वारा संस्कृत–वैदुष्य–सम्मान, 'महामहोपाध्याय' की उपाधि, संस्कृत–साधना शिखर–सम्मान, संस्कृत पत्रकारिता का शिखर सम्मान, रामानन्द–साहित्य–साधना–सम्मान, साहित्य अकादमी द्वारा संस्कृत–पुरस्कार, राजस्थान संस्कृत–अकादमी द्वारा पुरस्कार, 'साहित्य–महोदधि' उपाधि, 'सरस्वती पुत्र' सम्मान, 'साहित्य शिरोमणि' उपाधि, रामानन्द पुरस्कार, मानवसंसाधन विकास मंत्रालय, नई दिल्ली द्वारा सम्मान, भूतपूर्व जयपुर महाराजा स्व. ब्रिगेडियर भवानी सिंह द्वारा सम्मान, 'मानस श्री' सम्मान, वाङ्मय–मार्तण्ड–सम्मान, साहित्य–मण्डल नाथ द्वारा ब्रजभाषा– सम्मान आदि।

आप वर्तमान समय में प्रधान सम्पादक–'भारती' संस्कृत मासिक पत्रिका, पीठाचार्य– भाषामींमासा एवं शास्त्रशोधपीठ–विश्वगुरुदीप आश्रम शोध संस्थान, जयपुर, सदस्य–संस्कृत आयोग, भारत सरकार आदि विशिष्ट पदों पर रहते हुए उत्तरदायित्व का कुशलता से निर्वहन कर रहे हैं। वास्तव में आपका योगदान स्तुत्य एवं अनुकरणीय हैं।

2.2 कथावस्तु

प्रस्तुत कथा 'दम्भज्वरः' में आधुनिक युवकों के आत्मिक दर्प के खण्डन–मण्डन को रूपायित किया गया है। दो युवा प्रशासनिक अधिकारी एक धोती पहने विद्वान् के साथ प्रथम श्रेणी में यात्रा कर रहे हैं और उन्हें पुराणपंथी समझ कर अंग्रेज़ी में आपस में उनकी आलोचना करते हैं। अंत में उन्हें मालूम होता है कि वह विद्वान् अंग्रेज़ी के प्रोफेसर हैं और उस कमिश्नर के गुरु हैं, जिसके अधीन वे काम करने जा रहे हैं।

2.3 हिंदी अनुवाद

दम्भ–ज्वरः

यथैव धूमशकटिः स्टेशनोपरि समागत्य स्थिता, किशोरेण वसन्तेन च प्रथम–श्रेण्याः प्रकोष्ठे स्वकीयं वस्तुजातं निधापितम्। तदनन्तरं द्वावपि सुहृदौ प्रकोष्ठे दृष्टिपातमकुरुतां यत् तस्यां यात्रायां के के सहयात्रिणस्तयोर्भविष्यन्ति। केवलं चतस्रः शायिकास्तस्मिन् कक्षे अभूवन्। एकस्यां शायिकायां पूर्वत एव कश्चन भद्रजनो भारतीय–वेषभूषायां, धौतवस्त्रकञ्चुकादि धारयन्, आकृत्या सरलः, वार्धक्यासन्नवयाः उपविष्टोऽभूत्। कोऽयं भवेदिति जिज्ञासायाः शमनं

प्रकोष्ठाद् बहिर्लम्बमानात् आरक्षणपत्रकादनायासेनैव भवितुं शक्नुयादिति ताभ्यां चिन्तितं, किन्तु रात्रौ पत्रकस्यास्योपरि नाभूत्तावान् प्रकाशो यत्तत्र लिखितं नाम स्पष्टं पठितुं शक्येत।

जैसे ही रेलगाड़ी स्टेशन पर आकर खड़ी हुई, किशोर और वसन्त ने प्रथम श्रेणी के डिब्बे में अपना सामान रख दिया। उसके बाद दोनों मित्र डिब्बे में देखने लगे कि यात्रा में उनके सहयात्री कौन–कौन होंगे। उस कक्ष में केवल चार ही सीट थीं। एक सीट पर पहले से ही कोई सज्जन व्यक्ति प्रौढ़ावस्थायुक्त भारतीय वेशभूषा में, सफेद कुर्ता आदि धारण किए हुए सरल आकृति वाले बैठे थे। यह कौन हैं? इस जिज्ञासा को शान्त करने के लिए (पता लगाने के लिए) दोनों ने प्रकोष्ठ (कोच) से बाहर लगे हुए आरक्षण पत्र से पता करने का प्रयत्न किया, किन्तु रात के अंधरे व पर्याप्त रोशनी न होने के कारण नाम नहीं पढ़ सके।

अतस्तादृशं प्रयत्नमकृत्वा दंभवशाद् औद्धत्यपूर्णया मुद्रया च प्रकटमेव आंग्लभाषायां वसन्तः किशोरमवदत्–''मित्र, अस्यां यात्रायां तु कश्चन पण्डितो भाग्ये सहयात्रित्वेन लिखितः। आवयोः स्वाच्छन्द्ये व्यवधानं तु भविष्यत्येव। यद्ययमुपरिवर्तिन्यां शायिकायां गत्वा निद्राणो भवेत्, तदा तु सुविधा स्यात्। किन्तु उपरितनं शायिकाद्वयं त्वावयोरस्तीति सूचितमस्ति रेलविभागीय– यात्रिसहायकेन। एकोऽन्यो यात्री मध्येमार्गमारोक्ष्यति।''

इसलिए वैसा प्रयत्न न करते हुए घमण्ड के कारण, धृष्टतायुक्त मुद्रा बनाकर वसन्त ने किशोर से आंग्लभाषा में कहा–''मित्र, इस यात्रा में तो भाग्य में कोई पण्डित ही सहयात्री रूप में लिखा है। हम लोगों की स्वतंत्रता में विध्न तो निश्चित ही है। यदि (महाशय) ऊपर की सीट पर जाकर सो जाएं तो कुछ सुविधा हो। किन्तु रेल विभाग–कर्मचारी द्वारा ऊपर की दोनों सीटें हमारी ही बताई गयी हैं। कोई एक अन्य यात्री मध्य मार्ग में हमारा सहयात्री (बीच में चढ़ेगा) होगा।

किशोरस्य मनसि सकृत् सेयमिच्छा तु समुदिता यदेनम् उपरितन– शायिकायां गत्वा शयितुं कथयेत् येन अधस्तन–शायिकयोरुपविश्य तौ पान–भोजनादि स्वच्छन्दं कर्तुं प्रभवेताम्, किन्तु तस्य वयो दृष्ट्वा नियमविरुद्धायास्मै कार्याय कथयितुं साहसमस्य नाभूत्। प्रकटं त्वनेन आंग्लभाषायां वसन्ताय कथितम् ''अरे, तिष्ठतु तावत्। उपविशत्ययमत्रैव। उपरि आरोहतो वराकस्यास्य धौतवस्त्रं नीचैःपतिष्यति।'' एतदुपरि द्वाभ्यामप्युन्मुक्तहास्यं विहितम्। अनयोरौद्धत्यपूर्ण हासं श्रुत्वा वृद्धेन सहयात्रिणा सकृद् गंभीरमुद्रया मित्रद्वयस्यास्योपरि दृष्टिः पातिता।

किशोर के मन में एक बार इच्छा हुई कि उन महोदय से कहे कि वह ऊपर की सीट पर जाकर सो जाएं, ताकि नीचे की सीट पर बैठकर वे दोनों स्वतंत्रतापूर्वक खा–पी सकें। किन्तु उनकी आयु देखकर और नियम के विरूद्ध इस (कार्य) के लिए कहने का साहस नहीं किया। उसने वसन्त से अंग्रेज़ी में कहा–''अरे रुको। यह यहीं बैठेंगे, ऊपर चढ़ने पर तो इनका धौत (सफेद) वस्त्र (धोती आदि) नीचे गिर जायेगा।'' इस बात पर दोनों ठहाका मारकर हंस पड़े। उनकी उदण्डतापूर्ण हंसी को सुनकर उस वृद्ध सहयात्री ने एक बार गंभीर मुद्रा में दोनों को देखा।

तदनन्तरं सहज–निश्चिन्त–भावेनासौ शायिकोपरि उपविश्य पूजनस्य, पाठस्य, ध्यानस्य वा कांचनक्रियां तूष्णीम् निर्द्वन्द्वतया च कर्तुमारभत। तदैव च रेलशकटिः प्रस्थिता। युवक–मित्रद्वयेनापि निर्द्वन्द्वभावेन किंचन पेयं पूर्व

पीतं, तदनन्तरं भोजनादि विहितम्। वृद्धस्तु तावता कालेन आस्तिक–कृत्यं शान्तिपूर्वक समाप्य शयानोऽभूत्। मध्यरात्रिः संजाताभूत् किन्तु युवकद्वयं धूमपानेन सह वार्तालापे संलग्नमेवाऽभूत्। यदि तेन वृद्धस्यास्य शयने व्यवधानं जातं भवेत्, तर्हि यद्ययमाङ्ग्लभाषाभिज्ञस्तदा तेन अनयोर्वार्तालापं श्रुत्वा स्पष्टमेव ज्ञातं भवेद्यत् काविमौ, कस्मै कार्याय कुत्र गच्छतः।

उसके बाद उन्होंने (वृद्ध पुरुष ने) सहज, निश्चिंत भाव से सीट पर बैठकर पूजा–पाठ, ध्यान–क्रिया आदि चुपचाप निर्द्वन्द्व भाव से करना शुरू कर दिया, उसी समय ट्रेन चल पड़ी। दोनों मित्रों ने भी निर्द्वन्द्व भाव से पहले कुछ पेय–पदार्थ पिया और फिर भोजन किया। वृद्ध सज्जन भी तब तक आस्तिक कार्य (पूजादि) को समाप्त करके सो गए। मध्यरात्रि हो गई थी, किन्तु दोनों युवक धूम्रपान के साथ बातचीत में व्यस्त थे। वृद्ध की नींद में व्यवधान (खलल) पड़ता यदि वह आंग्ल भाषा जानते तो–हम दोनों के वार्तालाप को सुनकर स्पष्ट ही जान जाते कि वे दोनों कौन हैं? और किस काम के लिए कहाँ जा रहे हैं?

ततश्च अनयोः औद्धत्यस्य, प्रथमश्रेण्यां पानभोजनादि–स्वछन्दव्यवहारस्यापि च रहस्यमस्य विदितं भवेत्। तेन हि स्पष्टमिदमवगतं भवेत् यत युवकद्वयेनानेन स्वशिक्षां समाप्य सांप्रतमेव उच्च–राजकीय–सेवायाः प्रतियोगितापरीक्षायां साफल्यमधिगतम्। तदनन्तरं प्रशिक्षणं गृहीत्वा, प्रशिक्षणावधेः समाप्तौ संप्रति तस्यैव राज्यस्यान्यस्मिन् नगरे पदस्थापनमनयोः सहैव संजातमिति कृत्वा नवीनयोः पदयोरुपरि स्व–स्व–कार्यभारग्रहणार्थं तौ गच्छतः। समृद्ध–परिवारस्य युवकाविति सर्वोपि तेषां व्यवहारः पाश्चात्त्य–समृद्ध–देश–सभ्यतानुयायी, वेषभूषापि पूर्णतः पाश्चात्त्या। आधुनिक– सभ्यतायां दक्षत्वसूचनाय अनयोर्विशेषतो ध्यानं पैंट इत्याख्य–परिधानस्य वलेरुपरि अर्थात् 'क्रीज' इत्याख्योपरि, पादत्राणयोः मसृण–चाकचक्यस्योपरि च वर्तते। कीदृशस्य महार्घस्य धूमवर्तिका– प्रकारस्य, कीदृश्या उचस्तरीय–यात्रा–मंजूषायाश्च प्रयोगस्तैः क्रियते, एवंविध एव योग्यताया मानदण्डस्तथाविधानां जनानां भवतीति तयोर्वार्तया प्रतीयते।

तभी इन दोनों की धृष्टता, प्रथम श्रेणी में खाने–पीने व स्वच्छन्द व्यवहार के इस रहस्य को जान पाते। उससे यह स्पष्ट था कि ये दोनों अपनी शिक्षा समाप्त करके अब उच्च राजकीय सेवा की प्रतियोगिता परीक्षा में सफलता प्राप्त कर चुके है। उसके बाद प्रशिक्षण (ट्रेनिंग) लेकर, प्रशिक्षण की अवधि समाप्त करके अब उसी राज्य के दूसरे नगर में नौकरी ज्वाइन करने नए पद पर अपना कार्यभार ग्रहण करने जा रहे हैं। दोनों युवक समृद्ध परिवार के हैं और उनका व्यवहार पाश्चात्त्य देश की सभ्यता का अनुकरण करने वाला और वेशभूषा भी पूरी तरह पाश्चात्त्य थी। आधुनिक सभ्यता के पक्के अनुयायी होने का प्रमाण देने के लिए उनका पूरा ध्यान पैंट की क्रीज़ (वलेः) के ऊपर तथा जूतों की चमक के ऊपर ही था। कितनी महंगी सिगरेट है, कितनी अच्छी सूटकेस (अटैची) का प्रयोग कर रहे हैं, उस तरह के लोग इसी को योग्यता का मानदण्ड मानते हैं, ऐसा उन दोनों की बातचीत से पता चल रहा था।

अत एव अपरस्मिन् दिने कीदृशेन परिधानेन सुसज्जां कृत्वा स्वकार्यालये गत्वा अधिकारिपदस्य कार्यभारो ग्रहीतव्यः, तदनन्तरं च शिष्टाचारानुसारम्, उच्चाधिकारिणां सभ्याचरण– संहितानुरूपं च तस्य नगरस्य उच्चाधिकारिणां गृहे गत्वा कथम् अभिवादनं करणीयम्, तत्र च परिष्कृतवार्तालाप–द्वारा तेषामुपरि स्वकीय–योग्यतायाः

प्रतिभायाश्च प्रभावः कथं संपातनीय इति तयोर्वार्तालापस्य विषयोऽभूत्। तस्मिन् नगरे तौ मुख्यन्यायाधीशस्य, संभागीयायुक्तस्य, अपरेषां च सर्वोच्चाधिकारिणां गृहे, कार्यालये वा गत्वा संभाषणं कया रीत्या करिष्यतः इति तदानीं निश्चितवन्तौ तौ। स्वकीय–वैदुष्यस्य, योग्यतायाश्च प्रमाणं संभाषणेन प्रदातुं कतिपयानि आंङ्गलभाषायाः पुस्तकानि पत्रपत्रिकाश्च आनीता अभूवंस्ताभ्याम्। तत्सर्वं पठित्वा विलम्बेन तौ अशयाताम्।

अतः दूसरे दिन कैसे कपड़े पहनकर, अपने आफिस में जाकर अधिकारी पद का कार्यभार ग्रहण करें, और शिष्टाचार के अनुसार बड़े अधिकारियों के आचरण व नियम के अनुसार उस नगर के बड़े अधिकारी के घर जाकर कैसे नमस्कार (कुशल क्षेम) करें, और कैसे परिष्कृत मंजी हुई बातचीत द्वारा उन अधिकारियों पर अपनी योग्यता और प्रतिभा का प्रभाव डालें–यही उन दोनों की बातचीत का विषय था। उस नगर में मुख्यन्यायाधीश के, संभागीय सचिव के और अन्य बड़े अधिकारियों के घर में या कार्यालय में जाकर कैसे बातचीत करें, यह वे दोनों निश्चित कर रहे थे।, अपने ज्ञान, योग्यता का प्रमाण देने के लिए दोनों कुछ अंग्रेज़ी की पुस्तकें, पत्रपत्रिकाएं भी लाए थे। उन सबको पढ़कर देर से ही वे दोनों सोए।

प्रातःकाले संजाते किंचिद् विलम्बेन यदा वसन्तः किशोरश्च जागृतौ तदा तयोः सहयात्री वृद्धः पूर्वत एव जागरित्वा समाचार–पत्रं पठन्नभूत्। धूमशकटिस्तदापि त्वरया यान्ती अभूत्। उत्थाय च पाश्चात्यपद्धत्या नित्यकृत्यं विधाय यदा ताभ्यां पुनर्वृद्धजनस्योपर्यवधानं दत्तं तदा तयोराश्चर्यमभूत् यत्स एकं समाचार–पत्रं तुं भारतीयभाषाया वाचयन्नभूत्, किन्त्वपरं समाचारपत्रम् आङ्ग्लभाषाया अपि तत्सविधेऽभूत्। कदाचिदयं पुराणपथानुयायी धौतधारी पण्डितोऽपि आङ्गलीं भाषां जानानो भवेदिति शंका तु तयोरभूत्, किन्तु साश्चर्यं तौ परस्परं स्मितवन्तौ।

सबेरा होने पर कुछ देर से ही वसन्त और किशोर जब उठे तब उनका सहयात्री वृद्ध पहले से ही उठकर समाचार पत्र पढ़ रहे थे। रेलगाड़ी भी तेज गति से चल रही थी। उठकर और पश्चिमी ढंग से नित्यक्रिया करने के बाद जब उन दोनों ने वृद्ध पुरुष पर ध्यान दिया तब आश्चर्यचकित हो गए कि वह (सज्जन) एक अखबार तो भारतीय भाषा में लेकिन दूसरा अंग्रेजी भाषा में पढ़ रहे थे। यह पुरातनपंथी के धोती पहनने वाले पण्डित भी अंग्रेज़ी भाषा को जानते होंगे ऐसी शंका से दोनों आश्चर्ययुक्त होकर आपस में मुस्कुराने लगे।

मन्ये अस्मदुपरि प्रभावं पातयितुमेवानेन आङ्ग्लभाषायाः समाचारपत्रं गृहीतमस्ति इति मनसि विचिन्त्य ताभ्यां संतोषः कृतः। न किमपि प्रोक्तं ताभ्याम्। केवलं तदिदं लोकभाषायां पृष्टं यद् वृद्ध–महाशय! कुत्र गच्छति, कस्य स्टेशनस्योपरि अवतरिष्यति। सोऽयं तेषां प्रथमोऽन्तिमश्च वार्तालापोऽभूत्। वृद्धमहाशयोऽपि तस्मिन्नेव नगरे गच्छति यत्र तौ गच्छतः, इति ज्ञात्वा तावपि वृद्धमहाशयादाङ्ग्लभाषायाः पत्रमादाय पठितुमारब्धवन्तौ यतस्तेषां सर्वेषामपि गन्तव्यं नगरं प्राप्तुं धूमशकट्या साम्प्रतमपि होराद्वयं ग्रहीतव्यमभूत्।

शायद हमारे ऊपर प्रभाव डालने के लिए यह अंग्रेज़ी का अखबार पढ़ रहे हैं, ऐसा मन में सोच कर दोनों ने संतोष किया। उन दोनों ने कुछ नहीं कहाँ केवल सामान्य भाषा में पूछा– महोदय, आप कहाँ जा रहे हैं? किस स्टेशन पर उतरेंगे? यही उनके साथ पहली और अंतिम बातचीत थी। वृद्ध महाशय भी उसी शहर में जा रहे थे,

जहाँ वे दोनों, यह जानकर उन दोनों ने भी उनसे अंग्रेज़ी के समाचार पत्र को लेकर पढ़ना प्रारम्भ कर दिया, क्योंकि सभी के गन्तव्य तक रेलगाड़ी पहुंचने में अभी दो घण्टे थे।

यदा तावाङ्ग्लभाषीयं पत्रं समापितवन्तौ तदा किञ्चिदप्यनुक्त्वा वृद्धसज्जनेन भारतीय–भाषायाः पत्रमपि तत्संमुखे निहितं यत्कदाचिदस्य पठनस्यापि इच्छा तयोर्भवेत्। किन्तु तदिदं ताभ्यां न गृहीतम्। वृद्धसज्जनाय किञ्चिदप्यनुक्त्वा परस्परमेव तावाङ्ग्लभाषायां संलपन्तौ, संभवतो वृद्धयात्रिणमपि सत्सर्वं श्रावयितुमिच्छतः स्म यद् भारतीयभाषायाः पत्रेषु पठनीया सामग्री एव न भवति। नगराणां, रथ्यानां च लघवः, अनावश्यका वा समाचारा भवन्ति, वैचारिकी सामग्री त्वाङगलभाषापत्रेष्वेव भवति इत्यादि। गतायां रात्रावपि तयोः परस्परसंलापे आङ्ग्लभाषाया एवं प्रयोगोऽभूत्प्रामुख्येन। मध्ये मध्येऽवश्यं मातृभाषायाः पदान्यभूवन्, वाक्यानि वा। उच्चाधिकारिणां, अभिजातवर्गीयाणां च प्रमाणमेवेदं भवति यत्ते द्रुतमाङ्गलीं वक्तुं पारयन्तीति भवेत्तयोराकूतम्।

जब दोनों ने अंग्रेज़ी पत्र पढ़ लिया तब बिना कुछ कहे वही वृद्ध सज्जन के सामने रखे हिन्दी पत्र (अखबार) पढ़ने की इच्छा होने पर भी उनसे नहीं लिया। वृद्ध महोदय से बिना कुछ भी बोले आपस में ही अंग्रेज़ी में बात करते हुए संभवतः उन वृद्ध सज्जन को सब सुनाने की इच्छा से कह रहे थे कि भारतीय/हिन्दी भाषा के अखबार में पढ़ने की कोई सामग्री ही नहीं होती, नगर और छोटी जगहों के अनावश्यक समाचार ही होते हैं, वैचारिक (अच्छी) सामग्री अंग्रेज़ी के ही अखबार में होती है, आदि–आदि। पिछली रात की उनकी अधिकांश बातचीत भी अंग्रेज़ी में ही थी। बीच–बीच में कुछ शब्द या वाक्य अवश्य ही हिन्दी में भी बोल देते थे। उच्च अधिकारी लोग व बड़े लोग की यह पहचान ही है कि वे शीघ्रता से अंग्रेज़ी बोलने में पारंगत होते हैं–ऐसा उन दोनों का तात्पर्य था।

तदैव तेषां गन्तव्यं नगरं समायातम्। तेष्वेव क्षणेषु ताभ्यां निश्चितं यदधिकारिणां विश्रामभवने (Circuit House) स्नानादिकं विधाय कस्यां भूषायां सुसज्जितौ भूत्वा प्रथमं तौ तस्य संभागस्य सर्वोच्च प्रशासकम् आयुक्तं मिलिष्यतस्तस्य कार्यालये। यथैव स्टेशनस्योपरि शकटिरवरुद्धा, तौ भारवाहकमाकारितवन्तौ। वृद्धसज्जनस्तु तूष्णीकः स्थितोऽभूत्। 'मन्ये पण्डितमहाशयः स्वकीयं भार स्वयमेव वक्ष्यती'' ति सूचिकया परिहासदृशा वसन्तेन वृद्धोऽवलोकितः। किन्तु तदैव तस्य प्रकोष्ठस्य संमुखे कश्चित्प्रभावशालिन्या आकृत्या विभूषितः सज्जनो दृष्टिपथमगात्। तस्य पृष्ठतः केचन परिचारका अप्यभूवन्।

उसी समय उनका गन्तव्य नगर आ गया। उसी क्षण उन दोनों ने निश्चित किया कि सबसे पहले वे दोनों अधिकारी विश्राम भवन में पहुंचकर, स्नानादि करके, तैयार होकर उस विभाग के सबसे बड़े प्रशासक आयुक्त से उनके कार्यालय में मिलेंगे। जैसे ही स्टेशन पर गाड़ी रुकी, उन दोनों ने भार वाहक (कुली) को बुलाया। वृद्ध सज्जन शान्त ही बैठे थे। 'लगता है पण्डित महाशय अपना सामान स्वयं ही उठायेंगे' ऐसा सोचते हुए वसन्त ने हंसते हुए वृद्ध को देखा। किन्तु तभी उस कोच के सामने से कोई बहुत प्रभावशाली आकृति वाले सज्जन आते हुए दिखे। उनके पीछे कुछ सेवक भी थे।

तैः सह न किमपि यात्रावस्तुजातमासीदिति विलोकनेन प्रतीयते स्म यदेते कस्यचन स्वागताय समागता, न यात्रायै। प्रभावशालिना सज्जनेन तमेव वृद्धमहाशयं वीक्ष्य, प्रकोष्ठे सरभसमागत्य तस्य चरणस्पर्शः कृतः। परिचारकैर्वृद्धमहाशयस्य वस्तुजातं गृहीतम्। आश्चर्यचकितेन वसन्तेन परिचारकेष्वेकतमः पृष्टो यत्कोयं प्रभावशाली सज्जनः, कोऽयं च वृद्धजनो यं ग्रहीतुमयमागतः। श्रुत्वैवेदं वसन्तो विस्मयस्य परां काष्ठां प्राप यत्स्वागताय समागतो महानुभावस्तस्य प्रदेशस्य सर्वोच्चः प्रशासकः संभागीयायुक्तोस्ति। अनेन सह मिलितुम्, एनमेव च स्वसंभाषणेन प्रभावयितुं मित्रद्वयेन समग्रां रात्रिं योजना निर्मिता अभूवन्। यस्य च स्वागताय सोऽयं समायातोऽस्ति स वृद्धसज्जनः, वसन्त–किशोरयोः सहयात्री, अस्य संभागीयायुक्तस्य तदा गुरुरभूद् यदा स विश्वविद्यालये पठति स्म। अंतः स्वगुरुं स्वगृहे नेतुं सोऽयमायुक्तः स्वयमत्र समागतः । एतस्य गृहे एव गुरुमहाशयः कतिपयदिवसान् प्रवासं करिष्यति।

उनके साथ कोई यात्रा का सामान भी नहीं था, देखने से लग रहा था कि वह यात्रा के लिए नहीं किसी के स्वागत के लिए आए हुए हैं। उस सज्जन ने वृद्ध महाशय को देखकर शीघ्रता से प्रकोष्ठ में आकर उनके चरणस्पर्श किये। नौकरों ने वृद्ध महाशय का सामान ले लिया। आश्चर्ययुक्त वसन्त ने एक सेवक से पूछा कि यह व्यक्ति कौन हैं? और यह वृद्ध सज्जन कौन हैं, जिनको यह लेने आए हैं। उत्तर सुनकर वसन्त बहुत आश्चर्य में पड़ा गया कि जो वृद्ध के स्वागत के लिए आए है वह महानुभाव उस प्रदेश के सबसे बड़े शासक संभागीय आयुक्त हैं। इन्हीं से मिलने और अपनी बातचीत से प्रभावित करने की योजना दोनों मित्र सारी रात बना रहे थे। और जिनके स्वागत के लिए वह (बड़े अधिकारी) आए थे वह वृद्ध सज्जन जो वसन्त–किशोर के सहयात्री भी थे, वह उन अधिकारी के विश्वविद्यालय के गुरु थे (जब वह पढ़ते थे)। इसलिए अपने गुरु को अपने घर ले जाने के लिए वह आयुक्त खुद ही यहां उनको लेने आए थे। उनके ही घर गुरु जी कुछ दिन प्रवास करेंगे।

कस्मै कार्याय सोऽयं समागत इति प्रष्टुं तु वसन्तेन संभ्रमवशात् समय एव न लब्धः यतोऽस्य भयमभूत् यदत्र एवंविधायां स्थितौ तम् आयुक्तमहाशयो द्रक्ष्यति। किन्तु वृद्धमहाशयस्य नाम ज्ञातुमधुनाऽनेन प्रकोष्ठाद् बहिर्लम्बमानमारक्षणपत्रकं पठितम्। तत्र नाम लिखितमासीत्– ''शशाङ्कशेखरवन्द्योपाध्याय'' इति। यथैव तदिदं नाम किशोराय सूचितं तेन, किशोरः स्पष्टमस्मरत् यत्र शशांकशेखर बनर्जी–नामकः विश्वविद्यालयीय–आङ्ग्लभाषा–विभागाध्यक्षः प्राध्यापकः शिक्षाजगति सुप्रथितोऽभूत्। किमयमेव धौतधारी सुप्रथितो विद्वान् तयोः सहयात्री अभूत्? नूनमयं संभागीयायुक्तस्थ विश्वविद्यालये आङ्ग्लभाषाध्यापको भवेत् इति सपद्येव ताभ्यामवबुद्धम्।

किस कार्य के लिए वह यहां आए हैं जल्दी में यह पूछने का समय वसन्त को नहीं मिला, क्योंकि वह सब स्थिति (दृश्य) वह आयुक्त महोदय देख लेंगे। अब इन वृद्ध महाशय का नाम जानने के लिए बाहर लगे हुए आरक्षण पत्र को उसने पढ़ा। वहां 'शशाङ्कशेखर बन्द्योपाध्याय' नाम लिखा था। जैसे ही उसने यह नाम किशोर को बताया, किशोर ने याद किया शशांकशेखर बनर्जी, विश्वविद्यालय के आंग्लभाषा के विभागाध्यक्ष और शिक्षाजगत् में सुप्रसिद्ध हैं। क्या ये धोती धारी प्रसिद्ध विद्वान् उन दोनों के सहयात्री थे? निश्चित ही यह उन संभागीय आयुक्त के विश्वविद्यालय में आंग्लभाषा के अध्यापक थे, शीघ्र ही वे दोनों ये समझ गए।

हन्त! तमिमं दृष्ट्वा किं किं चिन्तितमासीदाभ्याम्! कथमस्योपहासोऽप्याङ्ग्लभाषायां कृतोऽभूत्। केवलं वेषं, आस्तिकीश्चेष्टाश्च दृष्ट्वैव कथमयं सामान्यो जनश्चिन्तितोऽभूदिति स्मृत्वैव सम्प्रति लज्जया चरणयोरधस्ताद् भूमिरपसरन्तीव अनुभूता ताभ्याम्। किन्तु किमधुना पश्चात्तापेन? 'हन्त, मा खलु सोयं सर्वमिदं संभागीयायुक्ताय ब्रूयात्। शयानेनानेन अनयोर्वार्तालापो न श्रुतो भवेदिति' तावीश्वरं प्रार्थयताम्। प्राध्यापको वन्द्योपाध्यायस्तावान् गंभीरप्रकृतिरस्ति यत्स न किमपि कथयिष्यतीति चिन्तितं ताभ्याम्। किन्तु पदस्थापनस्य प्रथमे एव दिवसे आधिकारिको दम्भः, सर्वोऽपि चौद्धत्यज्वरः अवशाम्यन्निवानुभूतो द्वाभ्यामपि सुहृद्भ्याम्। पण्यशकटिमादाय तूष्णीकौ तौ विश्राम–भवनं प्रति प्रचलितौ।

ओह! उनको देखकर क्या–क्या सोच रहे थे। अंग्रेज़ी में उनकी कितनी हंसी भी उड़ाई थी। केवल वेषभूषा उनकी आस्तिक चेष्टा (पूजा–पाठ) को देखकर उनको सामान्य व्यक्ति मान लिया–यह सोचकर ही इस समय उन दोनों को शर्म से अपने पैरों के नीचे से जमीन खिसकती हुई सी लगी। लेकिन अब पछतावे से क्या? अरे! शायद ये महाशय सारी बातों को संभागीय आयुक्त से बता दें। काश सोते हुए इन्होंने हम लोगों की बातचीत न सुनी हो–ऐसी वह दोनों भगवान् से प्रार्थना करने लगे। प्राध्यापक बन्द्योपाध्याय जी इतने गंभीर स्वभाव के हैं कि वह कुछ भी नहीं कहेंगे–ऐसा दोनों ने सोचा। किन्तु पैर रखने के पहले ही दिन उन दोनों का अधिकारी होने का घमण्ड, सारी उद्दण्डता का ज्वर शान्त सा हो गया। टैक्सी लेकर शांत होकर दोनों विश्राम–भवन को चल पड़े।

2.4 कथा में युगबोध

कलानाथ शास्त्री ने कथा–लेखन में कुछ अनोखे प्रयोग भी किए हैं। प्राचीन भारतीय परंपरा के विरुद्ध नए युग में किस प्रकार प्रत्येक क्षेत्र में मूल्यों का ह्रास हुआ है, इसके लिए उन्होंने अपनी कहानियों में आधुनिक युग की विकृतियों का चित्रण किया है।

2.5 बोधप्रश्न

1. 'दम्भज्वर' कथा के लेखक का जीवन–परिचय एवं उनकी पाँच रचनाओं के नाम बताइए?
2. देवर्षि शास्त्री जी को प्रदत्त सम्मान अथवा पुरस्कारों पर एक लेख लिखिए?
3. प्रस्तुत कहानी में वर्णित तीनों पात्रों का नाम उल्लेख कीजिए?
4. इस कथा से प्राप्त शिक्षा को अपने शब्दों में लिखिए?

इकाई–3 प्रो0 प्रभुनाथद्विवेदीकृत ''कनकलोचनः''

इकाई की रूपरेखा

उद्देश्य

3.1 कथाकार का जीवन परिचय

3.2 कथावस्तु

3.3 हिंदी अनुवाद

3.4 कथा में युगबोध

3.5 बोधप्रश्न

उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई कथाकाव्य पर आधारित है। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप–

1. प्रो0 प्रभुनाथ द्विवेदी के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व से परिचित होंगे।
2. उनके द्वारा लिखित कथा 'कनकलोचनः' की कथावस्तु और उसके अनुवाद को समझ सकेंगे।
3. कथा के युगबोध के विषय में ज्ञान प्राप्त कर लेंगे।
4. प्रश्न–उत्तर के माध्यम से कवि एवं उनकी रचना के विषय में विस्तार से अवगत हो सकेंगे।

3.1 कथाकार का जीवन–परिचय

इस महान् आधुनिक कथाकार का जन्म दिनांक 25 अगस्त 1947 को उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर ज़िले में कछुआ नामक ग्राम में हुआ था। आपके पिताजी स्वर्गीय श्री नंदकिशोर द्विवेदी और माता श्रीमती राम कुमारी देवी जी हैं। आपने बी.एस.सी. के साथ एम.ए. और पी.एचडी. की उपाधि धारण की है। संस्कृत, हिंदी के साथ ही आंग्ल भाषा पर भी आपका समान अधिकार है।

काव्य–रचनात्मक प्रतिभा के साथ ही और विभिन्न एकेडमिक गतिविधियों के साथ ही द्विवेदी जी ने विविध प्रशासनिक पदों का भी सफलतापूर्वक निर्वाह किया है, उन्होंने आचार्य, संस्कृत विभाग और प्रभारी, संकायाध्यक्ष, चिकित्सा–विज्ञान संकाय, महात्मा गांधी विद्यापीठ, वाराणसी, अभ्यागत आचार्य, साहित्य–विभाग, संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी, मानद आचार्य शंकर शिक्षायतन, नई दिल्ली, अध्यक्ष, रानीपद्मावती तारा योगतंत्र, आदर्श संस्कृत महाविद्यालय, शिवपुर, वाराणसी जैसे महत्त्वपूर्ण पदों का दायित्व–निर्वहन किया है। आपने विभिन्न ग्रंथों का लेखन, प्रकाशन, संपादन एवं अनुवाद कार्य किया है।

आपके द्वारा प्रकाशित ग्रंथों की संख्या 31 है। आपके चार कथा–संग्रह प्राप्त होते हैं। कोरोनाशतकम्, द्यूतकाव्यम्, भगवद्भक्तिरसायनम्, संस्कृत–साहित्य और समाज, शालिवीथी आदि आपके द्वारा महत्त्वपूर्ण विषयों पर 130 शोध निबंध–लेखन कार्य हुआ है । अन्य विषयों पर और हिंदी भाषा में 172 लेख लिखे हैं। आकाशवाणी तथा

दूरदर्शन के द्वारा आपके अनेक कार्यक्रम प्रसारित हो चुके हैं। विभिन्न राष्ट्रीय लगभग 160 और अंतरराष्ट्रीय लगभग आठ संगोष्ठियों में सहभागिता एवं अध्यक्ष के रूप में आपकी प्रतिभागिता रही है। आपने चार शोध–पर्यावरण परियोजनाओं पर कार्य किया है आपके निर्देशन में संप्रति 35 पीएचडी उपाधि प्राप्त शोधच्छात्र हैं। और आपके विभिन्न रचनाओं पर आपको अनेक पुरस्कार प्राप्त हो चुके हैं, जिनकी संख्या 29 है। आपका 35 वर्ष का अध्यापन अनुभव है।

समकालीन विषयों पर प्रांजल गद्य में कहानी लिखी हैं। चार कथा संग्रह प्रकाशित हुए हैं– श्वेतदूर्वा (1997), अन्तर्ध्वनिः (2005), कथाकौमुदी (2007) तथा कनकलोचनः (2012)। 'कनकलोचनः' में 15 कथाएं हैं। आपकी सभी कहानियों में समकालीन विषयवस्तु, हास्य तथा व्यंग्य का पुट रहता है।

प्रभुनाथ द्विवेदी जी को कथाकौमुदी संग्रह के लिए उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी, लखनऊ का 1988 में विशेष पुरस्कार प्राप्त हुआ है। अखिल भारतीय जवाहर सुलिपि प्रतियोगिता में स्वर्ण पदक, संस्कृत वार्ता भारती सम्मान, श्वेतदूर्वा के लिए बाणभट्ट पुरस्कार, सर्वोत्तम शिक्षक सम्मान, विक्रम कालिदास पुरस्कार, संस्कृत महामहोपाध्याय सम्मान, मानस–वंदन पुरस्कार, कादंबरी पुरस्कार, उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ द्वारा 'अंतर्ध्वनिः' के लिए विशेष पुरस्कार, डॉ कपिल देव पांडे स्मृति संस्थान, वाराणसी द्वारा वाकोवाक्यम् सम्मान, पद्मश्री डॉक्टर कपिलदेव द्विवेदी स्मृति विश्वभारती सम्मान, काशीरत्नम् सम्मान, श्री रामानंदाचार्य पुरस्कार, आचार्य बृजबल्लभ द्विवेदी स्मृति शैवभारती पुरस्कार, 'कनकलोचनः' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार, नई दिल्ली, महर्षि वाल्मीकि पुरस्कार, काका कालेलकर सर्जना पुरस्कार, सौहार्द सम्मान, अन्नपूर्णा श्री सम्मान, राष्ट्रपति सम्मान 2017 में, सारस्वत सम्मान, संस्कृत–गौरव सम्मान, हिंदुस्तानी अकादमी, प्रयागराज द्वारा 2021 में विद्वत् सम्मान जैसे अनेक पुरस्कारों से आप पुरस्कृत हुए हैं।

वस्तुतः 'कनकलोचनः' ऐसा कथासंग्रह है जिसने सामाजिक व्यथा को बोधगम्य शैली के माध्यम से सहृदयों को प्रतिबिंबित कराने में पूर्ण सफलता अर्जित की है। कवि की लेखनी ने सभी कथाओं में सहृदयी पाठकों को चिरानंद–अनुभूति कराई है, जिससे पाठक स्वयं को तृप्त अनुभूत करता है। पाठक की यही संतुष्टि कथा–साहित्य का प्रमुख उद्देश्य है। अंततः श्री अभिराज जी की यह उक्ति द्विवेदी जी के कथा–वैशिष्ट्य के संदर्भ में समीचीन है–''वस्तुतः कथापाठकानामन्यथाऽनुभूतिरेव कथाकारस्य कथाशिल्पं प्रशंसनीयं विदधाति। सैव सफलता तस्य यदसौ एकं विकल्पं प्रस्तूय विकल्पान्तरं जनयति।''

3.2 कथावस्तु

कनकलोचन एक कंजूस, स्वार्थी, दिखावटी व्यक्ति की कथा है। इस संसार में ऐसे बहुत से व्यक्ति होते हैं जो दूसरों की खुशी, उनकी उन्नति, उनके सम्मान से बहुत अधिक दुखी होते हैं। ऐसे ईर्ष्यालु और धोखेबाज व्यक्ति सरकार को भी धोखा देकर भ्रष्टाचार के द्वारा अपने को भौतिक रूप से बहुत संपन्न बना लेते हैं, किंतु मानसिक और आत्मिक रूप से वह दरिद्र ही रहते हैं। कथा में वर्णित नायक जो धनलोलुप है, पत्नी के शहर में

रहने की इच्छा को गलत बताते हुए अपने गलत कार्यों की छवि को छिपाने के लिए शहर के दुर्गुणों को बताकर गांव में ही रहने को श्रेष्ठ बताता है।

कुछ समय बाद अपने पुत्र के विवाह के लिए बहुत सारी कन्याओं को देखता है और ऊपर से दहेज–विरोधी बनने का नाटक करते हुए विवाह में सब कुछ दहेज की मांग कर लेता है। इससे भी संतुष्ट न होकर बेटे के विदेश जाने के उपरांत अपनी बहू के जल जाने की खबर फैला कर दुःखी पुत्र के पुनः विवाह की घोषणा कर देता है।। इस प्रकार इस सामाजिक समस्या से युक्त कथा को प्रोफेसर प्रभुनाथ द्विवेदी जी ने बहुत सुंदरता से वर्णित किया है।

3.3 हिंदी अनुवाद

नियतिकृतनिष्ठुरनिशितनियमनियमिते निसर्गपरम्परानिर्वाहविवशे विचित्रेऽस्मिन् संसारे सन्त्येव केचन कीचकरन्ध्रायमाणाः वातेरिता इव स्वेच्छाचारिणः कुत्सितकर्मकारिणः, करालव्याल इव निर्मोकधारिणः, मृगमरीचिकेव चित्तापहारिणः कपटसाधवो मानवदानवाः। प्रकटतया ते समाजे आदर्शभूता इवाऽऽत्मानो धारयन्ति। लोके सद्वेषा अपि सद्वेषा यशोभाजः प्रतिष्ठिता महामान्येषु गण्यन्ते। प्रतीयन्ते खलु पयोमुखाश्चिक्कणघटाः, किन्तु भवन्ति विषमयाः कटा एव। भौतिकचाकचिक्यं विहाय तेभ्यो नान्यत्किञ्चित्प्रतिभाति। वाममार्गिणस्ते नैव जानन्ति दाक्षिण्यम्। मनसि वचसि काये न तेषां वसति कारुण्यम्। स्वार्थपूर्तिरेव तेषां मनःस्फूर्तिः। स्वार्थान्धास्ते न गणयन्ति गुरुजनान्, न रक्षन्ति सम्बन्धान्, नालोचयन्ति भूतं, नालोकयन्ति भविष्यं, केवलं पादलग्नकर्दमा इव दूषयन्ति वर्तमानम्। तेषां चलनं, वचनं, हसनं, लपनं, वलनं, किं बहुना, आहारो व्यवहारश्च सर्वमेव स्वार्थमूलम्। ते परेषां सुखं खादन्ति, परेषामेवाश्रूणि पिबन्ति। परेषामेवोदरे तेषां पादन्यासो धने च नेत्रविन्यासो भवति। आत्मोन्नत्या प्रसीदन्ति सीदन्ति चापरेषामुत्कर्षेण। कलहबीजान्युप्त्वा ते कृषिं कुर्वन्ति, सततेर्ष्याजलधारया तां सिञ्चन्ति, विघ्नविकटकण्टककटकैस्तां परिरक्षन्ति, द्वेषमात्सर्योर्वरकैस्तामभिवर्धयन्ति, पुष्पितां तां दृष्ट्वा नन्दन्ति फलञ्च सामोदमास्वादयन्ति। निशीथगहनतमोनिवह एव तेषां चक्षुः स्फुरति, सूर्यरश्मयस्तु तानुद्वेजयन्ति। विडालवृत्तिवर्तमानास्ते सन्ति कुशलकौशिकाः। यथा कश्चिदसामाजिकोऽपि कुशीलवान् सामाजिकानां मध्ये स्थितः कुशीलवान् प्रयोगनिरतान् प्रेक्षते तथैव तेऽपि समाजे विहरन्तो विहरन्ति सज्जनप्राणान् विषमरणप्रयोगैः।

नियति के निष्ठुर नियम से चलने वाली स्वाभाविक परंपरा के निर्वाह से विवश इस विचित्र संसार में कुछ लोग बाँस के समान छेद के समान वायु से प्रेरित के समान स्वेच्छाचारी, कुत्सित कर्म करने वाले, भयानक साँप की तरह केंचुली धारण करने वाले, मृग मरीचिका की तरह हृदय का हरण करने वाले कपटी साधु मानव के वेश में दानव होते हैं। सामने से तो वे समाज में आदर्शभूत की तरह स्वयं को रखते हैं संसार में सुंदर से सुंदर वेश के साथ, यशोभागी होकर महान् लोगों में गिने जाते हैं। ऊपर से तो दूध से भरे चिकने घड़े की तरह दिखते हैं, किंतु वास्तव में वे जहर से बुझे बाण ही होते हैं। भौतिक या सांसारिक चक्राचौध को छोड़कर उन्हें और कुछ नहीं दिखता। सदा उल्टे चलने वाले उनको सीधा मार्ग नहीं दिखता। मन से, वाणी से, कर्म से उनके अंदर करुणा नहीं होती। अपने स्वार्थ की पूर्ति ही उनके मन की ऊर्जा या स्फूर्ति होती है। स्वार्थ में अंधे वे ना बड़ों का सम्मान

करते हैं, ना संबंधों की रक्षा करते हैं, ना भूतकाल की आलोचना करते हैं, न भविष्य को देखते हैं केवल पैरों में लगे हुए कीचड़ की तरह वर्तमान को ही दूषित (या निंदा) करते हैं। उनका चलना, बोलना, हँसना, बात करना, घूमना, अधिक क्या आहार व्यवहार सब कुछ ही स्वार्थ के ही वशीभूत होता है। वे दूसरों के सुख को खाते हैं, और दूसरों के आंसू ही पीते हैं। दूसरों के पेट पर उनका पैर होता है और दूसरों के धन में ही उनका (नेत्र विन्यास या) नजर होती है। अपनी उन्नति से प्रसन्न होते हैं, किंतु दूसरों की उन्नति से दुःखी होते हैं। कलह के बीज बोकर वे खेती करते हैं, निरंतर ईर्ष्या की जलधारा से उसको सींचते हैं, विघ्नबाधाओं के काँटों से उसकी रक्षा करते हैं, द्वेष मात्सर्य आदि से उसको बढ़ाते हैं और उसको पुष्पित देखकर आनंदित होते हैं और अन्त में फल का आनंदपूर्वक स्वाद लेते हैं। रात के घने अंधकार में ही उनकी आंख खुलती है या फैलती है और किंतु सूर्य की किरणें उन्हें उनमें उद्वेग उत्पन्न करती हैं। बिल्ली की तरह झपट्टा मारने में निपुण व्यवहार वाले वे लोग उल्लू या मूर्ख बनाने में अति चतुर होते हैं। जैसे कोई असामाजिक व्यक्ति भी नटों के बीच में बैठकर या रहकर नटों के प्रयोग, अभिनय या धूर्तता को लगातार देखता है और सीख भी लेता है, उसी प्रकार ये दुष्ट जन भी समाज में घूमते हुए और अपने विष–मरण के प्रयोग द्वारा सज्जनों के प्राणों का हरण कर लेते हैं अर्थात् उनकी जान ले लेते हैं।

एवमेव मदीये ग्रामे वसत्येको दृश्यतया साधुतोज्ज्वलकूटमधिरूढः कूटकर्मनिपुणश्छलप्रपञ्चविशारदो विषरदः। नास्ति स निरक्षरो मूढधीरथवा निसर्गग्राम्योऽपितु साक्षरो राक्षसः। स तु सुशिक्षितः सभ्यसमाजस्यैको विशिष्टो जीवः सेवानिवृत्तः शासनाधिकारी। शासकीयसेवायां स यत्रकुत्रापि नियुक्तः स्थानान्तरितो भूत्वा गतो वा, तत्र–तत्र पदाधिकारचेष्टाभिः सदैव तथाऽऽचरति यथा तत्पदं लाञ्छितं भवति स्म। तस्य कदाचारस्य नैकाः कथाः तेषु तेषु क्षेत्रेषु अद्यापि जनानां जिह्वातः कर्णमायान्ति किन्तु नियोजनस्य सुदूरत्वात् जन्मभूमिभूते ग्रामे तु न कथञ्चित्कदापि सम्प्राप्ताः। अतोऽत्रत्याः जनाः तस्य नाम सगर्व सादरञ्चोच्चारयन्ति। अद्याप्यत्र सा प्रतिष्ठा तस्य तथैव वर्तते।

इसी प्रकार मेरे गाँव में भी देखने में तो एक साधु के वेश में उज्ज्वल, किंतु कूट कर्म में निपुण, छल प्रपंच में विशारद एक विषमय दाँतों वाला रहता है। वह कोई निरक्षर, मूर्ख अथवा स्वाभाविक रूप से ग्रामीण नहीं था, बल्कि पढ़ा लिखा (किंतु) राक्षस ही था। वह सुशिक्षित सभ्य समाज का एक विशिष्ट जीव सेवानिवृत्त शासन अधिकारी था। शासकीय सेवा में वह जहाँ कहीं भी नियुक्त रहा अथवा स्थानांतरण होकर गया वहाँ–वहाँ पदाधिकार के वैसे प्रयोग से,अपने आचरण द्वारा उस पद को सदैव लांछित ही किया। उसके (कदाचार की) भ्रष्टाचार की एक नहीं बल्कि अनेक कथाएं आज भी उन–उन क्षेत्रों की लोगों की जीभ से कानों में सुनाई पड़ती है, किंतु उसकी कर्मभूमि के क्षेत्र से दूर जन्मभूमि के गाँव में वह बातें कभी भी बिल्कुल सुनाई नहीं देती थीं। अतः यहाँ के लोग उसका नाम गर्वपूर्वक और आदर के साथ लेते हैं। आज भी यहाँ उसकी वही प्रतिष्ठा है जैसी पहले थी।

निजो ग्रामो ग्रामजीवनञ्च तस्मै भृशं रोचते। प्रतिवर्ष स एकाधिकवारं सावकाशः सन्नवश्यमेवायाति स्म स्वग्रामम्। पैतृकं गृहं भूमिमुद्यानञ्च निभालयति। तेषां संरक्षणं सुव्यवस्थां च विधाय निवर्तते स्म। सेवाकालस्यावधौ तेनोपार्जितां प्रचुरां धनसम्पत्तिं तस्य कुटुम्बिनोऽन्ये च जनाः ये निकटस्थास्ते सम्यग् जानन्ति, किन्तु तस्य केनापि कृ

त्येन सा नैव प्रकाशिता। यथा तद्वर्गीया वेतनभोगिनो जीवनं यापयन्ति स्तरञ्च साधयन्ति तथैव सोऽपि लोकचक्षूरजः क्षेपणाय कयाचित्कृपणतया व्यवहरति स्म।

अपना गाँव और गाँव का जीवन उसे बहुत अच्छा लगता था। प्रतिवर्ष वह एक से अधिक बार अवकाश लेकर अपने गाँव अवश्य आता था। उसको पैतृक घर, भूमि और उद्यान सब देखना बहुत अच्छा लगता था। उनके संरक्षण की सुव्यवस्था करके वह लौट आता था। नौकरी की सेवाकाल की अवधि में उसने बहुत अधिक धन संपत्ति अर्जित की थी और उसके कुटुंबी और निकट के लोग जानते थे, किंतु उसने स्वयं अपने कार्यों से कभी इसे नहीं प्रकाशित किया (कि वह अत्यधिक धनवान् है)। जिस प्रकार से उसके समक्ष वेतन पाने वाले लोग अपना जीवन यापन करते हैं उसी प्रकार वह भी लोगों की आंख में धूल झोंक कर कुछ कंजूसी के साथ ही व्यवहार करता था।

सेवानिवृत्तिकाले तस्य भार्या राजधान्यामथवा कस्मिंशिच्छोभने नगरे सुवसतिं कालवनीं वा विशोध्य समुचितं 'फ्लैट' इति भवनं हितरमणं क्रेतुं प्रणोदितवती, किन्तु तेन सा सम्यक् प्रबोध्य समाश्वस्ता– प्रिये!, त्वं जानास्येव, नगरं मह्यं न रोचते। अनुदिनं वर्धमानया जनसंख्यया नगराणि जनसम्मर्दभराणि कंक्रीटवनानि जायमानानि सन्ति। न तत्र निर्मलं जलं नापि पूतः पवनः। सर्वत्रैवावस्करचयो दृश्यते। राजमार्गा अन्तर्वीथयश्च दुर्दशाग्रस्ताः। एवं नगरस्याशेषं पर्यावरणं दूषितं स्वास्थ्यहानिकरञ्च। अत्र स्वकीयेऽपि गृहे निवसन् नानाप्रकारकाः कराः, यथा गृहकरो भूमिकरो जलकरः सीवरकरो विकासकर इत्यादयो देया एव।

सेवानिवृत्ति के समय में उसकी पत्नी ने राजधानी में अथवा किसी सुंदर नगर में, किसी सुंदर कॉलोनी को खोज कर सुंदर फ्लैट को खरीदने के लिए कहती रही, किंतु उसने अच्छी प्रकार से उसको (पत्नी को) समझा दिया कि ''प्रिय! तुम जानती ही हो कि मुझे शहर या नगर अच्छा नहीं लगता है। प्रतिदिन बढ़ती हुई जनसंख्या, लोगों की भीड़ से नगर कंक्रीट के जंगल बन रहे हैं। वहाँ ना तो स्वच्छ जल है ना ही पवित्र या साफ हवा/सब जगह गन्दगी ही दिखाई देती है। राजमार्ग (हाईवे), सड़क और गलियां सब दुर्दशाग्रस्त हैं। और इस तरह नगर का पूरा पर्यावरण (वातावरण) ही दूषित और स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। यहाँ अपने घर में रहते हुए नाना प्रकार के कर या टैक्स जैसे गृह कर, भूमि कर, जल कर, सीवर कर, विकास कर आदि भी देने ही पड़ेंगे।

पश्याऽपरतो ग्रामम्। तत्र स्वीया भूमिः स्वीयञ्च भवनम्। निर्मलं सुरुचिरं स्वास्थ्यकरं च भवति पर्यावरणम्। जलं वायुः दुग्धमन्त्रफलशाकादीनि सर्वाण्यद्यापि नगरापेक्षया विशुद्धतराणि विलसन्ति ग्रामे। ग्रामस्य हरितः परिवेशो न केवलं नयनानन्दकरोऽपितु शान्ततरो राजते। तत्र वासेन पैतृकसम्पत्तेः संरक्षणं संवर्धनं च भविष्यति। नगरे तु मदीयाऽभिख्या सागरे बिन्दुरिव, सुमहत्यन्नराशौ क्षुद्रसर्षप इव किन्तु स्वीये ग्रामे मरुस्थले वटवृक्ष इव भविता। सामाजिकसम्बन्धानपि द्रढयितुं ग्रामवासश्चेयः। वर्तमानकालेऽपि ग्रामजीवनमनवद्यं भाति। तत्र प्रतिवेशिनः प्रतिवेशिनो भवन्ति। नगरे तु ''फ्लैट'' संस्कृतौ कोऽधस्तले कश्चोपरि वसतीत्यपि न ज्ञायते। परिणते वयसि वानप्रस्थस्थाने भवतु नाम ग्रामवास एव। यत्सौविध्यं नगरे परिकल्प्य जना अन्धानुकारेण नगरं प्रति पलायमानाः दृश्यन्ते, तत्सर्वं सौविध्यमहं तुभ्यं ग्राम एव दास्यामि। यान्यपि सुखकराणि भौतिकसाधनानि तानि सर्वाणि तत्र त्वां सेविष्यन्ते। त्वं तत्र ग्रामे तथैव

श्रद्धेया, पूज्या मान्या वा भविष्यसि यथा निरस्तपादपे देशे एरण्डः।'' एवमन्यैरपि विविधैर्वचोभिस्तां प्रबोध्याऽयं शासनाधिकारी सेवानिवृत्तेः पश्चाद् ग्रामे गृहबुद्धिं बबन्ध।

दूसरी ओर गाँव का जीवन देखो। वहाँ अपनी ही भूमि है और अपना ही भवन है। गाँव में निर्मल, सुंदर और स्वास्थ्य युक्त पर्यावरण है। जल, वायु, दूध, अनाज, फल, सब्जी सभी कुछ आज भी नगर की अपेक्षा एकदम शुद्ध प्राप्त होते हैं। गाँव का हरा भरा वातावरण न केवल आंखों को आनंदित करता है बल्कि शांति भी प्रदान करता है। वहाँ रहने से पैतृक संपत्ति की रक्षा और बढ़ोत्तरी भी होगी, शहर में तो मेरा सारा धन सागर में बूंद की समान तथा बहुत अधिक अनाज भी सरसों की तरह है (अर्थात् हमेश कम ही रहेगा) किंतु अपने गाँव में मरुस्थल में वटवृक्ष की तरह होगा। सामाजिकसंबंध भी ग्रामवासियों के साथ ही मजबूत होते हैं। वर्तमान काल में ग्राम जीवन अनिंदनीय होता है। वहाँ पड़ोसी पड़ोसी ही होते हैं नगर में तो ''फ्लैट'' संस्कृति में कौन नीचे रहता है, कौन ऊपर रहता है यह भी नहीं पता चलता। आयु बढ़ने पर वानप्रस्थाश्रम में तो गाँव में ही रहना ठीक होगा। नगर में जो सुविधा सोच कर लोग अंधानुकरण से नगर की ओर भागते हुए दिखाई दे रहे हैं, वे सारी सुविधाएं मैं तुम्हें गाँव में ही दूँगा। जितने भी सुख देने वाले भौतिक साधन हैं वह सब गाँव में ही तुम्हारी सेवा करेंगे या तुमको प्राप्त होंगे। तुम वहाँ गाँव में वैसी ही श्रद्धेया, पूज्या, मान्या होगी जैसे पेड़ों से रहित स्थान पर एरंड का पेड़ं'' इसी प्रकार अन्य बहुत सारी बातों से उसको समझाकर यह शासनाधिकारी सेवानिवृत्ति के बाद गाँव में रहने लगा।

अथ सर्वसौविध्यभरं भवनं स्वग्रामे निर्माय स भार्यया सह सुखं निवसति। तयोरेक एवापत्यो राजकुमारो नाम पुत्रः स्वदेशाद्बहिः कस्मिंश्चिद् वैदेशिके प्रथितशिक्षासंस्थाने पठति। तस्यायं जनकोऽत्र ग्रामे सुमेरुशिखरमधिरूढः पदप्रतिष्ठागर्वितोऽहङ्कारनिगूढः 'कोऽन्योऽस्ति सदृशो मया' इति दुर्भाववासनया कमपि तृणाय न मन्यते। ऐश्वर्योपकृतः स यदि कमपि ससुखं रोटिकामश्नन्तं पश्यति सुदुःसहेर्ष्यासन्तापतापमनुभवति। स कदापि नासीदुदारहृदयः। स निर्धनानसहायान्निर्बलानपि प्रसह्य वञ्चितुं प्रयतते न च सहते कस्यचिद्विकासोन्मुखं जीवनम्। तस्य जिह्मजिह्वा न कञ्चिद् ब्रूते शुभम्। पुरा यस्यागमनेन ग्रामवासिनः हर्षनिर्भरमानसाः प्रसादसदनवदना आसन्, तेऽधुना तदुर्व्यवहारतो भृशं खिन्ना अवसन्नाश्च सन्ति।

इसके बाद सभी सुविधाओं से युक्त होकर अपने गाँव में भवन बनाकर वह पत्नी के साथ सुखपूर्वक रहने लगा। इसका एक ही राजकुमार नाम का पुत्र था जो अपने देश से बाहर किसी विदेशी प्रसिद्ध शिक्षा संस्थान में पढ़ता था। उसका यह पिता यहाँ गाँव में सुमेरू पर्वत (सोने के) के शिखर पर चढ़कर अपने पद प्रतिष्ठा से गर्वित होकर अहंकार पूर्वक सोचता था। ''क्या कोई अन्य मेरे जैसा है'' (मेरे बराबर है) इस दुर्भावना की इच्छा से दूसरे किसी को तिनके के बराबर भी नहीं समझता था। ऐश्वर्य से उपकृत वह यदि किसी को भी सुखपूर्वक रोटी खाते हुए देख लेता था तो अत्यंत दुःख व ईर्ष्या से संताप का अनुभव करता था। वह कभी भी उदारहृदय नहीं रहा। वह निर्धन, असहाय, निर्बल को भी न सहन करता हुआ उन्हें भी ठगने का प्रयास करता था और किसी का विकासयुक्त जीवन उससे नहीं देखा जाता था। उसकी निंदनीय जीभ कभी भी शुभ नहीं बोलती थी। पहले इसके

आगमन से गाँव वाले हर्ष से प्रसन्न मनवाले हो जाते थे और (उसकी कृपा से) प्रसन्न मुख वाले हो जाते थे वे आज उसके दुर्व्यवहार से बहुत अधिक दुःखी और खिन्न होते हैं।

अध्ययनं समाप्य विदेशात्प्रत्यावर्तिते सति पुत्रे महानुत्सव आयोजितस्तेन। स्वकीयां सम्पद्विभूतिं प्रदर्शितुं तेन मुक्तहस्तेन व्ययः कृतः। ततोऽचिरादेवाल्पीयसा प्रयासेन भारतसर्वकारस्यैकस्मिन् महनीये प्रतिष्ठाने राजकुमार उच्चाधिकारिपदमलङ्कृतवान्। पुत्रं सुसमीहितपदमधिष्ठितं दृष्ट्वा पितुर्भालो गर्वेण समुन्नतो वक्षश्च स्वायतं बभूव। ततः परं तस्याऽहङ्कारप्रेतस्तं प्रगाढतरं निगडितवान्।

अध्ययन समाप्त करके उसके बेटे के विदेश से वापस आने पर उसने महान् उत्सव आयोजित किया। अपनी संपत्ति और ऐश्वर्य का प्रदर्शन करने के लिए उसने खुले हाथ से खूब खर्च किया। और उसके बाद शीघ्र ही कुछ प्रयास से भारत सरकार के एक महनीय प्रतिष्ठान में राजकुमार ने उच्च अधिकारी पद को भी प्राप्त कर लिया। पुत्र को अच्छे पद पर बैठा हुआ देखकर पिता का मस्तक गर्व से उन्नत और उसकी छाती चौड़ी हो (जाती थी) गई। इसके बाद उसके अहंकार रूपी प्रेत ने उसको और अधिक जकड़ लिया।

पुत्रस्याध्ययनकाल एव बहवो विवाहसम्बन्धप्रस्तावाः समायान्ति स्म। परन्तु, ''पुत्रोऽध्ययनावधौ विवाहार्थं मतिं न करोती'' त्युक्त्वा प्रायस्ते सर्वे निरस्ता भवन्ति स्म। अधुना ततोऽप्यधिकाः प्रस्तावाः प्राप्यन्तेऽनुदिनम्। वरस्तु सदैव दुर्लभः किन्त्वेतादृशः सुयोग्यो वरः कुत्र लभते–इति मत्वा जनास्तमुपयान्ति स्वकन्यायाः पाणिं ग्राहयितुम्। 'कन्या वरयते रूपं माता वित्तं पिता कुलम्' इति सूक्तिरिदानीं विलोमपर्यायतः प्रचलति 'वरः कामयते रूपं वित्तं जनको वधूं जनी' ति। ''कः श्रेष्ठोऽस्मिन् संसारे?'' ''वरस्य पिता।'' आगतेषु कन्यापक्षजनेषु स वरपिता नानाख्यानकानि बहुधा निरूप्य कमपि ब्रवीति–''सत्यं खलु नास्ति मे कन्यापितृत्वं, किन्तु कन्यापितुः दुःखमनुभवामि।'' कमपि ब्रूते–''सम्बन्धस्तु पूर्वनियत ईश्वराधीनः। वयं तु निमित्तमात्राणि।'' अन्यं प्रबोधयति–''वरकन्ययोयोग्यत्वं भवानेव निभालयतु, यदि समुचितं ततो नास्ति मे निषेधः।'' अपरं सम्बोधयति– ''भगवत्कृपया नास्ति मे कश्चिदभावः। तथापि पालनीया कुलपरम्परा, रक्षणीया खलु सामाजिकी प्रतिष्ठा। पश्यतु, मम श्वसुरेण स्वकन्यायै एकपञ्चाशत्तौलकः स्वर्णभारः प्रदत्तः। अतः परं भवानेव प्रमाणम्।'' एतत्सर्वं ब्रुवतस्तस्य दृष्टिः सर्वथा यौतुके स्वर्णसम्भारे भवति स्म। कन्याऽपि कनकावदाता रूपगुणशीलवती भवेत्। एवमेवाऽर्धनिर्धारणव्यापारः प्रायेण वर्षपर्यन्तं प्राचलत्। सम्बन्धविषये नैराश्यंगतैः कैश्चित्कन्यापक्षीयैस्तस्मै 'कनकलोचन' इत्यभिख्या ख्यापिता। अन्ततः शतं तौलकं स्वर्णभारं प्रदाय तादृ शेनैव केनचित्कन्याजनकेन स्वकन्यायाः पाणिपीडनं राजकुमारेण वरेण सह कृतम्।

पुत्र के अध्ययन कल से ही बहुत अधिक विवाह के संबंध प्रस्ताव आ रहे थे। किंतु ''पुत्र के अध्ययन की अवधि में विवाह करना ठीक नहीं है'' ऐसा कहकर प्रायः वह सभी को मना कर देता था। आज तो उससे भी अधिक विवाह के प्रस्ताव प्रतिदिन आते हैं। वर या दूल्हा तो हमेशा ही दुर्लभ होता है, किंतु ऐसा सुयोग्यवर कहाँ प्राप्त होता है बहुत दुर्लभ है–ऐसा मानकर लोग उसके पास अपनी पुत्री के विवाह के लिए आते थे। 'कन्या रूप का वरण करती है, माता धन का, और पिता कुल का'' इस सूक्ति का अब विलोम पर्याय प्रचलित है। ''वर रूप की कामना करता है, पिता धन की और और मां वधू की।'' ''इस संसार में कौन श्रेष्ठ है''? 'वर का पिता'। आए हुए कन्या पक्ष के लोगों से वह वर का पिता नाना प्रकार की बातों को कहते हुए किसी से कहता था–''सत्य है मैं

कन्या का पिता नहीं हूँ, किंतु कन्या के पिता के दुःख का अनुभव करता हूँ।'' किसी से कहता ''संबंध तो पहले से ही निर्धारित हैं और ईश्वर के अधीन है हम लोग तो केवल निमित्त मात्र हैं'' अन्य लोग से कहता था ''वर और कन्या की योग्यता आप लोग ही देखें, यदि ठीक है तो मेरी ओर से कोई रोक नहीं है।'' कुछ लोग से कहता था ''भगवान् की कृपा से मुझे कोई कमी नहीं है फिर भी कुल की परंपरा का पालन व सामाजिक प्रतिष्ठा की रक्षा करनी होगी। देखिए, मेरे ससुर ने अपनी कन्या के लिए 51 तोला सोना प्रदान किया है (दिया है)। इसके आगे तो आप ही प्रमाण है।'' यह सब कहते हुए उसकी दृष्टि दहेज के स्वर्ण भार पर ही होती थी। कन्या भी सोने का दान करने वाली, रूपवती, गुणशीलवती होनी चाहिए। इस प्रकार मूल्य निर्धारण व्यापार प्रायः कई वर्षों तक चलता रहा। संबंध के विषय में निराशा होने पर कुछ कन्या के पक्ष के लोगों ने उसे 'कनकलोचन' (सोने की आंख वाला) ऐसा नाम दे दिया। अंत में 100 तोला सोना देकर उसी में से किसी लड़की के पिता ने अपनी कन्या का विवाह राजकुमार के साथ कर दिया।

अधुनातनेषु विवाहेषु संस्कारविधेः कथा तु दूरमपास्ता। तत्र केवलं भौतिकाडम्बरैस्सह वैभवप्रदर्शनमेव वरीवर्ति। एतत्सर्वमस्मिन् विवाहोत्सवे बभूव। द्वयोरपि पक्षयोर्वृद्धातिवृद्धा जनाः नानुस्मरन्ति स्वकीये जीवने एतादृशीमद्वितीयां शोभाढ्यां वरयात्रामथवा भव्यातिभव्यं वैवाहिकं समारोहम्। सर्वमप्यष्टपूर्वमश्रुतपूर्वमनास्वादितपूर्वमासीत्। धन्यधन्या सा कन्या परिणीता पितृगृहात् श्वसुरालयं सदुःखसुखं समानीता। लज्जया सङ्कुचितां नताङ्गीमवगुण्ठनवतीं तां कुलवधूं कौतुकागारे प्रवेश्य तां दर्शं–दर्शं श्वश्रूरन्याश्च ग्रामस्त्रियः–''पद्मवदनेयं स्वर्गादवतीर्णा काचित्सौभाग्यलक्ष्मीरि'' ति प्रशशंसुः। लोकपरम्परानुसारं कतिपयैरेवाऽहोभिः सा मातृगृहं गता। तत्र श्वसुरस्य सन्देशो गतः–''वधूः हीरकहारोपकण्ठिता प्रेषणीये'' ति। सन्देशव्यथितेन कन्याजनकेन कृतामेतत्सम्बधिनीं कामप्यभ्यर्थनां प्रति कनकलोचनो मनागपि कर्णं न दत्तवान्। विवशो दीनार्तः कन्यापिता ऋणं कृत्वा तस्यादेशमपालयत्। एवं यदा यदा वधूः स्वपितृगृहं याति तदा तदा किमपि नूतनं स्वर्णाभूषणमानेतव्यमिति दिशति श्वसुरः। त्रस्तः कन्यापिता ततः सम्बन्धमेव विच्छेत्तुमियेष। स कन्यां नैव प्रेषयामास। व्यतीते बहुकाले राजकुमारः स्वयमेव श्वसुरालयं गत्वा पत्नीं सादरं सस्नेहं प्रीतिपुरस्सरमानीतवान्। अपि च, स्वकेन सह तां नेतुं पितरौ प्रार्थितवान्। किन्तु स कनकलोचनः, ''वत्स! तत्र ते सेवकाः सन्त्येव। अत्रावयोः सेवां को विधास्यति? अत इयमत्राऽवाभ्यां सह ग्राम एव तिष्ठतु'' इति प्रबोध्य पुत्रमेकाकिनमेव प्राहिणोत्।

आजकल के विवाह संस्कार विधि तो छोड़ दीजिए वहाँ केवल भौतिक आडंबर के साथ वैभव–प्रदर्शन ही होता है। यह तो सब कुछ इस विवाह उत्सव में हुआ। दोनों ही पक्ष के वृद्ध से वृद्ध लोग भी अपने जीवन में इस प्रकार की अद्वितीय शोभा से युक्त वर यात्रा को अथवा भव्य से भव्य वैवाहिक समारोह को नहीं याद कर रहे थे अर्थात् किसी ने ऐसा भव्य वैवाहिक समारोह आज तक नहीं देखा था। पूरी तरह से यह अदृष्टपूर्व, अश्रुतपूर्व और अनास्वादितपूर्व था। धन्य धन्य वह कन्या विवाह के पश्चात् पिता के घर से ससुराल सुख दुःख लेकर आई। लज्जा के कारण संकुचित और घूंघट लिए, झुकी सर वाली कुल वधू को आश्चर्ययुक्त घर में प्रवेश कराकर उसको देखकर सास और अन्य गाँव की स्त्रियां प्रशंसा करने लगी–''कमल के सामान मुंह वाली, स्वर्ग से उतरी हुई यह कोई सौभाग्य लक्ष्मी ही है।'' लोक परंपरा के अनुसार कुछ दिनों के पश्चात् वह अपनी मां के घर गई। वहाँ ससुर

का संदेश गया कि ''बहू को हीरे के हार पहनाकर ही भेजिए'' संदेश से व्यथित (दुःखी) कन्या के पिता ने इस विषय में कनकलोचन से बहुत अधिक प्रार्थना की, किंतु उसने कोई ध्यान नहीं दिया। विवश और दुखी कन्या के पिता ने ऋण लेकर उसके आदेश का पालन किया। इस प्रकार जब–जब वह बहू अपने पिता के घर जाती थी तब तब कोई नया स्वर्ण आभूषण लाने का उसके ससुर के द्वारा आदेश दिया जाता था। त्रस्त कन्या के पिता ने उनसे संबंध तोड़ने की इच्छा की। उसने कन्या को फिर नहीं भेजा। बहुत अधिक समय बीत जाने पर राजकुमार स्वयं ससुराल जाकर पत्नी को आदर स्नेह और प्रेम के साथ वापस ले आया। और अपने साथ ले जाने के लिए माता–पिता से प्रार्थना की। किंतु उस कनकलोचन ने ''बेटा वहाँ सब तुम्हारे सेवक हैं। यहाँ हम दोनों की सेवा कौन करेगा? इसलिए इसको (तुम्हारी पत्नी को) हम दोनों के साथ यही गाँव में छोड़ दो'' ऐसा कहकर पुत्र को अकेले ही विदेश भेज दिया।

एकदा जनैः श्रुतं–''कनकलोचनस्य वधूः महान्से रन्धनकर्मणि व्यापृता एल०पी०जी० वर्तुलपात्रविस्फोटतोऽग्निना दग्धा दिवङ्गता। शोकमयेऽपि तस्मिन् विषमकाले कनकलोचनः पुत्रं सान्त्वयामास–''अचिन्तिताः खलु सहसैव निपतन्ति विपत्तयः। वत्स, दुर्ज्ञेयं खलु विधेर्विधानम्। यद्भाव्यं तद्भवत्येव। अचिरमेव ततोऽप्यधिकतरां सुयोग्यां सुन्दरीं कन्यां कनकशतभारेण सह प्राप्स्यसी ''तिः''

कुछ समय बाद लोगों ने सुना ''कनकलोचन की बहू रसोई में भोजन बनाते हुए ईंधन के द्वारा व्याप्त एलपीजी के पात्र–विस्फोट से अग्नि से जलकर मर गई'' शोक से युक्त उस विषमकाल में कनकलोचन ने पुत्र को आश्वासन देते हुए कहा–''चिंतित मत हो बेटा, अचानक ही ये विपत्तियां आ जाती हैं। बेटा, विधि का विधान दुर्ज्ञेय है (कोई नहीं जानता) जो होना होता है, वही होता है। शीघ्र ही मैं इससे भी अधिक सुंदर और सुयोग्य लड़की, और सोने के भार से युक्त कन्या तुम्हारे साथ होगी (से तुम्हारा विवाह करूंगा)।''

कथायां निहितं तत्त्वं सम्बुध्य मनसा नरः ।
यदि लोभं त्यजेत्तत्तु भवेत्तस्य शुभावहम् ।। 1।।
एको नास्ति समाजे हि कश्चित्कनकलोचनः।
दृश्यन्ते बहवस्तत्र क्रूराः कनकलोचनाः ।। 2 ।।
यः श्रृणुयात्पठेद्वापि भावपूर्णा कथामिमाम् ।
स दुस्तरं तरत्याशु सागरं तप्तकाञ्चनम्।। 3।।

इस प्रकार कथा में निहित तत्त्व को मनुष्य मन से समझकर यदि लोभ का त्याग करे तभी उसका कल्याण होगा, क्योंकि समाज में एक ही कनकलोचनः नहीं है, बल्कि यहाँ बहुत सारे क्रूर कनकलोचन दिखाई देते हैं। जो कोई भी इस भावपूर्ण कथा को सुनेगा अथवा पढ़ेगा वह दुस्तर सागर को और सोने से तपते सागर को शीघ्र ही पार कर लेगा।

3.4 कथा में युगबोध

'कनकलोचनः' प्रोफेसर प्रभुनाथ द्विवेदी जी द्वारा लिखित एक लघु कथा है। संपन्न लोग भी धनलोलुप होकर मानवीय मूल्य के अवमूल्यन की किस पराकाष्ठा तक चले जाते हैं इसी का यह एक उदाहरण है। इस रचना के लिए आपको अखिल भारतीय साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया है।

3.5 बोधप्रश्न

1. 'कनकलोचनः' के लेखक कौन हैं। उनकी रचनाओं पर एक लघु लेख लिखिए।
2. 'कनकलोचनः' कथा का नायक अथवा वक्ता के बारे में 100 शब्दों में लिखिए।
3. प्रस्तुत कथा के युगबोध को अपने शब्दों में लिखिए।

इकाई–4 डॉ0 महेशगौतमकृत 'अपर्णा'

इकाई की रूपरेखा

उद्देश्य

4.1 कथाकार का जीवन परिचय

4.2 कथावस्तु

4.3 हिंदी अनुवाद

4.4 कथा में युगबोध

4.5 बोधप्रश्न

उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई कथाकाव्य पर आधारित है। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप–

1. डॉ0 महेशगौतम के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व से परिचित हो सकेंगे।
2. उनके द्वारा लिखित कथा 'अपर्णा' की कथावस्तु और उसके अनुवाद को समझ सकेंगे।
3. कथा के युगबोध के विषय में ज्ञान प्राप्त कर लेंगे।
4. प्रश्न उत्तर के माध्यम से कवि एवं उनकी रचना के विषय में और अवगत हो सकेंगे।

4.1 कथाकार का जीवन–परिचय

मूलतः जिला हिसार (हरियाणा) के तथा अधुना पटियाला पंजाब के स्थायी निवासी डॉ0 महेश गौतम, जिनका पूरा नाम महेश चन्द्र शर्मा गौतम है, आधुनिक संस्कृत साहित्य कथा के प्रशस्यतम कवि हैं।

डॉ0 महेशगौतम का जन्म दिनांक 24 दिसम्बर, 1949 ई0 को पटियाला के सनौरी गेट में हुआ था। आपकी माता श्रीमती कृष्णा देवी और पिता श्री पं0 बलदेव कृष्ण जी थे। आपने शास्त्री, ओ0टी0, एम0ए0, संस्कृत एवं हिन्दी तथा पी–एच0डी0 की उपाधि प्राप्त की।

संस्कृत, हिन्दी तथा पंजाबी भाषा में कविकर्म करने वाले कवि, कथाकार एवं उपन्यासकार डॉ0 महेश गौतम की 20 से अधिक पुस्तकें (सर्जनात्मक, मौलिक, अनूदित, शोध) प्रकाशित हैं। उनकी सर्जनात्मक कृतियों में कथा, कविता, संग्रह, उपन्यास, महाकाव्य, शौर्यगाथा तथा आलोचनात्मक ग्रंथ आदि सम्मिलित हैं। डॉ0 महेश गौतम की बहुमुखी शैक्षणिक प्रतिभा को दर्शाते हुए 'मा वीरा विस्मृता भूवन्' (शौर्यगाथा) ग्रन्थ प्रकाशनाधीन है। डॉ0 महेश गौतम की सर्जनात्मक कृतियों पर पाँच से अधिक पी–एच.डी. शोध, विभिन्न विश्वविद्यालयों में हो रहें हैं। आपकी प्रमुख रचनायें इस प्रकार है–

मूकं निमन्त्रणम् (काव्य संग्रह), 2008, अरुणा (उपन्यास), 2012, वैशाली (उपन्यास), 2017, सुनयना (उपन्यास), 2019, नीरजा (उपन्यास), 2020, महार्हं रत्नमम्बेदकरः (जीवन वृत्त), 2020, सुप्रभातं प्रतीक्ष्यते (उपन्यास),

2022, मा वीरा विस्मृता भूवन् (शौर्य गाथा), प्रकाशन प्रक्रिया में। इनके अतिरिक्त 'संस्कृतप्रतिभा' (साहित्य अकादेमी), भारती (जयपुर), 'अर्वाचीनसंस्कृतम्' (दिल्ली) आदि पत्रिकाओं में अनेक कहानियां और लेख प्रकाशित हैं। आलोचना से सम्बद्ध ग्रन्थों में पंजाब का संस्कृत काव्य को योगदान, राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान नई दिल्ली के आर्थिक अनुदान से प्रकाशित, एक लेख पंजाब से प्रकाशित, ऋग्वेद दशम मण्डल पर व्याख्या (दो वॉल्यूम में), 2010, लखनऊ, सिंहनाद (डॉ0 शिव प्रसाद भारद्वाज द्वारा संस्कृत में रचित विलक्षण खण्डकाव्य की हिन्दी और पंजाबी में व्याख्या), 2017, मेघदूतम् (मूल संस्कृत गुरुमुखी लिपि में और व्याख्या पंजाबी भाषा में), 2016। साथ ही हिन्दी भाषा में आपकी अधोलिखित रचनायें है–स्वातन्त्र्य समर (महाकाव्य), 2013, प्रकाशक–राइटर्स चॉइस दिल्ली, (इण्डियन काउंसिल ऑफ हिस्टोरिकल रिसर्च दिल्ली के आर्थिक अनुदान से प्रकाशित) (पंजाब सरकार द्वारा सर्वोत्तम पुस्तक के रूप में पुरस्कृत); श्री गुरु नानक देव चरित (खण्डकाव्य), 2009, प्रकाशक–निर्मल पब्लिकेशन्स दिल्ली; पंजाबी भाषा में ऐसे जिया जाता है (काव्य संग्रह), 2010, प्रकाशक–निर्मल पब्लिकेशन्स दिल्ली; अधूरा आदमी (उपन्यास), 2014, बिखरते रिश्ते (उपन्यास), 2017, दिग्भ्रान्त मन (उपन्यास), 2018, क्षितिज की तलाश (उपन्यास), 2021।

आपकी उत्कृष्ट रचनाओं के लिए विभिन्न पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है। जिनमें– वैशाली (संस्कृत उपन्यास) पर साहित्य अकादमी संस्कृति मंत्रालय द्वारा साहित्य अकादमी पुरस्कार 2020, रु0 100000, पंजाब सरकार द्वारा शिरोमणि संस्कृत साहित्यकार सम्मान, 2011, रु0 50000, स्वातन्त्र्य समर (महाकाव्य) भाषा विभाग पंजाब सरकार द्वारा सर्वोत्तम पुस्तक के रूप में ज्ञानी संत सिंह पुरस्कार, 2014 से पुरस्कृत, अधूरा आदमी (उपन्यास) भाषा विभाग पंजाब सरकार द्वारा सर्वोच्च पुस्तक के रूप में सुदर्शन पुरस्कार, 2015 से पुरस्कृत, सुनयना (संस्कृत उपन्यास) भाषा विभाग पंजाब सरकार द्वारा सर्वोत्तम पुस्तक के रूप में कालिदास पुरस्कार 2020 तथा उत्तर प्रदेश संस्कृत–संस्थान लखनऊ द्वारा बाणभट्ट पुरस्कार 2021 से पुरस्कृत क्षितिज की तलाश (हिन्दी उपन्यास) अखिल भारतीय वरिष्ठ नागरिक महासंघ मुम्बई द्वारा 'डॉ0 सुगण चन्द भाटिया एवार्ड' से सम्मानित, सुनयना (संस्कृत उपन्यास)।

4.2 कथावस्तु

महेश गौतम द्वारा रचित 'अपर्णा' कहानी अंतर्जातीय विवाह से सम्बन्धित हैं। अन्तर्जातीय विवाह का अर्थ है–दो अलग–अलग जाति के वर और कन्या का विवाह, चाहे वह किसी भी जाति से हों। परम्परागत रूप से इस प्रकार के विवाह बहुत कम ही होते रहे हैं, किन्तु अब इन्हें अपेक्षाकृत अधिक स्वीकृति मिलने लगी है। महेश गौतम द्वारा रचित 'अपर्णा' कहानी की नायिका अपर्णा एक शिक्षित महिला है, जो प्रोफेसर के पद पर कार्यरत है। उसके माता–पिता अपर्णा का विवाह एक अमीर परिवार तथा शिक्षित युवक से करना चाहते है, लेकिन अपर्णा को यह स्वीकार नहीं था, उसका मानना था कि जिसके साथ विचारों में समानता हो उसके साथ विवाह करना उचित होगा।

अपर्णा के साथ ही महेश भारद्वाज नाम का युवक भी प्रोफेसर के पद पर कार्यरत था, वह ब्राह्मण था। महेश भारद्वाज और अपर्णा के विचारों में समानता होने के कारण दोनों एक—दूसरे से विवाह करना चाहते थे, किन्तु दोनों की जाति अलग—अलग होने से वह अपने माता—पिता से बात करने में संकोच कर रहे थे। अंततः दोनों अपने माता—पिता की स्वीकृति प्राप्त करने के पश्चात् विवाह के बंधन में बंध गये। इस प्रकार अपर्णा ने जाति प्रथा के बंधन को न मानते हुए **अंतर्जातीय** विवाह किया। इसके साथ ही अपर्णा ने **कन्यादान** का भी विरोध किया उसके अनुसार कन्या कोई वस्तु नहीं है जो उसका दान किया जाये। विवाह के पश्चात् अपर्णा ने एक पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम उसके पति ने मनोज भारद्वाज रखा तो अपर्णा ने पुनः इसका विरोध करते हुए तर्क दिया कि हम इसका नाम मनोज गुप्त भी तो रख सकते है। उसके पति के अनुसार उसका नाम महेश भारद्वाज है। इसलिए पुत्र का नाम मनोज भारद्वाज ही रखना चाहिए। क्योंकि पुत्र के नाम के पीछे पिता का ही सर नाम रखा जाता है। तब अपर्णा ने कहा कि हम अपने पुत्र के नाम में जाति **सूचकशब्द का प्रयोग न करके केवल मनोज रखते हैं।** इस प्रकार इस कहानी में पितृ सत्ता को न मानते हुए मातृ सत्ता को बढ़ावा दिया गया है।

4.3 हिंदी अनुवाद

''अपर्णे, अलमेतावद् दुराग्रहेण। त्वादृशीनामुच्चशिक्षितानां युवतीनामात्मनो जनकेन सह प्रगल्भवत् संवदनं न कथमप्युपयुज्यते।'' जातामर्षा जननी सुलोचना दुहितरं व्याहार्षीत्।

''मातः, सुष्ठु जानीते भवती यदहं भवतीं जनकञ्चात्यर्थं सम्मन्ये, परं भवद्भ्यामपि त्वेतदवधातव्यं यन्नाहमेतादृशं विवाहानुष्ठानमनुज्ञातुं क्षमे येन कन्या किञ्चिद्वस्त्विव कस्मैचिद्यूने दानं कृत्वा दीयते।'' अपर्णा विधेयेवाभ्यधात्।

''वत्से, आप्रथमात् प्रवर्तत एषा परम्परा यत् परिणयानन्तरं दुहितरः श्वशुरालयं गच्छन्ति, श्वशुरालय एव च भवति तासां गृहं यत्र ताः स्वामिनीवात्मनो गृहं शासति। राजा जनकोऽप्यात्मनो दुहितरं सीतां रामायादात्। अतो न त्वया कुलीनस्य धनाढ्यस्य च कुटुम्बस्य विवाहप्रस्तावः पर्यवस्थातव्यः।'' पुत्रीमवबोधयन्ती जननी सवात्सल्यमवादीत्।

टिप्पणी: प्रगल्भवत्—ढीठ की तरह, पर्यवस्थातव्यम्—विरोध करना चाहिए, विधेया—आज्ञाकारिणी।

''अपर्णा, इतना अधिक हठ मत करो। तुम्हारे जैसी उच्चशिक्षित युवतीयों का अपने पिता के साथ ढीठ की तरह बात करना किसी भी तरह उपयुक्त नहीं है।'' क्रुद्ध हुई माता सुलोचना ने कहाँ

''माँ, आप अच्छी तरह जानती हैं कि मैं आपका और पिताजी का अत्यधिक सम्मान करती हूँ, परन्तु आप दोनों को भी तो यह ध्यान रखना चाहिए कि मैं ऐसे विवाहानुष्ठान की अनुमति नहीं दे सकती जिसके द्वारा कन्या को किसी वस्तु की तरह किसी युवक को दान करके दिया जाता है।'' अपर्णा ने आज्ञाकारिणी की तरह कहाँ

''बेटी, यह परम्परा शुरू से चली आ रही है कि विवाह के बाद बेटियाँ ससुराल जाती हैं, और ससुराल ही उनका घर होता है, जहाँ वे स्वामिनी की तरह अपने घर पर शासन करती हैं। राजा जनक ने भी अपनी बेटी सीता को राम को दिया था। इसलिए तुम्हें कुलीन और धनाढ्य परिवार के विवाह—प्रस्ताव का विरोध नहीं करना चाहिए।'' बेटी को समझाते हुए माँ ने वात्सल्य पूर्वक कहाँ

''मातः, यावत् सत्यशीलतादाक्षिण्यादिगुणानां सम्बन्धो नियतमेव जनकनन्दिनी सीता वर्तते मह्यमादर्शभूता, अथाप्यस्यामेकविंश्यां शताब्द्यां लब्धजन्माहं कथं सीतेव सर्वं कर्तुं शक्नोमि? सर्वज्ञोऽपि भगवान् श्रीरामः सतीमपि सीतामग्निपरीक्षायै प्राववर्तत, नाहमेवं कर्तुं क्षमिष्ये।'' अपर्णा प्रत्यवोचत्। ''बालिशे, प्रागैतिहासिकात् कालात् प्रवर्तमानानां परम्पराणां विरोध एतादृशो निर्बन्धो नोपयुज्यते। कथं पुनः परिणयं विना दुहितरो गृहेऽवस्थापयितुं शक्यन्ते! विवाहस्तु वर्तते तासां साहजिकमावश्यं यस्य निष्पादनं भवति जननीजनकयोरशक्यनिवारं कर्तव्यम्।'' जननी व्याहार्षीत्।

''मातः, किमेतत् केवलं युवतीनामेव साहजिकमावश्यम्? विवाहस्तूभयोरेव साहजिकमावश्यम्। प्रश्नस्त्वेष वर्तते यत् समान उभयोरावश्ये कन्यानां दानं किमिति? किमिति पुरुषः स्वामी तस्यार्धाङ्गिनी च किमिति दासीति मन्यते? नाहमेतादृशाय सम्बन्धाय सज्जा।'' अपर्णा किञ्चित् सरोषं समुदैरिरत्। तदनन्तरं किञ्चित् कथयितुमुपक्रममाणायामेव जनन्यामसन्तुष्टापर्णा ततः प्रास्थित।

टिप्पणीः अथापि–इसके बावजूद, प्राववर्तत–प्रेरित किया, विवश किया, निर्बन्धः–ज़िद, हठ, नोपयुज्यते–उपयुक्त नहीं है, प्रास्थित–चल पड़ी (प्र स्था लुङ्, प्र0पु0ए0व0, 'समवप्रविभ्यः स्थः' पा. सू0 1.3.22 इत्यात्मनेपदम्).

''माँ, जहाँ तक सत्यशीलता, दाक्षिण्य आदि गुणों का सम्बन्ध है निश्चित रूप से जनकनन्दिनी सीता मेरे लिए आदर्शभूत हैं, इसके बावजूद इस इक्कीसवीं शताब्दी में जन्म लेने वाली मैं कैसे सीता के समान सब कुछ कर सकती हूँ? सर्वज्ञ होते हुए भी भगवान् श्रीराम ने सती भी सीता को अग्निपरीक्षा के लिए विवश किया, मैं ऐसा नहीं कर सकूँगी।'' अपर्णा ने उत्तर दिया।

''नासमझ, प्रागैतिहासिक काल से चली आ रही परम्पराओं के विरोध में इस तरह की जिद ठीक नहीं। विवाह के बिना बेटियों को घर बैठाकर कैसे रखा जा सकता है! विवाह तो उनकी स्वाभाविक आवश्यकता है जिसे पूरा करना माता–पिता का अपरिहार्य कर्तव्य है।'' माँ ने कहाँ

''माँ, क्या यह केवल युवतीयों की ही स्वाभाविक आवश्यकता है? विवाह तो दोनों की ही स्वाभाविक आवश्यकता है। प्रश्न तो यह है कि दोनों की आवश्यकता एक जैसी होने पर कन्याओं का दान किस लिए? पुरुष स्वामी क्यों है और उसकी अर्धांगिनी दासी क्यों मानी जाती है? मैं इस प्रकार के सम्बन्ध के लिए तैयार नहीं हूँ।'' अपर्णा ने कुछ रोष के साथ कहाँ उसके बाद माँ कुछ कहना शुरू कर ही रही थीं, असन्तुष्ट अपर्णा वहाँ से चल पड़ी।

अत्रान्तरेऽपर्णाया जनको हिमांशुगुप्तस्तत्रागत्य पत्नीं व्याहार्षीत्, ''आगामिनि रविवासरेऽपर्णां द्रष्टुं दिल्लीत आगमिष्यन्ति वरपक्षीयाः। अपर्णा सम्यक् प्रकारेणावबोधय यत् सा तेषां समक्षं नैतादृशं किमपि कथयेद् येनाप्रीतिकरी स्थितिरुत्पद्येत।''

''मया सवैलक्ष्यमवबोधितापि सा विवाहमधिकृत्यान्यथैव तर्कयति। सद्य एव रुष्टा साऽऽत्मनः कक्षमयासीत्।'' सुलोचनाभ्यधात्। ''अवितथमेव चिन्तनीयमेतत्। आगच्छ मया सह, आवां सम्भूय तामनुनेतुं प्रयसिष्यावः।'' इत्युक्तवा

हिमांशुगुप्तोऽर्धाङ्गिन्या सह दुहितुः कक्षमागमत्। सरोषमात्मनः शयनकक्षे पर्यङ्के शयानापर्णाकस्माज्जननीजनकौ वीक्ष्योत्थायोपविष्टा। जनकस्तत्र स्थिते संवेश उपाविक्षत्, जननी च पर्यङ्के दुहितुः पार्श्व एवोपविश्य कराग्रपल्लवांस्तस्याः कुन्तलेषु परिवर्तयन्ती सवात्सल्यं समुदैरिरत्, ''अपर्णे, श्व आगमिष्यन्ति वरपक्षीया दिल्लीतः। स्नातकोत्तरपर्यन्तं शिक्षितः शल्यचिकित्सकोऽस्ति वरः। तुभ्यमुपयुक्तोऽयं युवा। न त्वयैवं व्यवहर्तव्यं येन त आत्मानं तिरस्कृताननुभवेयुः।''

टिप्पणीः सवैलक्ष्यम्–विशेष रूप से, बहुत अच्छी तरह, सम्भूय–मिलकर, शयाना–लेटी हुई, संवेशे–कुर्सी पर।

इस बीच अपर्णा के पिता हिमांशु गुप्त ने वहाँ आ कर पत्नी से कहा, ''आगामी रविवार को अपर्णा को देखने के लिए दिल्ली से लड़के वाले आयेंगे। अपर्णा को अच्छी तरह समझा दो कि वह उनके सामने ऐसा कुछ भी न कहे जिससे अप्रिय स्थिति उत्पन्न हो जाये।'' ''मेरे बहुत अच्छी तरह समझाने पर भी वह विवाह को लेकर अन्यथा ही तर्क देती है। अभी अभी रुष्ट होकर वह अपने कमरे में गई है।'' सुलोचना ने कहाँ

''सचमुच ही यह चिन्तनीय है। आओ मेरे साथ, हम दोनों मिलकर उसे मनाने हेतु प्रयास करेंगे।'' यह कहकर हिमांशु गुप्त अर्धांगिनी के साथ बेटी के कमरे में आ गये।

गुस्से में अपने शयनकक्ष में पलंग पर लेटी हुई अपर्णा अकस्मात् माता–पिता को देखकर उठकर बैठ गई। पिता वहाँ पड़ी कुर्सी पर बैठ गये, और माँ पलंग पर बेटी के पास ही बैठकर अँगुलियों को उसके बालों में घुमाती हुई वात्सल्यपूर्वक बोली, ''अपर्णा, लड़के वाले दिल्ली से कल को आयेंगे। लड़का स्नातकोत्तर तक शिक्षित शल्यचिकित्सक है। यह युवा तुम्हारे लिए उपयुक्त है। तुम ऐसा व्यवहार न करना जिससे वे स्वयं को तिरस्कृत अनुभव करें।''

''उच्चशिक्षिता विदुषी त्वमस्यावयोर्गौरवस्य विषयः। शल्यचिकित्सक एष युवा सेत्स्यति पूर्णतयोपयुक्तस्तुभ्यमस्माकं कुटुम्बस्य गौरवञ्च वर्धयिष्यति। न त्वयैतादृशं किमपि कथयितव्यं यत्तेषामसन्तोषस्य प्रभवो भवेत्।'' हिमांशुगुप्तोऽभ्यधात्।

''तात, स शल्यचिकित्सकोऽस्तीति समञ्जसं, परं भौतिकविज्ञानविषये पी–एच0डी0 उपाधिधारिण्या विश्वविद्यालये सहायकाचार्याया ममापि किञ्चिन्महत्त्वं तु वर्तत एव। विश्वविद्यालयस्यासङ्ख्येया युवतयो मम वर्त्मानुगमिष्यन्तीति न भवद्भिर्विस्मर्तव्यम्। निरन्तरं प्रगमनशीला युवतयः सहस्रशो वर्षेभ्यः प्रवर्तमानाः पुरुषाणामाधिपत्यं स्थापयितुं निर्मापिता अनुपयुक्ताः परम्पराः पर्यवतिष्ठमाना उपयुक्तं नवं पन्थानमनुगच्छेयुरिति निर्धारणमापतति मम कर्त्तव्यक्षेत्रे। अतः सदाक्षिण्यमाचरन्त्यप्यहं जडमतिरिव तेषामेवाज्ञानुवर्तिनी तु न कथमपि भवितुं शक्नोमि!'' अपर्णा व्याहार्षीत्।

टिप्पणीः प्रभवः–हेतु, कारण, पर्यवतिष्ठमानाः–विरोध करती हुई (बहुवचन), प्रगमनशीलाः–प्रगति के मार्ग पर बढ़ती हुई (ब0व0).

''उच्चशिक्षित विदुषी तुम हम दोनों के गौरव का विषय हो। शल्यचिकित्सक यह युवा तुम्हारे लिए पूर्ण रूप से उपयुक्त सिद्ध होगा और हमारे परिवार के गौरव को बढ़ायेगा। तुम ऐसा कुछ भी न कहना जो उनके असंतोष का कारण बने।'' हिमांशु गुप्त ने कहाँ

''पापा, यह ठीक है कि वह शल्यचिकित्सक है, परन्तु भौतिक विज्ञान विषय में पी–एच0डी0 डिग्री लिए हुए विश्वविद्यालय में एसोसिएट प्रोफेसर मेरा भी कुछ महत्त्व तो है ही। विश्वविद्यालय की अनगिनत युवतीयाँ मेरे रास्ते पर चलेंगी यह आपको भूलना नहीं चाहिए। निरन्तर प्रगतिपथ पर आगे बढ़ती हुई युवतीयाँ हजारों सालों से चली आ रही पुरुषों का आधिपत्य स्थापित करने के लिए बनवाई गई ग़लत परम्पराओं का विरोध करती हुई उपयुक्त नये रास्ते पर चलें यह निर्धारित करना मेरे कर्तव्य क्षेत्र में आता है। इसलिए शिष्टाचारपूर्वक आचरण करते हुए भी मैं जडमति की तरह उन्हीं की आज्ञा में चलने वाली तो किसी भी तरह नहीं हो सकती।'' अपर्णा ने उत्तर दिया।

''अपर्णे, उच्चशिक्षिता त्वमुपयुक्तमेवाचरिष्यतीत्यावामपेक्षावहे। प्रत्येकं विषये निर्बन्धशीलां त्वां नातोऽधिकं कथयितुं शक्नोमि'' इत्युक्त्वा जनकस्ततः प्रास्थित। सुलोचनापि भर्तारमन्वगमत्। अनुवर्तिनि दिने डॉ. प्रमोदगुप्त आत्मनो जननीजनकाभ्यां भ्रात्रा भगिन्याऽऽवुत्तेन च सह अपर्णा समैतुमागमत्। अपर्णायाः कुटुम्बजना अभ्यागतान् सस्नेहमभ्यनन्दन्, उपवेशनकक्षे च तानुपावीविशन्। किञ्चित्कालानन्तरम् अपर्णा चायं नैकान्यशनीयानि च तार्यां विन्यस्य तत्रायासीत्, सदाक्षिण्यं सर्वानभिनन्द्य तारीञ्च केन्द्रीयफलके स्थापयित्वा सभ्याचाररीत्या चायं चषकेषु स्रावयित्वा प्रथममभ्यागतेभ्यस्ततश्च जननीजनकाभ्यामपि पर्यवीविषत्, तस्या भ्राता कमलकान्तश्चाशनीयानि सर्वेभ्यो न्यवीविदत। डॉ. प्रमोदगुप्तस्य भगिनी अपर्णायै कमलकान्ताय च चायमशनीयानि च पर्यवीविषत्।

टिप्पणीः आवुत्तेन सह–बहनोई के साथ, उपवेशनकक्षे–ड्राइंगरूम में, बैठक में, उपावीविशन्–बैठाया (उप विश्, णिच्, लुङ्, प्र0पु0ब0व0), तार्याम्–ट्रे में, पर्यवीविषत्–परोसा, serve किया (परि विष्, णिच्, लुङ्, प्र0पु0ए0व0).

''अपर्णा, उच्चशिक्षित तुम ठीक ही व्यवहार करोगी यह हम दोनों आशा करते हैं। हर बात में हठ करने वाली तुम्हें इससे अधिक नहीं कह सकता।'' यह कहकर पिता वहाँ से चल पड़े। सुलोचना भी पति के पीछे चली गई। अगले दिन डॉ. प्रमोदगुप्त अपने माता, पिता, भाई, बहन और बहनोई के साथ अपर्णा को मिलने के लिए आया। अपर्णा के परिवार के लोगों ने स्नेह पूर्वक मेहमानों का अभिनन्दन किया, और उन्हें ड्राइंगरूम में बैठाया। कुछ समय के बाद अपर्णा चाय और कई प्रकार के खाद्य ट्रे में सजाकर वहाँ आ गई, और शिष्टाचारपूर्वक सबका अभिनन्दन करके और ट्रे को सैण्ट्रल टेबल पर रखकर सभ्याचार रीति के अनुसार चाय को कपों में डालकर पहले अतिथियों को और उसके बाद माता–पिता को भी पेश की (सर्व की), और उसके भाई कमलकान्त ने सबको खाद्य पेश किये। डा. प्रमोदगुप्त की बहन ने अपर्णा को और कमलकान्त को चाय और खाद्य सर्व किये।

''दुहितः, उच्चशिक्षितायां विश्वविद्यालये प्राध्यापिकायाः सम्मानिते पदे नियुक्तायामपि च त्वयि विनम्रतासेवाभावादयो गुणा मां निरतिशयं प्राबीभवन्। साक्षाद् देवीव सुदर्शनी त्वमस्माकं कुटुम्बायोत्तमा वधूः सेत्स्यतीति मे दृढो विश्वासः।'' प्रमोदगुप्तस्य जनकः कामतानाथो व्याहार्षीत्। ''विनम्रता सेवाभावः समर्पणशीलता चेत्यादिभिर्गुणैस्तु वधूषु भवितव्यमेव। एवंविधैर्गुणैः सम्पन्नैव वधूर्मयान्विष्यते।'' प्रमोदगुप्तस्य जननी वेणुकाभ्यधात्।

''माननीये, अन्यथा न प्रतीयेत चेत् किञ्चित् निवेदयितुं कामये।'' अपर्णा प्रार्तथत। ''निःसङ्कोचं कथय।'' वेणुका प्रत्यवादीत्। ''अत्रभवत्या विनम्रता सेवाभावः समर्पणशीलता चेत्यादिभिर्गुणैः सम्पन्ना वधूरन्विष्यते, उपयुक्तमेतत्। अहं जिज्ञासे यदेतादृशा गुणा वधूष्वेवापेक्ष्यन्त उत वरेऽप्येषामपेक्षा तथैव भवति?'' अपर्णान्वयुक्त।

''पुत्रि, सामान्येन त्वेते गुणा नारी वा पुरुषो वा सर्वेष्वेवापेक्ष्यन्ते, परं नारीणां स्थितिरीषद् भिन्ना भवति। युवतीर्जननीजनकयोगृहं परित्यज्य श्वशुरालयमागच्छति यत्र तस्यै सर्वं नवं भवति। विनम्रतासमर्पणभावप्रभृतिभिर्वैशेष्यैर्युक्ता नववधूरनायासमेव श्वशुरालयस्य सम्बन्धिनां प्रीतिपात्रं जायते।'' वेणुका व्याहार्षीत्।

टिप्पणीः प्रार्तथत–प्रार्थना की (प्र अर्थ्, लुङ्,प्र0पु0ए0व0), जिज्ञासे–जानना चाहती हूँ (ज्ञा, सन्नन्त, आत्मनेपद, लट्, उ0पु0ए0व0), अन्वयुक्त–प्रश्न किया (अनु युजिर्, लुङ्, प्र0पु0ए0व0, 'स्वराद्यन्तोपसर्गादिति वक्तव्यम्' वा. 939 इत्यात्मनेपदम्).

''बेटी, उच्चशिक्षित और विश्वविद्यालय में प्राध्यापिका के सम्मानित पद पर नियुक्त भी तुम्हारे अन्दर विनम्रता, सेवाभाव आदि गुणों ने मुझे अत्यधिक प्रभावित किया है। साक्षात् देवी जैसी सुन्दर तुम हमारे परिवार के लिए उत्तम वधू सिद्ध होगी, यह मेरा दृढ़ विश्वास है।'' प्रमोद गुप्त के पिता कामतानाथ ने कहाँ ''विनम्रता, सेवाभाव और समर्पणशीलता आदि गुण तो बहुओं में होने ही चाहिए। इस प्रकार के गुणों से सम्पन्न ही वधू मैं ढूँढ रही हूँ।'' प्रमोद गुप्त की माँ वेणुका ने कहाँ ''माननीये, यदि अन्यथा न लगे तो कुछ निवेदन करना चाहती हूँ।'' अपर्णा ने प्रार्थना की। ''निःसङ्कोच कहो।'' वेणुका ने उत्तर दिया। ''आप विनम्रता, सेवाभाव और समर्पणशीलता आदि गुणों से सम्पन्न वधू ढूँढ रही हैं, यह ठीक है। मैं जानना चाहती हूँ कि इस प्रकार के गुण बहुओं में ही चाहिए या वर में भी इनकी अपेक्षा उसी तरह होती है'' अपर्णा ने प्रश्न किया। ''बेटी, सामान्य रूप से तो ये गुण नारी हो या पुरुष हो सबमें ही अपेक्षित होते हैं, परन्तु नारियों की स्थिति थोड़ा अलग होती है। युवती माता–पिता का घर छोड़कर ससुराल आती है जहाँ उसके लिए सब नया होता है। विनम्रता, समर्पणभाव आदि विशेषताओं से युक्त नव वधू अनायास ही ससुराल के सम्बन्धियों की प्रीति का पात्र बन जाती है।'' वेणुका ने उत्तर दिया।

''महोदये, एका जिज्ञासा मां बाधते। जननीजनकौ दुहितरं जनयतः, सवात्सल्यं पालनं पोषणं कुर्वन्तौ तां शिक्षयतः, तामात्माश्रितां विधत्तः। सा दुहिता कञ्चिदपूर्वपरिचितं युवानमुपयम्य जननीजनकयोर्गृहं परित्यज्य तस्य गृहं श्वशुरालयमागच्छति। तस्याः शिक्षया तस्याः पतिः श्वशुरालयस्यान्ये च जना लाभान्विता भवन्ति। आत्माश्रितया तयार्जितं सर्वं धनमपि तैरेवोपयुज्यते। अथापि तस्या एव किमित्येतदपेक्ष्यते यत् सा नम्रतया सेवया समर्पणेन च सर्वेषां स्नेहपात्रं जायेत? मान्ये, नैतदुपयुक्तम्। वस्तुतो नम्रता सेवाभावः समर्पणभावश्चेत्यादीनि सन्ति जीवनमूल्यानि यानि युवसु युवतीषु च समानरूपेणापेक्ष्यन्ते।'' अपर्णाततर्कत्।

''जीवनमूल्यानि सर्वेष्वेवापेक्ष्यन्त इत्युपयुक्तं कथयसि त्वम्। अथापि नैतद् विस्मर्तव्यं यत् प्रागैतिहासिकात् कालात् निरन्तरं प्रवर्तमाना विवाहस्य परम्परा वर्तत एकं याथार्थ्यम्। प्रत्येकं पिताऽऽत्मनो दुहितरं

कन्यादानसङ्कल्पेन वराय यच्छति। कन्यादानानन्तरं दुहितरि जनकस्याधिकारः समाप्यते। समाजे गृहस्थसंस्थानं व्यवस्थापयितुं पूर्वजाः सुविचार्येमां परम्परां प्राववर्तन्।'' वेणुकाभ्यधात्।

टिप्पणीः उपयम्य–विवाह करके।

महोदया, एक जिज्ञासा मुझे परेशान कर रही है। माता–पिता बेटी को जन्म देते हैं, वात्सल्यपूर्वक पालन–पोषण करते हुए उसे पढ़ाते हैं, उसे आत्मनिर्भर बनाते हैं। वह बेटी किसी अपूर्वपरिचित युवक से विवाह करके माता–पिता के घर को छोड़कर उसके घर ससुराल चली जाती है। उसकी शिक्षा से उसका पति और ससुराल के दूसरे लोग लाभान्वित होते हैं। आत्मनिर्भर उसके द्वारा अर्जित सारा धन भी उनके द्वारा ही उपयोग किया जाता है। इसके बावजूद उसी से क्यों यह उम्मीद की जाती है कि वह नम्रता, सेवा और समर्पण से सबकी स्नेहपात्र बने? माननीये, यह ठीक नहीं। वस्तुतः नम्रता, सेवाभाव और समर्पणभाव इत्यादि जीवनमूल्य हैं जो युवाओं में और युवतीयों में समान रूप से अपेक्षित होते हैं।'' अपर्णा ने तर्क दिया।

''जीवनमूल्य सबमें ही अपेक्षित होते हैं, यह तुम ठीक कहती हो। इसके बावजूद यह नहीं भूलना चाहिए कि प्रागैतिहासिक काल से निरन्तर चली आ रही विवाह की परम्परा एक यथार्थ है। प्रत्येक पिता अपनी बेटी को कन्यादान का सङ्कल्प करके वर को देता है। कन्यादान के बाद बेटी पर पिता का अधिकार समाप्त हो जाता है। समाज में गृहस्थ की संस्था को ठीक प्रकार से स्थापित करने के लिए पूर्वजों ने खूब विचार करके इस परस्परा को शुरू किया था।'' वेणुका ने कहाँ

''आर्ये, उपयुक्ता न्यायानुसारिणी च वर्तत एषा विवाहस्य परम्परा नात्र मतद्वयमथापि कन्यादानस्यौचित्यं नाहमवगन्तुं क्षमे। दानं तु कस्यचिद् वस्तुनः सम्भवति, गवादिपशूनामपि दानं क्रियते। एकः प्रश्नो निरन्तरं मां व्यथयति, कन्या नास्ति किञ्चिद् वस्तु, न चापि सा वर्तते कश्चित् पशुर्यस्य रज्जुं शङ्कोः श्राथयित्वा दाता ग्रहीत्रे यच्छति। वर इव बुद्धिवैभवसम्पन्ना वाग्विशारदा शिक्षिता च भवति युवतीः। गृहस्य प्रणयने पुरुषापेक्षया बृहत्तरां भूमिकां निर्वहति नारी। अतो न कथमपि वरीयः पुरुषः। वरः कन्या च समाने वर्तेते, उभयोः स्थानं महत्त्वञ्चापि समाने एव। कन्यानां दानस्य सङ्कल्पो नास्त्यौपयिकः।'' अपर्णा समुदैरिरत्। ''अपर्णे, नैतदुचितं, पुरुषो गृहस्य प्रमुखो भवति। स गृहस्य प्रणयनाय धनमर्जयति। यद्यपि गृहस्य प्रणयने गुर्वर्थां भूमिकां निर्वहति नारी तथाप्यग्रियाभियोज्यता तु पुरुषस्यैव भवति।'' वेणुकाततर्कत्।

टिप्पणीः शङ्कोः–खूँटे से (पञ्चमी ए0व0), श्राथयित्वा–खोलकर, औपयिकः–उचित, अग्रिया–मुख्य, अभियोज्यता–जिन्मेदारी।

आर्ये, यह विवाह की परम्परा उपयुक्त और न्यायसंगत है, इसमें मतभेद नहीं, इसके बावजूद कन्यादान का औचित्य मैं नहीं समझ सकती। दान तो किसी वस्तु का हो सकता है, गौ आदि पशुओं का भी दान किया जाता है। एक प्रश्न मुझे निरन्तर व्यथित करता है, कन्या कोई वस्तु नहीं है, न ही वह कोई पशु है जिसकी रस्सी खूँटे से खोलकर दाता दान लेने वाले को देता है। वर के समान युवती बुद्धिवैभव से सम्पन्न, वाणी का प्रयोग करने में कुशल और शिक्षित होती है। घर को चलाने में पुरुष की अपेक्षा नारी अधिक बड़ी भूमिका निभाती है। इसलिए

पुरुष किसी भी तरह अधिक अच्छा (Better) नहीं है। वर और कन्या, दोनों का स्थान और महत्त्व एक समान हैं। कन्याओं के दान का संकल्प उचित नहीं है।'' अपर्णा ने कहाँ ''अपर्णा, यह उचित नहीं है, पुरुष घर का मुखिया होता है। वह घर चलाने के लिए धन कमाता है। यद्यपि नारी घर को चलाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है तथापि मुख्य जिम्मेदारी तो पुरुष की ही होती है।'' वेणुका ने तर्क दिया।

''भाविनि, नैतत् स्वीकर्तुं शक्यते। साम्प्रतिके युगे शिक्षिता सर्वथालङ्कर्मीणा च महिला पुरुष इव वृत्तिं कृत्वा धनमर्जयति। क्वचित्तु पुरुषादप्यधिकतरं धनमर्जयति सा।। गार्हस्थ्यानामभियोज्यतानां सम्पादने च सा पुरुषेणांसांसिसंहता क्रमते। पुरुषस्त्वात्मनोऽहङ्कारस्य तुष्टय एव नारीमवरपदस्थां स्थापयितुं कामयते, अन्यथा तु पुरुषेण समाना अभियोज्यता अपि निष्पादयन्ती सा सन्ततिं जनयित्वाऽऽत्मने वरीयांसं स्थानमनायासमेव सृजति।'' अपर्णा किञ्चिदुत्तेजनापूर्णेन स्वरेणाभ्यधात्। ''अपर्णे, उच्चशिक्षितास्ति भवती। एतादृशश्चिरकालात् प्रवर्तमानानां परम्पराणां विरोधो नोचितः। अस्माकीनो वर्तत एकः सामान्यः कुटुम्बः। विशिष्टप्रतिभासम्पन्नात्रभवती कथमस्माकं कुटुम्बे समायुक्ता भविष्यति? अतः क्षम्यताम्। सम्प्रति वयं यास्यामः।'' इत्युक्त्वा पुत्रमन्यांश्च तस्याः कुटुम्बजनान् प्रस्थातुं सङ्केतयन्ती सा तत उदस्थात्।

डॉ. प्रमोदगुप्तो जननीमवबोधयितुं प्रायतिष्ट, परं स किमपि तर्कयेत् ततः पूर्वमेव सा सर्वान् ततः प्रस्थातुं प्राववर्तत्। किंकर्त्तव्यविमूढौ अपर्णाया जननीजनकौ न किमपि कर्तुमपपारताम्। ''अपर्णे, न त्वयोपयुक्तमाचरितम्।'' जननी व्याहार्षीत्।

''मातः, ते सन्ति दानार्थिनः। नाहं किमपि वस्तु, न चापि पशुः। नाहं भवद्भ्यां कन्यादानेन कस्मैचिदपि दातुं शक्या। एतादृक्षाणां चिन्तनविहीनानां जनानां तु पलायनमेव श्रेयस्करम्।'' अपर्णा प्रत्यवादीद् विषयञ्च व्यरीरमत्।

टिप्पणी: भाविनि—मैडम (सम्बोधन), अलङ्कर्मीणा—योग्य, सक्षम, कुशल, अंसांसिसंहता—कंधे से कंधा मिलाकर, क्रमते—चल रही है, समायुक्ता भविष्यति—अन्वित होगी, तालमेल बैठाओ गी, प्राववर्तत्—विवश कर दिया, व्यरीरमत्—विराम दे दिया (वि रम् णिच् लुङ्, प्र0पु0ए0व0, 'व्याङ्परिभ्यो रमः' पा. सू. 1.3.83 इति परस्मैपदम्).

मैडम, यह स्वीकार नहीं किया जा सकता। वर्तमान युग में शिक्षित और सर्वथा सक्षम महिला पुरुष की तरह व्यवसाय करके धन अर्जित करती है। कहीं तो पुरुष से भी अधिक धन कमाती है। और गृहस्थ की जिम्मेदारियों को पूरा करने में वह पुरुष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलती है। पुरुष तो अपने अहंकार की तुष्टि के लिए ही नारी को नीचे रखना चाहता है, अन्यथा तो पुरुष के समान जिम्मेदारियों को भी पूरा करती हुई वह सन्तान को जन्म देकर अपने लिए अनायास ही उच्चतर स्थान बना लेती है।'' अपर्णा ने कुछ उत्तेजनापूर्ण स्वर में कहाँ

''अपर्णा, आप उच्चशिक्षिता हैं। इस प्रकार चिरकाल से चली आ रही परम्पराओं का विरोध उचित नहीं। हमारा एक सामान्य परिवार है। विशिष्ट प्रतिभा से सम्पन्न आप हमारे परिवार के साथ कैसे तालमेल बैठाएँगी? इसलिए क्षमा करें। अब हम चलेंगे।'' यह कहकर पुत्र को और उसके परिवार के दूसरे लोगों को प्रस्थान करने के लिए संकेत देती हुई वह वहाँ से उठ गई। डॉ. प्रमोद गुप्त ने माँ को समझाने का प्रयत्न किया, परन्तु वह कुछ भी

तर्क दे उससे पहले ही उसने सबको वहाँ से प्रस्थान करने के लिए विवश कर दिया। किंकर्त्तव्यविमूढ अपर्णा के माता–पिता कुछ भी नहीं कर पा रहे थे। ''अपर्णा, तुमने अच्छा नहीं किया।'' माँ ने कहाँ ''माँ, वे दानार्थी हैं। मैं कोई वस्तु नहीं हूँ, न ही पशु हूँ। मुझे आप दोनों कन्यादान करके किसी को भी दे नहीं सकते। इस प्रकार के चिन्तन–विहीन लोगों का तो पलायन ही श्रेयस्कर है।''

अपर्णा ने उत्तर दिया और विषय को विराम दे दिया।

एषोऽवर्तिष्ट फरवरीमासस्यान्तिमो दिवसः। विश्वविद्यालयस्य भौतिकविज्ञानविभागस्य प्राङ्गणे संवेश उपविष्टापर्णा मञ्जरीभिराचितानां सहकाराणां प्रत्यग्रकुसुमाचितानां लघुपादपानाञ्च सुगन्धेन सुखावहस्य गन्धवहस्यानन्दं निषेवमाणावर्तिष्ट। अत्रान्तरे तत्राभ्यायासीत्तस्याः सहकर्मी सहायकाचार्यो डॉ. व्रजेशभारद्वाजः। तमभिनन्दयन्ती अपर्णा सदाक्षिण्यं तं समीपस्थे संवेश उपावीविशत्। ''रमणीयेऽस्मिन् ऋतौ मनोहारिण्यस्मिन् प्राङ्गणे स्थितात्रभवती किं चिन्तयति?''

भारद्वाजोऽन्वयुक्त।

''न किमपि विशेषम्। वस्तुतो ह्यस्तनी समुत्पत्तिर्मुहुर्मुहुर्मम मनोऽभ्यसार्षीत्। आत्मनो वर्चोऽक्षुण्णं स्थापयितुं पुरुषैर्निर्मिता निराधारास्तर्कहीनाश्च परम्परा अद्याप्युच्चशिक्षितामपि, आत्माश्रितामपि नारीं केवलं वस्तु, गवादिपशुरिव वा मन्यन्ते। समाजस्यैतादृशं चिन्तनं मामरुन्तुदं व्यथयति।'' अपर्णा व्याहार्षीत्।

''न मयावगतं यत् किमत्रभवती चिकथयिषति। असमञ्जसं न प्रतीयेत चेत् स्पष्टं कथयतु भवती कोऽस्त्यत्रभवत्या व्यामोहस्य हेतुः?'' डॉ. व्रजेशभारद्वाजोऽन्वयुक्त।

टिप्पणी–सुखावहः–सुहावना, अभ्यायासीत्–आ पहुँचा, समुत्पत्तिः–घटना, अभ्यसार्षीत्–चक्कर काट रही है, Haunting, चिकथयिषति–कहना चाहती है (कथ्, सन्नन्त, लट्, प्र0पु0ए0व0), असमञ्जसम्–अनुपयुक्त, व्यामोहस्य–परेशानी का, बेचैनी का।

यह फरवरी महीने का अन्तिम दिन था। विश्वविद्यालय के भौतिक विज्ञान विभाग के प्राङ्गण में कुर्सी पर बैठी हुई अपर्णा मञ्जरियों से लदे हुए आमों की और ताजे फूलों से लदे हुए पौधों की सुगन्ध से सुहावने वायु का आनन्द ले रही थी। इस बीच वहाँ उसका सहकर्मी एसोसिएट प्रोफेसर डॉ. व्रजेश भारद्वाज आ गया। उसका अभिनन्दन करती हुई अपर्णा ने शिष्टाचारपूर्वक उसे पास में पड़ी कुर्सी पर बैठाया।

''इस रमणीय मौसम में इस मनोहारी प्राङ्गण में बैठी हुई आप क्या सोच रही हैं?'' भारद्वाज ने प्रश्न किया।

''विशेष कुछ भी नहीं। वस्तुतः कल की घटना बार–बार मन में चक्कर काट रही है। अपने वर्चस्व को अक्षुण्ण रखने के लिए पुरुषों द्वारा निर्मित निराधार और तर्कहीन परम्पराएँ आज भी उच्चशिक्षित भी, आत्मनिर्भर भी नारी को केवल वस्तु अथवा गौ आदि पशु के समान मानती हैं। समाज का ऐसा चिन्तन मुझे मर्मवेधी व्यथा देती है।'' अपर्णा ने कहाँ

''मैं नहीं समझा कि आप क्या कहना चाहती हैं। यदि अनुपयुक्त न लगे तो आप स्पष्ट बताएँ कि आप की परेशानी का क्या कारण है?'' डॉ. ब्रजेश भारद्वाज ने प्रश्न किया।

''उच्चशिक्षितः सम्माननीये सहायकाचार्यपदे च नियुक्तो भवान् सर्वथा प्रत्ययनीयः। ह्य एकः शल्यचिकित्सको मम पाणिं प्रार्थयितुमात्मनः कुटुम्बेन सह दिल्लीतोऽभ्यायात्। चिकित्सकमहोदयस्य जननी तं तु न किमपि व्याहर्तुमन्वज्ञास्त, स्वयमेव संवदन्ती मम चिन्तनाद्वैमत्यञ्च प्रदर्शयन्ती सा मां निरास्थत्।'' अपर्णा प्रत्यवोचत्।

''क्षमस्व भाविनि, अनितरसाधारणलावण्यवती, विश्वविद्यालयस्य सहायकाचार्यायाः सम्मानिते पदे शोभमानात्रभवती न केनापि यूना प्रत्याख्यातुं शक्यते। न मयावैतुं शक्यते यत्कथमेकः शल्यचिकित्सक एतावान् मन्दभाग्यः सम्भवति?'' भारद्वाजोऽन्वयुक्त। ''तस्य जननी गामिव शान्तां वधूमपैक्षिष्ट। यदाहमततर्कं यन्नास्ति कन्या गौरिव पशुर्यां जनको दानं कृत्वा वराय दद्यात्, तदा सा रुष्टाभवत्, सपद्येव च पुत्रेण कुटुम्बेन च सह ततः प्रातिष्ठत।'' अपर्णाभ्यधात्।

टिप्पणीः प्रत्ययनीयः–विश्वास के योग्य, व्याहर्तुम्–कहने के लिए, निरास्यत्–Rejected, नापसन्द कर दिया (नि अस्, लङ्, प्र0पु0ए0व0), प्रातिष्ठत–चल दी (प्र स्था, लङ्, प्र0पु0ए0व0 'समवप्रविभ्यः स्थः' पा. सू. 1.3.22 इत्यात्मनेपदम्), अभ्यधात्–कहाँ

उच्चशिक्षित और सम्माननीय एसोसिएट प्रोफेसर के पद पर नियुक्त आप सर्वथा भरोसे योग्य हैं। कल एक शल्यचिकित्सक मेरा हाथ माँगने के लिए अपने परिवार के साथ दिल्ली से आया था। डॉक्टर साहब की माँ ने उसे तो कुछ भी कहने की अनुमति नहीं दी, स्वयं ही बात करते हुए और मेरी सोच से वैमत्य प्रकट करते हुए उसने मुझे नापसन्द कर दिया।'' अपर्णा ने उत्तर दिया। ''क्षमा करें मैडम, अप्रतिम लावण्यवती (खूबसूरत), विश्वविद्यालय के एसोसिएट प्रोफेसर के सम्मानित पद पर सुशोभित आप किसी भी युवक द्वारा नापसन्द नहीं की जा सकती। मैं नहीं समझ सकता कि कैसे एक शल्यचिकित्सक इतना बदकिस्मत हो सकता है!'' भारद्वाज ने प्रश्न किया।

''उसकी माँ को गौ जैसी शान्त वधू चाहिए थी। जब मैंने तर्क दिया कि कन्या गौ की तरह पशु नहीं है जिसे पिता दान करके वर को दे, तो वह नाराज हो गई और तुरन्त ही अपने बेटे और परिवार के साथ वहाँ से चल पड़ी।'' अपर्णा ने कहाँ

''दुर्भाग्यपूर्णमेतत्। भाविनि, अत्रभवत्यान्यथा न गृह्णेत चेत् किञ्चिच्चिकथयिषामि।'' भारद्वाजः सदाक्षिण्यमवादीत्। ''निःसङ्कोचं कथयतु भवान्।'' सा प्रत्यवोचत्। ''नैकैर्वर्षैरावां सहकर्मिणौ स्वः। आप्रथमाद् भवती मह्यं रोचते। नाहं सङ्कोचवशात् कदाप्यात्मनो मनोभावानभिव्याञ्जिषम्। अहं जात्या ब्राह्मणो भवती च गुप्तवंशोद्भवा, कदाचिदेष सम्बन्धो भवत्या जननीजनकाभ्यां न रोचेतेति विचिन्त्याहं वाग्यत एवास्थाम्।'' डॉ. भारद्वाजः समुदैरिरत्। ''श्रीमन्, नाहमद्य यावदेतादृशं किमप्यन्वभूवम्। यद्यपि नाहं जातिभेदं महार्थं मन्ये तथाप्युभयोः कुटुम्बयोर्गुरुजनास्त्वस्मिन्विषये परम्परावादिनः सन्त्यत्र नास्ति मतद्वयम्।'' इति कथयन्त्यारक्तकपोलापर्णा लज्जानम्रमुख्यजनि। ''किं भवती मामधिकृत्य कदाचिदात्मनो मनसि कांश्चित् कोमलभावानन्वभूत्?'' डॉ. भारद्वाजोऽन्वयुक्त।

''अवितथमेव नाहमद्य यावदेतादृशं किमप्यन्वभूवं, परमहं भवते रोच इति परिज्ञानं नियतमेव मामजिह्लदत्।'' किञ्चित्सङ्कुचन्ती अपर्णा शनैः शनैरभ्यधात्। ''मह्यमेतन्मात्रं पर्याप्तम्।'' इत्युक्त्वा स वाचंयमोऽजनि। उभयोरध्यायस्य कालोऽभूदतस्तौ व्याख्यानाय प्रास्थिषाताम्।

टिप्पणीः वाग्यतः–चुप, अजिह्लदत्–आनन्दित किया (ह्लाद, णिच्, लुङ्, प्र0पु0ए0व0), वाचंयमः–चुप, अध्यायस्य–लैक्चर का।

''यह दुर्भाग्यपूर्ण है। मैडम, यदि आप अन्यथा न लें तो कुछ कहना चाहता हूँ।'' भारद्वाज ने शिष्टाचार पूर्वक कहाँ ''आप निःसङ्कोच कहें।'' उसने उत्तर दिया। ''कई सालों से हम दोनों सहकर्मी हैं। शुरू से आप मुझे अच्छी लगती हैं। सङ्कोच के कारण मैंने कभी भी अपने मन के भावों को व्यक्त नहीं किया। मैं जाति से ब्राह्मण हूँ और आप गुप्त वंश में उत्पन्न हुई हैं, हो सकता है कि यह सम्बन्ध आपके माता–पिता को पसन्द न हो यह सोचकर मैं चुप ही रहा।'' डॉ. भारद्वाज ने कहाँ 'श्रीमन्, मैंने आज तक ऐसा कुछ भी अनुभव नहीं किया। यद्यपि मैं जातिभेद को महत्त्वपूर्ण नहीं मानती, तथापि दोनों परिवारों के बड़े तो इस विषय में परम्परावादी हैं, इसमें दो मत नहीं हैं।'' यह कहते हुए आरक्त कपोलों वाली अपर्णा लज्जा के कारण नम्रमुखी हो गई।

''क्या आपने मुझे लेकर कभी अपने मन में कुछ कोमल भावनाओं को अनुभव किया है?'' डॉ. भारद्वाज ने प्रश्न किया।

''सचमुच ही मैंने आज तक ऐसा कुछ भी अनुभव नहीं किया, परन्तु आप मुझे पसन्द करते हैं इस जानकारी ने निश्चित ही मुझे प्रसन्न किया है।'' कुछ सकुचाती हुई अपर्णा ने धीरे–धीरे कहाँ

''मेरे लिए इतना काफी है।'' यह कहकर वह चुप हो गया। दोनों के लैक्चर का समय हो गया था इसलिए दोनों व्याख्यान के लिए चल पड़े।

कार्यकालानन्तरं गृहं प्राप्यापि भारद्वाजोऽपर्णाया मनोऽभ्यसार्षीत्। साज्ञास्त यद् रूढिवादिनस्तस्याः कुटुम्बजना विप्रवंशजेन भारद्वाजेन सह तस्याः परिणयं न कदाप्यनुज्ञास्यन्ति, परं सा भारद्वाजाय रोचत इति परिज्ञानं तस्या मनस्यपि तस्मिन् प्रणयस्य बीजं प्रारूरुहत्। यापर्णाद्य यावदारब्धमात्रे विवाहस्य प्रसङ्गे क्षुब्धाजायत तस्याः कल्पनास्वद्य भारद्वाजस्याधिपत्यं तामात्ममोहितामिव व्यधात्। यद्यपि निराधाराणां तर्कहीनानाञ्च परम्पराणां पर्यवस्थानमवर्तिष्ट तस्याः स्वभावस्य वैशिष्ट्यं तथापि जननीजनकयोर्विरुद्धं गत्वा विजातीयं कञ्चिद् युवानं परिणयेदिति न सा कर्तुमधर्षीत्। परं भारद्वाजस्य सङ्कल्पं निरस्य प्रक्षिपेदित्यपि न तया कर्तुमशाकि।

अन्येद्युर्विश्वविद्यालये भारद्वाजोऽपर्णायाः कक्षमभ्यायासीत्। तस्यागमनेन प्रहृष्टापर्णा कफघ्नीमानीनयत्। कफघ्नीं स्वदमाना सा व्याहार्षीत्, ''अवितथमेवातः पूर्वं नाहं कदाप्येवमन्वभूवं परं भवतो रुचिं ज्ञात्वा सम्प्रत्यहमपि भवत्यनुरागवतीति याथार्थ्यं निराकर्तुं न शक्यते। दम्पत्योर्जीवने महिलानां पुरुषाणाञ्च समानं स्थानमधिकृत्य मम चिन्तनाद्वैमत्यं चेत्तदा व्यक्तं कथयतु भवान्। यद्यावयोर्विवाहमधिकृत्योभयोः कुटुम्बयोर्मध्ये मतैक्यं जायेत तदापि विवाहावसरे नाहमात्मनो जनकं कन्यादानसदृशमनुष्ठानं सम्पादयितुमनुज्ञास्यामि। किमेतादृशो मम निर्बन्धो भवतः कुटुम्बजनैः स्वीकार्यो भविष्यति?'' अपर्णान्वयुक्त।

टिप्पणीः प्रारूरुहत्–अंकुरित हो गया, कफघ्नी–कॉफी।

कार्यकाल के बाद घर पहुँचकर भी भारद्वाज अपर्णा के मन में चक्कर काटता रहा। वह जानती थी कि उसके परिवार के रूढ़िवादी लोग ब्राह्मण वंश में उत्पन्न हुए भारद्वाज के साथ उसके विवाह की कभी भी अनुमति नहीं देंगे, परन्तु भारद्वाज उसे पसन्द करता है इस जानकारी ने उसके मन में भी उसके प्रति प्रणय का बीज अंकुरित कर दिया। जो अपर्णा आज तक विवाह का प्रसङ्ग चलते ही क्षुब्ध हो जाती थी उसकी कल्पनाओं में आज भारद्वाज के आधिपत्य ने उसे आत्ममोहित जैसी बना दिया। यद्यपि निराधार और तर्कहीन परम्पराओं का विरोध उसके स्वभाव की विशेषता थी, तथापि माता–पिता के विरुद्ध जाकर किसी विजातीय युवक से विवाह करे यह करने की हिम्मत वह नहीं कर सकती थी। परन्तु भारद्वाज की कल्पना को झटककर फेंक दे, यह भी उससे नहीं किया जा सका।

अगले दिन विश्वविद्यालय में भारद्वाज अपर्णा के कक्ष में आया। उसके आने से प्रसन्न अपर्णा ने कॉफी मँगवाई। कॉफी का स्वाद लेती हुई अपर्णा ने कहा, यह सत्य है कि अबसे पहले मैंने ऐसा कभी अनुभव नहीं किया, परन्तु आपकी रुचि जानकर अब मैं भी आपसे प्यार करने लगी हूँ, इस यथार्थ से इनकार नहीं किया जा सकता। दम्पती के जीवन में महिलाओं और पुरुषों के समान स्थान को लेकर मेरी सोच से यदि मतभेद हो तो आप स्पष्ट कहें। यदि हम दोनों के विवाह को लेकर दोनों परिवारों के बीच मतैक्य हो जाये, तब भी विवाह के समय मैं अपने पिता को कन्यादान जैसा अनुष्ठान करने की अनुमति नहीं दूँगी। क्या मेरा यह आग्रह आपके परिवार के लोगों को स्वीकार्य होगा? अपर्णा ने प्रश्न किया।

''भाविनि, वयमेकविंशतितम्यां शताब्द्यां निवसामः। अद्य पुरुषेण सहांसांसिसंहता प्रगमनपथे निरन्तरं वर्धते नारी। किञ्चिद्वस्तु पशुर्वा नास्ति नारी, नियतमेव न तस्या दानं कर्तुं शक्यते। अहमिव भवत्यपि विश्वविद्यालये सहायकाचार्या। अतो नैतेन भवत्याश्चिन्ताया हेतुना भवितव्यम्।'' भारद्वाजोऽभ्यधात्। ''यद्येवं प्रथमं भवानात्मनो कुटुम्बजनैः सह विमृश्यावगच्छतु यत्ते ब्राह्मणेतरजात्याः कन्यां स्वीकर्तुं सज्जाः सन्ति। तदनन्तरमहमात्मनो जननीजनकावेतदर्थमनुनेतुं प्रयतिष्ये। उभयोः कुटुम्बयोः सहमत्यैवैतत् सम्भवति।'' अपर्णा समुदैरिरत्।

''अपर्णे, यत्सत्यं यद्यपि नाहं कदापि कथयितुमधर्षिषं तथापि याथार्थ्यमेतद् यत् सातिशयमनुरक्तोऽस्म्यहं त्वयि।'' भारद्वाजो व्याहार्षीत्।

''डॉ. भारद्वाज, मयि भवतोऽनुरागस्य ज्ञानात्पूर्वं नाहमेकदाप्यचिचिन्तं यत् कदाचिदहमपि कस्मिंश्चिद्यूनि प्रणयशीला भवितुं शक्नोमि, अद्य चैवं प्रतीयते यथा भवन्तं विना न मया जीवितुं शक्यते।'' अपर्णा व्याहार्षीत्। ''अपर्णे, अहं तु आप्रथमदर्शनात् भवत्यामनुरक्तोऽस्मि। यद्यपि नाहं कदाप्यात्मनो मनोभावानभिव्याञ्जिषं तथापि त्वां विना जीवनस्य कल्पनापि मह्यमसह्यावर्तिष्ट।'' भारद्वाजोऽवोचत्।

''न मया कदाप्यनुमातुमशाकि यद्भवान् मय्यनुरक्तोऽस्ति। किमिति न भवान् कदापि मम समक्षमात्मनः प्रणयं प्राददर्शत्?'' अपर्णान्वयुक्त।

टिप्पणीः प्रगमनपथे–प्रगति के मार्ग पर।

मैडम, हम इक्कीसवीं शताब्दी में रह रहे हैं। आज नारी पुरुष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर प्रगति के मार्ग पर निरन्तर बढ़ रही है। नारी कोई वस्तु या पशु नहीं है, निश्चित रूप से उसका दान नहीं किया जा सकता। मेरी तरह आप भी विश्वविद्यालय में एसोसिएट प्रोफेसर हैं। इसलिए यह आपकी चिन्ता का विषय नहीं होना चाहिए।'' भारद्वाज ने कहाँ

''यदि ऐसा है तो पहले आप अपने परिवार के लोगों के साथ विमर्श करके पता लगाएँ कि वे ब्राह्मणेतर जाति की कन्या को स्वीकार करने के लिए तैयार हैं। उसके बाद मैं अपने माता–पिता को इसके लिए मनाने हेतु प्रयास करूँगी। दोनों परिवारों की सहमति से ही यह हो सकता है।'' अपर्णा ने कहाँ

''अपर्णा, सच तो यह है कि यद्यपि मैं कभी भी कहने की हिम्मत नहीं कर सका, तथापि यथार्थ यह है कि मैं तुम्हें अत्यधिक प्यार करता हूँ।'' भारद्वाज ने कहा।

''डॉ. भारद्वाज, मेरे प्रति आपके अनुराग का पता लगने से पहले मैंने एक बार भी नहीं सोचा था कि कभी मैं भी किसी युवक से प्यार कर सकती हूँ, और आज ऐसा लगता है जैसे आपके बिना मेरे से जिया नहीं जा सकता।'' अपर्णा ने कहाँ ''अपर्णा, मैंने तो जब पहली बार तुम्हें देखा तब से तुम से प्यार करता हूँ। यद्यपि मैंने कभी भी अपने मन के भावों को व्यक्त नहीं किया, तथापि तुम्हारे बिना जीने की कल्पना भी मेरे लिए असह्य थी।'' भारद्वाज ने कहा।

''मैं कभी भी अनुमान नहीं लगा सकी कि आप मुझ में अनुरक्त हैं। आपने मेरे सामने कभी भी अपने प्रणय का प्रदर्शन क्यों नहीं किया?'' अपर्णा ने प्रश्न किया।

''सच्छास्त्रानुसारी परम्परावादी वर्ततेऽस्माकं कुटुम्बः। तथैव भवत्या गुरुजना अपि। गुप्तवंशोद्भवाया भवत्या विप्रवंशजेन मया सह परिणयमावयोर्गुरुजनाः स्वीकरिष्यन्त्यत्रावर्तिष्ट सन्देहः। परिवारस्य विरोधं पर्यवतिष्ठमानोऽप्यहं तु भवत्याः प्रणयं प्रार्थयितुं सज्जोऽवर्तिषि, परं भवत्या विषये न किमपि कथयितुमशाकि।

''एकपक्षीयोऽवर्तिष्ट मम प्रणयः। अनिन्द्यसुन्दरी विश्वविद्यालयस्य सहायकाचार्यायाः सम्मानिते पदे शोशुभ्यमाना भवती किमिति मादृशे प्रायिके जने प्रणयशीला भविष्यतीति चिन्तयन्नाहमात्मनः प्रणयमभिव्याञ्जिषम्।'' भारद्वाजोऽवादीत्। ''आर्य, अपरेद्युर्मां द्रष्टुमागतेन शल्यचिकित्सकेन सह मम सम्बन्धः स्थिरोऽभविष्यच्चेत् किमभविष्यद् भवतः प्रणयस्य?'' साप्राक्षीत्।

''अत्यन्तं दुर्भाग्यपूर्णमेतदभविष्यच्चेदहं तु जीवनपर्यन्तमविवाहित एवास्थास्यम्।'' भारद्वाजः प्रत्यवोचत्। ''एतत्तु महदनर्थमभविष्यत्। सम्प्रति किमावाभ्यां करणीयम्?'' सान्वयुक्त। ''अहं त्वेतन्मात्रं जाने यदहं त्वयि स्निह्यामि। अतः पूर्वं चक्रवाक इव दूरतस्त्वां वीक्ष्यैव सन्तुष्टोऽस्थाम्। समाति व्यक्ते प्रणये प्रतिदानं प्राप्य कृतकृत्योऽस्मि। अद्याहमात्मनो जननीजनकौ सर्वं मनोगतं ख्यापयित्वा तावेतदर्थमनुनेतुं प्रयतिष्ये, त्वञ्चावसरं प्राप्यात्मनः कुटुम्बजनाननुनेष्यसि। यदा च त्वं कथयिष्यस्यहं तव पाणिं प्रार्थयितुं तव जननीजनकयोः सेवायामुपस्थितो भविष्यामि। ''भारद्वाजोऽवादीत्। ''समञ्जसमेतत्।'' इत्युक्त्वापर्णा विषयं व्यरीरमत्। तदनन्तरमुभौ व्याख्यानाय स्वस्वकक्षायै प्रास्थिषाताम्।

टिप्पणीः पर्यवर्तिष्ठमानः–सामना करते हुए, प्रायिके जने–सामान्य व्यक्ति में।

हमारा परिवार सत् शास्त्रों का अनुसरण करने वाला परम्परावादी है। उसी तरह आपके गुरुजन भी। गुप्त वंश में उत्पन्न आपका ब्राह्मण वंश में उत्पन्न मेरे साथ विवाह हम दोनों के बड़े स्वीकार करेंगे इसमें सन्देह था। परिवार के विरोध का सामना करते हुए मैं तो आपसे प्रणय की प्रार्थना के लिए तैयार था, परन्तु आपके विषय में कुछ भी कहा नहीं जा सकता था। मेरा प्यार एकतरफा था। अनिन्द्यसुन्दरी विश्वविद्यालय के एसोसिएट प्रोफेसर के सम्मानित पद पर शोशुभ्यमान आप मेरे जैसे सामान्य जन में प्रणयशील क्यों होंगी, यह सोचते हुए मैंने अपना प्रणय व्यक्त नहीं किया।'' भारद्वाज ने कहाँ

''आर्य, परसों मुझे देखने के लिए आये शल्यचिकित्सक के साथ मेरा सम्बन्ध स्थिर हो जाता तो आपके प्यार का क्या होता?'' उसने पूछा।

''अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण यह यदि हो जाता तो मैं तो जीवनपर्यन्त अविवाहित ही रह जाता।'' भारद्वाज ने उत्तर दिया।

''यह तो बहुत बड़ा अनर्थ हो जाता। अब हमें क्या करना चाहिए?'' उसने प्रश्न किया।

''मैं तो केवल इतना जानता हूँ कि मैं तुम्हें प्यार करता हूँ। अबसे पहले चकवे की तरह तुम्हें दूर से देखकर ही सन्तुष्ट रहता था। अब प्रणय के प्रकट हो जाने पर प्रतिदान प्राप्त करके कृतकृत्य हो गया हूँ। आज मैं अपने माता–पिता को सारी मन की बात बताकर उन दोनों को इसके लिए मनाने का प्रयत्न करूँगा, और तुम अवसर पाकर अपने परिवार के लोगों को मनाओगी। और जब तुम कहोगी मैं तुम्हारा हाथ माँगने के लिए तुम्हारे माता–पिता की सेवा में उपस्थित हो जाऊँगा।'' भारद्वाज ने कहाँ ''यह ठीक है।'' यह कहकर अपर्णा ने विषय को विराम दे दिया। उसके बाद दोनों व्याख्यान देने के लिए अपनी अपनी कक्षा की ओर चल दिये।

''मातः, अहं किञ्चित् प्रार्थयितुं कामये।'' सायं समये डॉ. व्रजेशभारद्वाजो रसवत्यां चपातीः संस्कुर्वतीं जननीमभ्यधात्। ''कथय वत्स।'' जननी कौशल्या प्रत्यवोचत्। ''विश्वविद्यालये सहायकाचार्या अपर्णा इत्यभिधेया मम सहकर्मिणी वर्तते। सा मह्यं रोचते। अहं तामुपयियंसे।'' व्रजेश आत्मनो मनोगतं जनन्याः समक्षमभिव्याञ्जीत्। चपातीमम्बरीषे भर्जमानां विसृज्य पुत्रमभीक्षमाणा सा समन्दस्मितमभाषिष्ट, ''एतत्तु महत्साहसिकं कर्म सम्पादितं त्वया। कथयाहं तां प्रार्थयितुं तस्या जनकजनन्योः पार्श्वं गच्छेयमुत तावत्रागमिष्यतः?'' सान्वयुक्त।' ''प्रथमं जनकं तु पृच्छतु भवती, माननीयस्य जनकस्याभ्युपगमं विना कथमेतेन सम्भाव्यते?'' व्रजेशः प्रत्यवोचत्। ''तव विवाहोऽस्त्युभयोरेवावयोश्चिरसञ्चितः स्वप्नः। तवाभिरुचेः परिज्ञानानन्तरं तस्याभ्युपगमस्त्वनायासिद्धो भविष्यति।'' जननी व्याहार्षीत्। ''उपयुक्तमेतत्, परं सा ब्राह्मणेतरस्य वणिक् परिवारस्य दुहिता वर्तते। अपि स स्वीकरिष्यति वणिजां दुहितरं पुत्रवधूरूपेणाङ्गीकर्तुम्?'' व्रजेशोऽन्वयुक्त।

टिप्पणीः रसवत्याम्–रसोई में, संस्कुर्वन्ती–पकाती हुई, उपयियंसे–विवाह करना चाहता हूँ (उप यम, सन्नन्त, लट्,प्र0पु0ए0व0, 'उपाद् यमः स्वकरणे' पा.सू.1.3.56 इत्यात्मनेपदम्), अम्बरीषे–तवे पर, अभीक्षमाणा– एक टक देखती हुई, अभ्युपगमः–स्वीकृति।

''माता जी, मैं कुछ माँगना चाहता हूँ।'' शाम के समय डॉ. व्रजेश भारद्वाज ने रसोई में चपातियाँ बनाती हुई माँ से कहाँ ''कहो बेटा।'' माता कौशल्या ने उत्तर दिया। ''विश्वविद्यालय में एसोसिएट प्रोफेसर अपर्णा नाम की मेरी सहकर्मिणी है। वह मुझे पसन्द है। मैं उससे विवाह करना चाहता हूँ।'' व्रजेश ने अपने मन की बात माँ के सामने अभिव्यक्त कर दी।

चपाती को तवे पर पकते हुए छोड़कर बेटे को एकटक देखती हुई उसने मन्द मन्द मुस्कराते हुए उसे कहा, ''यह तो तुमने बड़ा बहादुरी का काम किया है। बता मैं उसे माँगने के लिए उसके माता–पिता के पास जाऊँ या वे यहाँ आयेंगे?'' उसने प्रश्न किया।

''पहले आप पिता जी से तो पूछ लें, माननीय पिता जी की सहमति के बिना यह कैसे हो सकता है?'' व्रजेश ने उत्तर दिया।

''तुम्हारा विवाह हम दोनों का ही चिरकाल से–सँजोया हुआ सपना है। तुम्हारी रुचि की जानकारी मिलने के बाद उनकी सहमति तो अनायाससिद्ध होगी!'' माँ ने कहाँ ''यह ठीक है, परन्तु वह ब्राह्मणेतर वणिक् परिवार की बेटी है। क्या वे बनियों की बेटी को पुत्रवधू के रूप में अपनाना स्वीकार करेंगे?'' व्रजेश ने प्रश्न किया।

''किमेतत् कृतं त्वया? वयं ब्राह्मणाः, वणिजां कन्या कथमस्माकं वधूर्भविष्यति? नैतत् सम्भवति।'' विस्मयाविष्टा सोदक्रुक्षत्। ''मातः, विवाहावसरे तस्याः पिता गोदानमिव कन्यादानं कृत्वा तां वराय यच्छेदित्यपि तस्याः स्वीकार्यं नास्ति।'' व्रजेशो जननीमसुसूचत्। ''पुत्र, भारतीयपरम्पराणां विरोधिनी कथं सास्माकं कुटुम्बे समायुक्ता भविष्यति? अलमेतादृशेन समायोगेन।'' साचकथत्। ''मातः, यथा भवती कथयति तथैव भविष्यति परं नाहं तामतिरिच्यान्यां कामपि युवतीमुपयंस्ये।'' व्रजेशः समुदैरिरत्। ''वत्स, तस्या युवत्याः प्रणयवागुरायां पाशितस्त्वं विवेकहीन इव भाषसे। नाहमस्या युवत्या विवाहप्रस्तावं तव जनकस्य समक्षमुपन्यसितुं क्षमे।'' इति जननी व्रजेशस्य प्रस्तावं कात्स्न्र्येन निरास्थत्। ''किमित्येवं विषण्णेव स्थितासि?'' म्लानमुखीमर्धाङ्गिनीं कौशल्यामवलोक्य किञ्चिदुत्कण्ठित इव राजेश्वरभारद्वाजोऽप्राक्षीत्।

''श्रूयताम्, व्रजेशः काञ्चिद् वणिजां दुहितरमुपयियंसते।'' इति साऽऽद्योपान्तं सर्वं वृत्तान्तं भर्त्रे न्यवीविदत। एतत्सर्वं श्रुत्वा चिन्तानिमग्नोऽपि सोऽर्धाङ्गिनीं सान्त्वयन्नभाषिष्ट, ''कौशल्ये, साकल्येन परिवृत्तमिदं युगम्। अद्य नास्माभिः पूर्वजैरिव सकार्कश्यं व्यवहर्तव्यम्। कदाचिद् युवा पुत्रोऽनपेक्षितमाचरेत्। नाहमेतादृशस्यान्तरजातीयस्य विवाहस्य पक्षे, परं यद्येष एव पुत्रस्य निर्बन्धस्तदावाभ्यामात्मनः पूर्वाग्रहस्त्यक्तव्य एव। सम्प्रत्यावाभ्यां द्रष्टाराविव तूष्णीमेव स्थातव्यम्।''

टिप्पणीः उदक्क्रुक्षत्–चिल्लाई, समायोगः–सम्बन्ध, प्रणयवागुरायाम्–प्रेम के जाल में, निरास्थत्–इनकार कर दिया (निर् अरू, लुङ्,प्र0पु0ए0व0), सकार्कश्यम् –कठोरतापूर्वक।

''यह तूने क्या किया?, बनियों की लड़की कैसे हमारी पुत्रवधू होगी? यह नहीं हो सकता।'' आश्चर्यचकित वह चिल्लाई। ''माँ, विवाह के अवसर पर उसका पिता गोदान की तरह कन्यादान करके उसे वर को दे, यह भी उसे स्वीकार्य नहीं है।'' व्रजेश ने माँ को सूचित किया।

''बेटा, भारतीय परम्पराओं की विरोधिनी वह हमारे परिवार में कैसे तालमेल बैठायेगी? ऐसे सम्बन्ध की जरूरत नहीं है।'' उसने कहाँ ''माता जी, जैसा आप कहती हैं वैसा ही होगा, परन्तु मैं उसे छोड़कर दूसरी किसी भी युवती से विवाह नहीं करूँगा।'' व्रजेश ने कहाँ ''बेटा, उस युवती के प्यार के जाल में फँसा हुआ तू विवेकहीन की तरह बात कर रहा है। मैं इस युवती का विवाह–प्रस्ताव तुम्हारे पिता के सामने नहीं रख सकती।'' इस प्रकार माँ ने व्रजेश का प्रस्ताव पूरी तरह मना कर दिया। ''ऐसे उदास सी क्यों बैठी हो?'' म्लानमुखी अर्धांगिनी कौशल्या को देखकर कुछ चिन्तातुर से राजेश्वर भारद्वाज ने पूछा। ''सुनिये, व्रजेश किसी बनियों की बेटी से विवाह करना चाहता है।'' इस प्रकार उसने शुरू से अन्त तक सारा वृत्तान्त पति को बता दिया। यह सब सुनकर चिन्तामग्न भी उसने अर्धांगिनी को सान्त्वना देते हुए कहा, ''कौशल्या, यह युग पूरी तरह बदला हुआ है। अब हमें पूर्वजों की तरह कठोरता से व्यवहार नहीं करना चाहिए। कहीं जवान बेटा कोई गलत कदम न उठा ले। मैं इस प्रकार के अन्तर्जातीय विवाह के पक्ष में नहीं हूँ, परन्तु यदि यही पुत्र की जिद है तो हम दोनों को अपना पूर्वाग्रह छोड़ ही देना चाहिए। अब हमें दर्शकों की तरह चुप ही रहना चाहिए।''

तस्मिन्नेव सायंकाले भोजनानन्तरं जननीजनकाभ्यां सह व्यामिश्रवार्तालापे व्यासक्तापर्णाभ्यधात्, ''मातः, तात, विश्वविद्यालये व्रजेशभारद्वाजेत्यभिधेयः सहायकाचार्योऽस्ति मम मित्रम्। आवां परस्परं प्रणयशीलौ। स उपयुक्तो जीवनसहचरः सेत्स्यतीति मम प्रतिभाति। आत्मनोऽभिप्रेतमहं भवतोः समक्षमुपन्यास्थम्। सम्प्रति यथा भवतोः समीचीनं प्रतीयेत तथा विधत्ताम्।''

''भारद्वाजास्तु ब्राह्मणा भवन्ति, किं विजातीयेन यूना सह विवाह औपयिकः स्थास्यति?'' जनकोऽप्राक्षीत्।

''अपर्णे, यद्यपि नैतदावयोः समीचीनं प्रतिभाति तथापि यदि तुभ्यमेतद्रोचते, सनिर्बन्धा चासि त्वं नावां पर्यवस्थास्यावहे।'' जननी समुदैरिरत्। ''मातः, डॉ. भारद्वाजेन सह विचारसाम्यं वर्तत आवयोः सम्बन्धस्य महार्थ आधारः, अत एव चाहमेतदर्थं सनिर्बन्धा।'' अपर्णा व्याहार्षीत्।

टिप्पणीः व्यामिश्रवार्तालापे–इधर–उधर की बातों में, व्यासक्ता–लगी हुई, उपन्यास्थम्–रख दिया है (उप नि अस्, लुङ्, उ0पु0ए0व0), औपयिकः–उचित, पर्यवस्थास्यावहे–विरोध करेंगे (परि अव स्था, लृट्, उ0पु0द्वि.व.).

उसी शाम के समय भोजन के बाद माता–पिता के साथ इधर–उधर की बातों में लगी अपर्णा ने कहा, ''माँ, पापा, विश्वविद्यालय में व्रजेश भारद्वाज नाम का एसोसिएट प्रोफेसर मेरा मित्र है। हम दोनों आपस में प्यार करते हैं। वह उपयुक्त जीवनसाथी सिद्ध होगा ऐसा मुझे लगता है। अपना अभिप्रेत (आशय) मैंने आप दोनों के सामने रख दिया है। अब जैसा आप दोनों को ठीक लगे वैसा करें।''

''भारद्वाज तो ब्राह्मण होते हैं, क्या विजातीय युवक के साथ विवाह उचित रहेगा?'' पिता ने पूछा।

''अपर्णा, यद्यपि यह हम दोनों को ठीक नहीं लगता, तथापि यदि तुम्हें यह पसन्द है, और तुम जिद पर हो तो हम दोनों विरोध नहीं करेंगे।'' माँ ने कहाँ

''माँ, डॉ. भारद्वाज के साथ विचारों में समानता हम दोनों के सम्बन्ध का महत्त्वपूर्ण आधार है, और इसीलिए मैं इसके लिए आग्रह कर रही हूँ।'' अपर्णा ने कहाँ

नैकान् विषयानधिकृत्य वैमत्येऽप्युभयोः कुटुम्बयोः डॉक्टरभारद्वाजेन सहापर्णाया विवाहः परिजनानामुपस्थितौ न्यायालये लेख्यारूढोऽभूत्। तदनन्तरञ्चोभयोः कुटुम्बजना दिशाल एकस्मिन् आयोजने विवाहमिमं रात्रिभोजेनाशुश्रवन्। सातिशयमानन्दपूर्णमवर्तिष्ट तयोर्दाम्पत्यम्। आनन्दमासं निषेवमाणौ तौ गुजरातराज्यस्य नैकान्यैतिहासिकानि स्थानान्यभ्रमताम्। पुत्रस्य विवाहात् पूर्वमपर्णाया नियमवाक्यानि श्रुत्वा राजेश्वरभारद्वाजः कौशल्या चापर्णाया विषयेऽन्यथैवाचिचिन्तताम्। परम्पराणां प्रत्युपेक्षापूर्णदृष्टिः कन्यादानसदृशस्यानुष्ठानस्यापि विरोधिनी तयोः पुत्रवधूर्नियतमेव सत्संस्कारविहीना गुरुजनान् प्रति चोपेक्षाभावयुक्तैव भविष्यतीति तावकल्पिषाताम्। पुत्रस्य निर्बन्धेन प्रवर्तितावेव तावस्मै सम्बन्धाय सज्जावभूताम्। विवाहानन्तरं तस्याः सद्व्यवहारो गुरुजनान् प्रति श्रद्धाभावः सेवाभावश्च स्थितिं कात्स्‍र्न्येन पर्यवीवृतन्। सम्प्रत्येतादृश्याः पुत्रवध्वाः प्राप्तिं तावात्मनो जन्मान्तरकृतानां पुण्यानां फलं पुत्रस्य च भाग्योदयममंसाताम्।

टिप्पणीः लेख्यारूढः–Registered, आशुश्रवन्–प्रख्यात किया, Celebrated, पर्यवीवृतन्–परिवर्तित कर दिया, आनन्दमासः–हनीमून।

दोनों परिवारों में अनेक विषयों को लेकर मतभेद होने पर भी डॉ. भारद्वाज के साथ अपर्णा का विवाह परिजनों की उपस्थिति में न्यायालय में रजिस्टर्ड हो गया। और उसके बाद दोनों के परिवारजनों ने एक विशाल आयोजन में इस विवाह को रात्रिभोज से प्रख्यात किया। उनका दाम्पत्य अत्यधिक आनन्दपूर्ण था। हनीमून का आनन्द लेते हुए वे दोनों गुजरात राज्य के अनेक ऐतिहासिक स्थान घूमे। बेटे के विवाह से पहले अपर्णा की शर्तें सुनकर राजेश्वर भारद्वाज और कौशल्या अपर्णा के विषय में अन्यथा ही सोच रहे थे। परम्पराओं के प्रति उपेक्षापूर्ण दृष्टि वाली कन्यादान जैसे अनुष्ठान की भी विरोधिनी उनकी पुत्रवधू निश्चित रूप से अच्छे संस्कारों से विहीन और गुरुजनों के प्रति उपेक्षाभाव से युक्त ही होगी यह वे कल्पना कर रहे थे। बेटे की जिद से विवश होकर ही वे इस सम्बन्ध के लिए तैयार हुए थे। विवाह के बाद उसके अच्छे व्यवहार ने, गुरुजनों के प्रति श्रद्धाभाव ने और सेवाभाव ने स्थिति को पूरी तरह बदल दिया। अब ऐसी पुत्रवधू की प्राप्ति को वे अपने जन्म–जन्मान्तर में किये गये पुण्यों का फल और पुत्र का भाग्योदय मान रहे थे।

''वर्षद्वयानन्तरमपर्णा मनोहरं प्रियं तनयमजीजनत्। ''अपर्णे, असेचनकं मनोहारि वर्ततेऽस्य रूपम्। अस्मिन्नहमात्मनो बाल्यं पश्यामि। किमस्य नाम करणीयम्? किञ्चित् कल्पितं त्वया?'' व्रजेशभारद्वाजोऽन्वयुक्त। ''मनोज इति कीदृशं नाम?'' अपर्णाप्राक्षीत्। ''अतिसुन्दरं नाम, मनोजभारद्वाज इति।'' व्रजेशः समयूयुजत्। ''किमिति भारद्वाजः? मनोज इति पर्याप्तम्।'' सातर्कत्। ''मम पिता राजेश्वरभारद्वाजः, अहं व्रजेशभारद्वाजः, मम पुत्रस्य नाम भविष्यति मनोजभारद्वाजः। वस्तुतो भारद्वाजोऽस्त्यस्माकं वंशजानामुपनाम।'' ब्रजेशः प्रत्यभाषिष्ट। ''यद्येवं तदा किमिति मनोजगुप्त इति न क्रियेतास्य नाम?'' अपर्णान्वयुक्त। ''पुत्रस्य नाम्ना सह तस्य पितुः पितामहस्य चौवोपनाम संयुक्तो भविष्यति!'' व्रजेशोऽततर्कत्। ''व्रजेश, अवितथमेवैष तव पुत्रः, परमहमपि नवाधिकमासैर्गर्भ धारयित्वैनमजीजनम्। ईषन्मात्रोऽधिकारस्तु ममापि वर्तते! यत्सत्यमस्य जन्मनि मम योगदानं सर्वाधिकं वर्तते। यदि केनचिदुपनाम्नावश्यमेव भवितव्यं तदात्वेष मनोजगुप्त एव किमिति न स्यात्?'' अपर्णान्वयुक्त।

''भारद्वाजगोत्रोत्पन्नस्य मम पुत्रो गुप्तः कथं भविष्यति?'' व्रजेशः प्रत्यवादीत्। ''यद्येवं तदा केवलं मनोजकुमार इति स्यादस्य नाम।'' अपर्णा निरणैषीत्। ''समञ्जसं कथयसि त्वम्। मनोजकुमार इत्येव भविष्यत्यस्य नाम'' व्रजेशः समुदैरिरत्।

टिप्पणीः असेचनकम्–जिसे देखते हुए जी न भरे, समयूयुजत्–जोड़ा, Added.

दो वर्ष के बाद अपर्णा ने मनोहर प्यारे बेटे को जन्म दिया।

''अपर्णा, इसका रूप इतना मनोहर है जिसे देखते हुए जी न भरे। इसमें मैं अपना बचपन देख रहा हूँ। इसका नाम क्या रखना है? कुछ सोचा है तुमने?'' व्रजेश भारद्वाज ने प्रश्न किया। ''मनोज यह कैसा नाम है?'' अपर्णा ने पूछा। ''बहुत सुन्दर नाम है, मनोज भारद्वाज।'' व्रजेश ने जोड़ा।

''भारद्वाज क्यों? मनोज यह पर्याप्त है।'' उसने तर्क दिया।

''मेरे पिता राजेश्वर भारद्वाज, मैं वजेश भारद्वाज, मेरे पुत्र का नाम होगा मनोज भारद्वाज। वस्तुतः भारद्वाज हमारे वंशजों का उपनाम है।'' व्रजेश ने उत्तर दिया।

''यदि ऐसा है तो इसका नाम मनोज गुप्त यह क्यों न किया जाये?'' अपर्णा ने प्रश्न किया। ''पुत्र के नाम के साथ उसके पिता और पितामह का ही उपनाम जुड़ेगा!'' व्रजेश ने तर्क दिया। ''व्रजेश, सचमुच ही यह तुम्हारा बेटा है, परन्तु मैंने भी नौ महीने से अधिक समय तक गर्भ में धारण करके इसको जन्म दिया है। थोड़ा सा अधिकार तो मेरा भी है! सच तो यह है कि इसके जन्म में मेरा योगदान सबसे अधिक है। यदि किसी का उपनाम अवश्य ही होना चाहिए तब तो यह मनोज गुप्त ही क्यों न हो?'' अपर्णा ने प्रश्न किया।

''भारद्वाज गोत्र में उत्पन्न मेरा पुत्र गुप्त कैसे होगा?'' व्रजेश ने उत्तर दिया।

''यदि ऐसा है तो इसका नाम केवल मनोज कुमार ही हो।'' अपर्णा ने निर्णय कर दिया। ''तुम ठीक कहती हो। मनोज कुमार यही होगा इसका नाम।'' व्रजेश ने अनुमोदन कर दिया।

4.4 कथा में युगबोध

महेश गौतम द्वारा रचित अपर्णा कहानी समकालीन संस्कृत–साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण कथा है जिसकी नायिका मध्यम वर्गीय परिवार की है। कथा में जातिवाद, कन्यादान तथा पितृ–सत्तात्मकता जैसी सामाजिक कुरीतियों अथवा कु–प्रथाओं को तोड़ते हुए, उनका विरोध करते हुए नई मान्यताओं को स्थान दिया गया है। नायिका इन सब के लिए अदम्य संघर्ष करती हुई अंत में विजयी भी होती है।

4.5 बोधप्रश्न

1. अपर्णा कहानी में कवि किन सामाजिक कुरीतियों का वर्णन करता है?
2. प्रस्तुत कथा की कथावस्तु को अपने शब्दों में लिखिए?
3. अपर्णा कथा के लेखक की रचनाओं को बताइए?

इकाई–5 डॉ0 नारायणदाशकृत 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्'

इकाई की रूपरेखा

उद्देश्य

5.1 कथाकार का जीवन परिचय

5.2 कथावस्तु

5.3 हिंदी अनुवाद

5.4 कथा में युगबोध

5.5 बोधप्रश्न

उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई कथाकाव्य पर आधारित है। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप–

1. डॉ0 नारायणदाश के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व से परिचित होंगे।
2. उनके द्वारा लिखित कथा 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' की कथावस्तु और उसके अनुवाद को समझ सकेंगे।
3. कथा के युगबोध के विषय में ज्ञान प्राप्त कर लेंगे।
4. प्रश्न–उत्तर के माध्यम से कवि एवं उनकी रचना के विषय में और अवगत हो सकेंगे।

5.1 कथाकार का जीवन परिचय

डॉ0 नारायणदाश आधुनिक संस्कृत–साहित्य के कथाकार, समीक्षक, सम्पादक के रूप में संस्कृत साहित्य की अनन्य रूप से सेवा करने वाले हैं। उनका जन्म सन् 1972 जून मास की 25 तारीख को उत्कल (उड़ीसा) प्रदेश के गज्जाम जिले के चढ़ियापल्ली ग्राम में हुआ था। आपकी माता श्रीमती मंजुलादास व पिता श्री मगुलुचरण दाश थे। श्रीजगन्नाथ संस्कृत विश्वविद्यालय से मध्यमा की शिक्षा 1987, हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय से परास्नातक 1994 में स्वर्णपदक के साथ उत्तीर्ण, साथ ही एम0फिल्, डी0फिल् की उपाधि आपने प्राप्त की।

सम्प्रति आपकी 8 मौलिक कृतियाँ प्राप्त होती हैं–जिनमें निबन्ध संग्रह, कार्गिल्लहरी नामक खण्डकाव्य, गंगे च यमुने चैव (2001) कथासंग्रह, हत्याकारी कः–स्पशकथासंग्रह, नरेन्द्र पुरीयं रेलस्थानकं–संस्कृतत्रासदकथासंग्रह आदि हैं। ओडिया तथा मैथिली, भाषा में रवीन्द्रकथासंग्रह आदि 8 कृतियों का सफलतापूर्वक आपने अनुवाद किया है। तुलनात्मक संस्कृतभाषाविज्ञानं, संस्कृतसाहित्ये रामकृष्णमठस्य योगदानम् प्रभृति 9 शोध ग्रन्थ, 18 सम्पादित ग्रन्थ, कथा–सरित् जैसी प्रतिष्ठित षाण्मासिकी पत्रिका के 25 अंकों के सम्पादक भी रहे हैं। आपके द्वारा 61 शोध–पत्र प्रकाशन, 28, ग्रन्थों की समीक्षा, 13 राष्ट्रीय व अर्न्तराष्ट्रीय सम्मेलनों में सहभागिता की गई है।

आपको उच्चकोटि की विद्वत्ता तथा काव्य रचनात्मक प्रतिभा के सम्मानार्थ कई पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। संस्कृत–कथालेखन में प्रथम पुरस्कार, दिल्ली संस्कृत अकादमी द्वारा, युवा साहित्यकार सम्मान–भाऊरावदेवरस सेवान्यास, लखनऊ, महर्षि बादरायणव्यास सम्मान, दिल्ली संस्कृत अकादमी व उत्तराखण्ड संस्कृत अकादमी द्वारा संस्कृत–कथा व नाटक–लेखन में अनेकों बार पुरस्कृत हुए है।

डॉ0 नारायण दास समकालीन संस्कृत लघु–कथा–साहित्याकाश में नवोन्मेषिनी प्रतिभा–संपन्न एक उदीयमान नक्षत्र हैं। उनका कथा–संग्रह 'गंड़े च यमुने चैव' शीर्षक से प्रकाशित है, जिसके नवीन कथा–शिल्प को समकालिक साहित्य–जगत् में प्रशस्य स्थान प्राप्त है। इस संग्रह में भाव और कला पक्ष दोनों में समान रूप से आधुनिकता द्योतित है। उनकी कथाओं में समकालीन मानव–समाज के आदर्श एवं यथार्थ, कल्पना एवं सत्य, भाव एवं बुद्धिपरक विसंगतियों को विचारात्मक पृष्ठभूमि में अभिव्यक्त किया गया है। सनातन भारतीय संस्कृति के प्रति लेखक की भावना तथा तर्कपूर्ण निष्ठा न केवल संग्रह में ही समाहित है अपितु सर्वत्र द्योतित होती है। कुतूहल, चमत्कार, जीवन–दर्शन या वातावरणीय वर्णन कथाओं की प्रमुख विशिष्टताएं हैं। प्रस्तुत कथा–संग्रह में वर्तमान समय की अनेक समस्याओं का सटीक भावात्मक क्रिया–प्रतिक्रियापरक रूपायन किया गया है। जातिप्रथा, दहेजप्रथा, भ्रष्टाचार, दरिद्रता, विज्ञान–भयावहता, छल–कपट, बलात्कार, अत्याचार, हनन आदि अनेकानेक सामाजिक समस्याओं को लेखक ने भावपूर्ण स्वर प्रदान किया है।

5.2 कथावस्तु

'सत्यम्–शिवम्–सुंदरम्' कथा में दादा और पोते की संवाद के द्वारा सनातन भारतीय संस्कृति की कथाओं, उन में प्राप्त संदेशों एवं आदर्शों को वास्तविक जीवन–जगत् की यथार्थता से संबद्ध करके ही ग्रहण करने को उचित बताया गया है।

चित्रतुरगन्याय जैसे शास्त्रीय विषय को, 64 कलाओं में वर्णित चित्रकला के समान ही काव्यकला की महत्ता को, महाभारत में वर्णित धर्मबक्युधिष्ठिरसंवाद को, शुक द्वारा की गई अतिथि सेवा को, गोकुल के ग्वालो के प्रसंग को वर्णित किया गया है।

इसके बाद अंत में कथाकार ने तीन प्रकार की शैलियों में कथा, कहानी की शैली को सर्वश्रेष्ठ बताया है। द्विवेदी जी ने वैदिक शिक्षा या प्रभुसम्मत शैली, पुराणो में वर्णित शिक्षा या मित्रसम्मत शैली और अंत में काव्य शिक्षा या कान्तासम्मित शैली की प्रधानता को और उसकी विलक्षणता को बताते हैं

तात्पर्य यह है कि Mythological या पौराणिक ज्ञान को लोक शिक्षा के साथ जोड़कर ही इसका अनुकरण करना चाहिए। तभी वह पूर्ण रूप से सत्य, शिव और सुंदर होगा।

इस प्रकार लेखक को सामाजिक समस्याओं, पारिवारिक सम्बन्धों तथा भावनात्मक द्वन्द्वों की गम्भीर समझ है, और उन्हें अभिव्यक्त करने की सराहनीय क्षमता भी है। कथावस्तु की भाव–सम्प्रेषणीयता में वातावरण के सार्थक चित्र सहायक होकर आये हैं। घटना–वैचित्र्य के स्थान पर कथाओं में भावनात्मक तथा विचारात्मक विस्तार है। कथा–दृष्टि मनोविश्लेषणात्मक होने से अन्तर्मुखी है, न कि बहिर्मुखी। कथाएँ घटना–विस्तार की अपेक्षा भावगाम्भीर्य और मार्मिकता की दृष्टि से पाठक को अधिक प्रभावित करती हैं। यहाँ घटनाओं को लम्बाई में नहीं वरन् गहराई में

नापने का श्रेयस्कर प्रयास है। प्रायः सभी पात्र जीवन के भाव–सागर में अत्यन्त गहराई तक गोते लगाते हुए अनुभव रूपी रत्न के प्रकाश में आगे बढ़ते दीखते हैं।

5.3 हिंदी अनुवाद

''सत्यं–शिवम्–सुन्दरम्''

उत्तीर्णोऽपराह्नः। शेषवैशाखस्य रौद्रातपः तथापि तीव्रतरः। ग्रीष्मकालीनो दीर्घदिवसः कथमपि समाप्तिं न याति। विद्युद्व्यजनस्य तीव्रगतितलेऽपि सुखसुषुप्तिः घर्मायते। अनन्यगत्या पितामहो जृम्भामुखेन मां दृष्टवान्। मम अवस्था ततोऽप्यधिका दुःखदायिका आसीत्। कथं ग्रीष्मावकाशो यापनीय इति मे चिन्ताभारः अनुक्षण वर्द्धते एव। समयं सरलयितुं पितामहः कथामारब्धवान् तिरुवनन्तपुरात्।

दोपहर की (समाप्ति) का समय था। वैशाख के उत्तरार्द्ध में धूप का ताप भी बहुत तेज था। गर्मी का लम्बा दिन किसी प्रकार भी खत्म नहीं हो रहा था। बिजली के पंखे की तीव्र गति के नीचे भी सोना दुखदाई है–(गर्मी देता है) पितामह ने बहुत अधिक जम्हाई लेते हुए मुझको देखा। मेरी दशा उससे भी अधिक दुःखदाई थी। गर्मी की छुट्टियां कैसे बीतें, मेरी यह चिन्ता लगातार बढ़ रही थी। बाबा ने समय को बिताने (सरल करने) के लिए तिरुवनन्तपुर से कथा शुरू की–

''अरे राजेश। अहं गतदिवसे तिरुवनन्तपुरादागतः। तत्र तु कोऽपि चिन्नामायाः कथां न जानाति। तेषां शिक्षामन्त्रिणमपि न कापि हतवती। भवान् कुतः श्रुतवान्?'' ''का चिन्नामा?'' अबोधभावेन अहं पृष्टवान्। ''अरे। भवान् खलु तद्दिने श्रावितवान्। एका सुशिक्षिता छात्रा चिन्नामा बलात्कर्तुमुद्यतं शिक्षामन्त्रिणं हत्वा निरुद्दिष्टा जाता इति।'' ''अहो! एषा कथा, नहि पितामह! तत्त्वृत्तपत्रं नासीत्। सा खलु संस्कृतपत्रिका वर्त्तते। तत्रस्थां चिन्नामायाः छुरिका' इति शीर्षक प्रकाशितां कथामेव श्रावितवान्।''

'अरे राजेश! मैं कल ही तिरुवनन्तपुर से आया हूँ। वहां तो कोई भी चिन्नामाया की कहानी को नही जानता है। उनका शिक्षामंत्री भी किसी के द्वारा नहीं मारा गया। तुमने कहाँ से सुना? ''कौन चिन्नामा?'' अबोधभाव से मैंने पूछा। ''अरे तुमने ही तो उस दिन सुनाया था।'' एक सुशिक्षित चिन्नामा नामकी छात्रा बलात्कार करने की कोशिश करने वाले शिक्षामंत्री की हत्या करके निरुद्दिष्ट हो गयी (भविष्य अंधकारमय कर लिया)! अरे यह कथा, नहीं बाबा! वह समाचारपत्र में नहीं थी। वह तो संस्कृत–पत्रिका में है। वहां 'चिन्नामायाः छुरिका' (चिन्नामाया की छुरी) शीर्षक से प्रकाशित कथा को ही आपको सुनाया था।''

''अरे। पुस्तकेषु वा पत्रिकासु वा भवतु नाम, तत्र किं मिथ्याकथा लिख्यते। भवान् कथं ताः पठति? मया तु अवधारितं, यानि पुस्तकानि प्रकाश्यन्ते तत्र केवलं सत्यमेव जयते, नानृतमिति। तर्हि एवं मिथ्याकथाः अपि भवन्ति? ताः कथं त्वया पठ्यन्ते? तव विद्यालये किं एवंविधाः मिथ्याकथाः पाठ्यन्ते? आम्, कथं वा न पाठयिष्यन्ते, म्लेच्छपाठः खलु?'' ''नहि भोः! तथा नास्ति। ताः अपि पूर्णतो मिथ्या न सन्ति। मनुष्यः किं किं कर्तुं शक्नुयात्, कथाव्याजेन तैः चरित्रैः तत्र वर्णितमस्ति।''

''अरे! पुस्तकों या पत्रिकाओं का तो क्या कहें (रहने ही दो) वहाँ झूठी कहानियां ही लिखी जाती हैं। तुम उनको कैसे पढ़ते हो? मैंने तो देखा है कि जो कुछ पुस्तकों में प्रकाशित किया जाता है केवल वही सत्य होता है। वहां झूठ नहीं होता। (तो फिर) इस प्रकार की झूठी कहानियां भी होती हैं? उनको तुम कैसे पढ़ते हो? तुम्हारे विद्यालय में क्या इसी प्रकार की झूठी कहानियाँ पढ़ाई जाती हैं? हाँ, वह भी क्यों नहीं पढ़ाई जायेगी, निश्चित रूप से म्लेच्छ या अशुद्ध ही पाठ ही तो पढ़ाए जाएंगे? ''अरे नहीं! ऐसा नहीं है, वे पूरी तरह से झूठी नहीं होती हैं। मनुष्य क्या–क्या कर सकता है, इसी बात का उन पात्रों या चरित्रों के द्वारा वर्णन किया जाता है।''

पितामहः क्रुद्धः सन् युक्तिं प्रादर्शयत्–''कथम्? मिथ्याकथाः वर्ण्यन्ते? पठतु नाम अस्माकं वेदसाहित्यम्, उपनिषदः, आरण्यकानि, ब्राह्मणानि, अष्टादशपुराणानि उपपुराणानि वा? एकपदमपि तत्र मिथ्या लभ्यते किमु?''

पितामह ने क्रोधित होते हुए अपनी बात कहीं–''क्या? मिथ्या कथा, झूठी कहानी वर्णित की जाती हैं? हमारे वेद, साहित्य, उपनिषद्, आरण्यक, ब्राह्मण, अठारह पुराणों या उपपुराणों को पढ़ा हैं? वहां एक भी शब्द (पद) झूठ प्राप्त होता है क्या?''

अहं पितामहं बोधयितुमुपायान्तरमन्विष्यन्नासम्। सहसा चित्रतुरगन्यायो बुद्धिपथारूढो जातः। मया भित्तिचित्रं दर्शयता पृष्टः पितामहः–''अत्र किं चित्रं चित्रितं लिखितं वा अस्ति?'' पितामहेनोक्तं–''कश्चन सुदक्षचित्रकारो योगेश्वरकृष्णचन्द्रस्य चित्रं निपुणं चित्रितवान्। कदम्बवृक्षमूले राधाकृष्णयोः युगलमूर्तिः। भगवान् कृष्णचन्द्रो वंशीं नादयति।''

मैं पितामह को बताने के लिए दूसरे उपाय ढूंढने लगा। सहसा 'चित्रतुरगन्याय' की बात दिमाग में आई। मैंने दीवार के चित्र को दिखाते हुए पितामह से पूछा–''यहां कौन सा चित्र बना है, या लिखा हैं? पितामह बोले–किसी निपुण (दक्ष) चित्रकार ने योगेश्वर श्रीकृष्ण का चित्र निपुणता के साथ बनाया है। कदम्बवृक्ष के नीचे राधा–कृष्ण की युगल मूर्ति है। भगवान् कृष्ण वंशी को बजा रहे हैं।

अबोध एव अहं पृष्टवान्–''वंशीस्वरस्तु न श्रूयते?'' पितामहो रुष्टभावेन कथितवान्–''अरे! म्लेच्छपाठं पठतां भवतां मस्तिष्काः विकृताः जाताः। एतत्तु चित्रं खलु।'' ''तर्हि एष सत्यकृष्णो नास्ति? एनं मिथ्याकृष्णं कथयतु।'' मया सयुक्तिकं प्रतिपादितम्। ''रामो रामः। मिथ्याकृष्णः किं भोः! एतत्तु कृष्णस्य चित्रम्।'' तथापि युक्तिं द्रढयन्नासीत् पितामहः।

अबोध (अज्ञान) भाव से मैंने पूछा–''किन्तु वंशी का स्वर तो नहीं सुनाई दे रहा। पितामह ने रुष्टभाव से कहा–अरे! म्लेच्छ पाठ को पढ़ते हुए तुम्हारा दिमाग विकृत हो गया। यह तो चित्र मात्र है।'' ''तो फिर यह वास्तविक कृष्ण नहीं हैं? इनको मिथ्या कृष्ण कहें।'' मैंने युक्तिपूर्वक कहाँ ''राम–राम। मिथ्याकृष्ण क्या? अरे! यह तो कृष्ण का चित्र है–उसी दृढ़ता से पितामह बोले।

अहं सहजभावेन बोधितवान्–''पितामह! चतुषष्टिकलासु (विद्यासु) चित्रकला अन्यतमा। तथैव काव्यकलायां कविः मानसिकक्रियाः कवयति। चित्रकारो यदा निपुणं चित्रयति तदा दर्शकः चित्रतुरगन्यायेन किमपि अनन्यसाधारणं तुरगविषयं प्रत्यक्षीकरोति। परन्तु असौ तुरग इति वा नेति वा कथनं न सुशकम्। तथैव कविः यदा निपुणं कवयति,

तदा पाठकः स्वत्वपरत्वांशत्यागेन साधारणीकरणेन आनन्दातिशयं प्राप्नोति। तत्र 'रामादिवत् वर्त्तितव्यं न रावणादिवत्' इति लोकशिक्षामेव प्रामुख्येन शिक्षयति सप्तकाण्डरामायणेन वाल्मीकिः।'' मम युक्तिमसहमानः पितामह उक्तवान्–''तपोनिष्ठैः महर्षिभिः लोकशिक्षार्थं वेदोपनिषद्–पुराणादीनि तु रचितानि। लौकिकव्यवहारायापि ते साधुग्रन्थाः अलम्। ज्ञानार्थं ते पठनीयाः। कथं मिथ्याग्रन्थाः पठ्यन्ते?''

मैंने सहजभाव से कहा–''पितामह! चौंसठ कलाओं (विद्याओं) में चित्रकला अद्वितीय (अन्यतम) है। उसी प्रकार काव्य कला भी, उसमें कवि मानसिक क्रिया से रचना करता है। चित्रकार जब निपुणता से चित्र बनाता है, तब दर्शक चित्रतुरगन्याय से किसी भी अनन्य साधारण तुरगविषय को प्रत्यक्ष बना देता है। किन्तु यह घोड़ा है या नहीं हैं यह कथन सम्भव नहीं है। उसी प्रकार जब कवि निपुणता से रचना करता है, तब पाठक स्वत्व–परत्व (अपना–पराया) के अंश के त्याग से, साधारणीकरण द्वारा आनन्दातिशय (अत्यधिक आनन्द को) प्राप्त करता है। वहां ''राम की तरह आचरण करना चाहिए न कि रावण की तरह'' इसी लोकशिक्षा को वाल्मीकिकृत सात काण्डों से युक्त रामायण प्रमुखता से देती है। मेरी युक्ति से असहमत होते हुए पितामह बोले–तपनिष्ठ महर्षियों ने लोकशिक्षा के लिए ही वेदोपनिषद्, पुराणादि की रचना की। लौकिक व्यवहार ज्ञान के लिए वे साधु (उत्तम) ग्रन्थ पर्याप्त है। ज्ञान के लिए उन्हें पढ़ना चाहिए। क्यों मिथ्याग्रन्थ (झूठे) पढ़ते हो?

मया पुन उपायान्तरमन्विष्टम्–''पितामह! भवता तु ज्ञातमेव महाभारतीयधर्मबकयुधिष्ठिरसंवादम्। तत्र जलमानेतुं गताः भीमार्जुननकुलसहदेवाः धर्मवकस्योत्तरं न दत्वा मूर्च्छिताः। अन्ततो गत्वा युधिष्ठिर उत्तरं प्रददाति। 'अहनि अहनि भूतानि गच्छन्ति यममन्दिरम, शेषाः जीवितुमिच्छन्ति किमाश्चर्यमतःपरम्।।' इत्यादि। किं पितामह! बको भाषितुं पारयति?''

मैंने पुनः दूसरा उपाय ढूंढा–पितामह महाभारत में वर्णित 'धर्मबकयुधिष्ठिरसंवाद' आपको तो पता ही है। वहां जल लाने के लिए गए हुए भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव धर्मवक का उत्तर न देकर (न देने के कारण) मर्च्छित हो गए। अंत में युधिष्ठिर ही उत्तर देते हैं। ''प्रतिदिन ही प्राणी यमलोक को जाते हैं, तथापि शेष बचे हुए (सभी प्राणी) जीने की ही इच्छा करते हैं, इससे बढ़कर आश्चर्य क्या है?'' इत्यादि। पितामह! क्या वक भी बोलने में समर्थ है?

अधुना मामुपहसन् पितामह उक्तवान् ''अहो! यूयं बालाः धर्मग्रन्थान्न पठथः। सर्वदा संदेशं भारतमुद्रां वा पठिष्यथ। मूलज्ञानबीजं कुतो लप्स्सते। एषा तु द्वापरयुगस्य कथाः। तदा बकाः अपि भाषन्ते स्म।''

अब मेरा उपहास उड़ाते हुए पितामह बोले–''अरे! तुम बालक लोग धर्मग्रन्थ नहीं पढ़ते हो। हमेशा संदेश या भारत मुद्रा को ही पढ़ोगे। ज्ञान का मूल (बीज) कहाँ से पाओगे। यह तो द्वापरयुग की कथा है। तब बक (बगुला) भी बोलते थे।''

तत्त्यजतु नाम। महाभारते अन्यत्र शुकस्य अतिथिसेवा वर्णिता। तत्र शुकोऽतिथिकृते आसनं जलं तण्डुलादिकं प्रयच्छति। तत्र किं सारिका धान्यात् तण्डुलं निर्मापितवती। अपरत्र पूतनाराक्षसी कथा श्रूयते, यस्याः विषपूर्णस्तन्यपानेन सहैव प्राणान् शोषितवान् भगवान् श्रीकृष्णः। पुराणानन्तरं तु पूतनारोगविशेष इति वर्णनं दृश्यते।

तर्हि किं प्रामाणिकम्? अस्तु पितामह! पूतना एकोनविंशतियोजनं व्याप्य पतिता। तर्हि गोपपुरस्य गोपालकुलं, गोपाः, गावो, वत्साः पशवः पक्षिणश्चापि मृताः स्युः, येषां कथा तु न कुत्रापि वर्णिता।''

उसको भी छोड़ो। महाभारत में अन्यत्र शुक की अतिथिसेवा भी वर्णित है। वहां तोता अतिथि के लिए आसन, जल, चावल आदि देता है। तो क्या सारिका (मैना) धान से चावल बनाती थी। दूसरी पूतना राक्षसी की कथा भी सुनी जाती है, जिसके विषपूर्ण स्तन पान के साथ भगवान् श्रीकृष्ण ने उसके प्राण भी ले लिये थे। तत्पश्चात् तो पूतना नामक रोगाविशेष का भी वर्णन प्राप्त होता है। तो क्या प्रामाणिक है? ठीक है पितामह! पूतनाा 19 योजनों को व्याप्त कर (तक फैलकर) गिरी। तो गोकुल के गोपालों का समूह, गोपियों, गाय–बछड़े, पशु–पक्षी भी मृत्यु को प्राप्त हुए होंगे, किन्तु उनकी कथा तो कहीं नहीं वर्णित है।

अधुना पितामहः संकटे पातितः। स केवलं नस्यं जिघ्रति स्म। शेषे विशीर्णः सन् पृष्टवान्–''सत्यं तु, अधुना रम्यं वृन्दावनं, गोपपुरं वा न तावत् वर्त्तते, यत्र पूतनायाः शवः पतितः स्यात्। तर्हि कथमत्र महर्षिवदव्यासेन लिखितम्?'' अहं बोधयितुं प्रायतत–''पितामह! वस्तुतः लोकशिक्षा प्रकारत्रयेण भवति। वेदस्मृत्यादेः प्रभुसम्मिता लोकशिक्षा अक्षरशः परिपालनीया भवति। एवंकृते एवंभवतीति वस्तुतत्त्वमात्रप्रकाशिका पुराणेतिहासादीनां मित्रसंमितालोकशिक्षा कर्त्तव्याकर्त्तव्यस्वेच्छानिर्भरा भवति। एतद्वयविलक्षणा कान्तासंमिता लोकशिक्षा। यथा कान्तागुरुमित्राद्यधीनमपि कान्तमितरजनवैलक्षण्येन कटाक्षभुजाक्षेपादिनां सरसतया स्वाभिमुखीकृत्य स्वस्मिन् प्रवर्त्तयति, तथा शृङ्गारादिरसपेशलतया लोकोत्तरवर्णनानिपुणकविकर्मकाव्यम्। तेन विपश्चितपश्चिमाः सहृदयहृदयाः सहृदयाः लोकशिक्षां सरसतया गृहणन्ति। अतः नात्र अप्रामाणिकत्वम्।'' अधुना पितामह उपसंहारमुखेन अवदत–''तथैव पुराणादिषु किं वर्णिमस्ति, तज्ज्ञानेन सह तत्रस्थलोकशिक्षापि निपुंण धारणीया, अनुकरणीया प्रतिपालनीया च। तदेव तत्र रम्यं, रुचिरं, सत्यं, शिवं सुन्दरञ्च।''

अब पितामह संकट में पड़ गए। वह केवल विशीर्ण होते हुए उन्होंने पूछा–'सत्य है, आज सुन्दर वृन्दावन या गोपपुर वैसे नहीं हैं जहाँ पूतना का शव गिर होगा। तो फिर कैसे वेदव्यास ऋषि ने उसे लिख दिया? मैंने बताने का प्रयत्न किया कि–''पितामह! वस्तुतः लोकशिक्षा 3 प्रकार की होती है–1. वेद स्मृति आदि की प्रभुसम्मित लोकशिक्षा अक्षरशः पालनीय होती है। 2. ऐसा करने से ऐसा होता है–इस प्रकार वस्तुतत्त्वमाात्र की प्रकाशिका पुराणइतिहास आदि की मित्रसम्मित लोक शिक्षा 'करो या न करो' यह स्वेच्छा पर निर्भर होती है। इन दोनों से विलक्षण लोकशिक्षा कान्तासम्मित होती है, जैसे कान्ता (पत्नी) गुरु, मित्रादि के अधीन होकर भी कान्ता (पति) से भिन्न लोगों को विलक्षणता के साथ कटाक्ष, भुजाक्षेप आदि द्वारा सरलता से अपनी ओर प्रवृत्त (आकर्षित) कर लेती है, वैसे ही श्रृंगारादि रस के कारण लोकोत्तर वर्णन में कवि की रचना निपुण होती है। उसी से प्रभावित सहृदय विद्वान् लोकशिक्षा को सरलता से ग्रहण कर लेते हैं। अतः श्रेष्ठ! यहां कुछ अप्रामाणिक नहीं है।'' अब पितामह ने उपसंहार (समापन) रुप में कहा–वैसे ही पुराणादि में क्या लिखा गया है, उस ज्ञान के साथ वहां की लोक शिक्षा को भी निपुणता पूर्वक धारण करना, अनुकरण करना व पालन करना चाहिए। तभी वह रम्य, रुचिर (मनोहर) सत्य, कल्याणकारी व सुन्दर होगा।

5.4 कथा में युगबोध

कथानक की प्रस्तुति, विस्तृत घटनाक्रम का संक्षिप्त और कुशल संयोजन लेखक के श्रेष्ठ साहित्यकर्म के परिचायक हैं। आपके द्वारा लिखी कथाएँ व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक समस्या और समाधानपरक तथ्यों का शोध–मात्र नहीं, वरन् उनसे सम्बद्ध भाव एवं तर्कपरक सन्तुलित तत्त्व की व्याख्या करती हैं। इनमें यान्त्रिक निर्माण ही नहीं, प्राणमय सर्जन भी है। इसमें सहृदयों के चित्त में होने वाले परिवर्तनों को लक्षित किया गया है। कवि में वास्तविक जीवन–जगत् को उसके समस्त सम्बन्धों के साथ ग्रहण कर समझने और अभिव्यक्त करने की यथार्थवादी दृष्टि है। कथाकार ने यथार्थ के साथ–साथ भाव–प्रसंग की महत्ता के अनुकूल अपनी संवेदनाओं को अभिव्यक्त किया है। उसी दृष्टि से कवि पाठक को भी उसे ग्रहण करने को कहता है।

कल्पनाप्रसूत ये कथाएँ स्वाभाविक प्रवाह में विकसित होकर कभी आदर्शोन्मुखी हो जाती हैं तो कभी यथार्थ की कटुधारा में प्रवाहमान दीखती हैं, कभी संवेगों का संतुलित चित्र खींचती हैं तो कभी बिडम्बनात्मक द्वन्द्व प्रस्तुत करती हैं। संग्रह का प्रथम–दृष्टया वैशिष्ट्य है–पात्रों व घटनाओं की समाज में सहज उपस्थिति। लेखक की सूक्ष्म और अन्वेषिका दृष्टि संग्रह की प्रस्तुत प्रत्येक कथा में है।

लेखक के गम्भीर पाण्डित्यपूर्ण विचार तथा उनके प्रयोग की सहज कुशलता उन्हें नवीन पहचान प्रदान करती है। सरलता, सहजता, प्रवाहमयता, नवीनता, उत्कृष्टता, समकालीनता तथा भावगम्यता के गुणों से समृद्ध भाषा कथा–संग्रह की श्रेष्ठता, रोचकता तथा पठनीयता की प्रबल हेतु हैं।

'सत्यम्–शिवम्–सुंदरम्' कथा में स्वदेश की संस्कृति, सभ्यता और परंपरा के प्रति प्रेम, श्रद्धा, निष्ठा और अभिमान भाव व्यंजित हुआ है।

5.5 बोधप्रश्न

1. 'सत्यम्–शिवम्–सुंदरम्' की कथावस्तु के बारे में बताइए?
2. लेखक ने किन तीन प्रकार की लोक शिक्षाओं के बारे में बताया है?
3. 'सत्यम्–शिवम्–सुंदरम्' किसकी रचना है और इसका वर्ण्य विषय क्या है?

इकाई–6 प्रो0 बनमालीविश्वालकृत 'बुभुक्षा'

इकाई की रूपरेखा

उद्देश्य

6.1 कथाकार का जीवन–परिचय

6.2 कथावस्तु

6.3 हिंदी अनुवाद

6.4 कथा में युगबोध

6.5 बोधप्रश्न

उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के बाद आप–

1. प्रो0 बनमालीविश्वाल के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व से परिचित होंगे।
2. उनके द्वारा लिखित कथा 'बुभुक्षा' की कथावस्तु और उसके अनुवाद को समझ सकेंगे।
3. कथा के युगबोध के विषय में ज्ञान प्राप्त कर लेंगे।
4. प्रश्न–उत्तर के माध्यम से कवि एवं उनकी रचना के विषय में और अवगत हो सकेंगे।

6.1 कथाकार का जीवन–परिचय

प्रो. बनमाली बिश्वाल मौलिक संस्कृत लेखक होने के साथ–साथ कवि, कथाकार, सम्पादक, समीक्षक, अनुवादक एवं शोध–मार्गनिर्देशक आदि अनेक शैक्षिक भूमिकाओं में सुप्रतिष्ठित हैं एवं संस्कृतभाषा एवं साहित्य के लिए समर्पित हैं।

प्रो0 बिश्वाल का जन्म दिनांक 04 मई, 1961 ई0 को ओडिशा के जाजपुर जिले में हुआ था। आपकी माता श्रीमती सत्यभामा बिश्वाल और पिता श्री नारायण बिश्वाल जी थे। आपने आचार्य, एम0ए0, एम0फिल्0 तथा पी–एच0डी0 की उपाधि (पूणे विश्वविद्यालय) से प्राप्त की। अपने लाईप्ज़िक एवं हाइडिलबर्ग विश्वविद्यालय, जर्मनी देश की शैक्षणिक यात्रा भी की है। आप एक सफल ब्लाग राइटर तथा यू–ट्यूबर भी हैं।

संस्कृत, अग्रेजी, हिन्दी तथा ओडिया भाषा में कविकर्म करने वाले कवि, कथाकार एवं नाट्यकार प्रो. बनमाली बिश्वाल यद्यपि जन्म से उत्कलीय हैं, उनका कर्मक्षेत्र प्रयागराज (उत्तर प्रदेश) एवं देवप्रयाग रहा है और इस समय वे व्याकरण–विभागाध्यक्ष के रूप में केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली में कार्यरत हैं। उनकी अब तक उपर्युक्त प्रायः सभी भाषाओं में सौ से अधिक पुस्तकें एवं लेख (सर्जनात्मक, मौलिक, अनूदित, शोध) प्रकाशित हैं। उनकी सर्जनात्मक कृतियों में कथा, कविता, संग्रह, शतककाव्य, खण्डकाव्य, नाटक, उपन्यास, ललितनिबन्ध, यात्रासाहित्य, महाकाव्य आदि सम्मिलित हैं। उन्होंने काव्यतत्त्वसमन्विति, हस्तलेखशास्त्र,

भारतीयदर्शनकारिका, पाश्चात्त्यदर्शनकारिका नाम से कई अभिनव शास्त्रग्रन्थ लिखने के साथ–साथ 10 से अधिक सर्जनात्मक, समीक्षात्मक शोधपत्रिकाओं के सौ से अधिक अंकों का सफल सम्पादन भी किया है तथा कई अन्य अभिनन्दन–ग्रन्थ एवं स्मृति–प्रन्थों का सम्पादन भी किया जो प्रो0 बिश्वाल की बहुमुखी शैक्षणिक प्रतिभा को दर्शाता है। साथ ही प्रातिशाख्य पारिभाषिक कोश व अन्य अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ प्रकाशनाधीन हैं।

इसके अतिरिक्त उन्होंने 150 से अधिक शोधपत्र, 70 से अधिक पुस्तकसमीक्षा, 20 से अधिक पुस्तकों का पुरोवाक् या आमुख–लेखन, 15 से अधिक लब्धप्रतिष्ठ रचनाकारों का साक्षात्कार लिया तथा 200 से अधिक अन्ताराष्ट्रिय, राष्ट्रिय सम्मेलन, संगोष्ठी, कार्यशालाओं में सक्रिय भागग्रहण करते हुये उद्घाटन–समापन समेत विविध शैक्षणिक सत्रों में अध्यक्षता की एवं विशिष्ट व्याख्यान तथा पत्र प्रस्तुत किये हैं। उन्होंने लगभग 50 शोधछात्रों का मार्गनिर्देशन भी किया है जिनमें से 45 से अधिक शोधछात्रों को विद्यावारिधि (पी–एच0डी0) उपाधि प्राप्त हैं। प्रो0 बिश्वाल की सर्जनात्मक कृतियों पर 10 से अधिक पी–एच0डी0, एम0फिल्, शोधप्रबन्ध विभिन्न विश्वविद्यालयों में प्रस्तुत भी हुये। आपकी अनेक कथा, कविता, कथासंग्रह, हिन्दी, अंग्रेजी, तेलगू, ओडिया आदि भाषाओं में अनूदित हैं।

आपके चार कथा–संग्रह नीरवस्वनः (1998) बुभुक्षा (2001), जगन्नाथचरितम् (2003) तथा जिजीविषा (2006) प्रकाशित हो चुके हैं, तथा 'गूगलगुरुः' प्रकाशन के लिए तैयार है। इन चारों कथासंग्रहों में 107 कथाएं संकलित हैं। 'नीरवस्वनः' प्रथम कथा–संग्रह में एक मूक–बधिर बालिका की कथा–व्यथा है। चम्पी, अशुभमुखः, अभीप्सा, पितृप्राणः आदि इसकी अन्य कथाएँ है। वर्तमान परिवेश में लिखी गयी ये कथाएं समाज में व्याप्त जटिलताओं, अनैतिकता, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, शोषण व विडम्बनाओं को उजागर करती हैं। बिश्वाल जी के कथा–पात्र समाज के उपेक्षित पात्र हैं। अतः ये अपनी समस्याओं को मुखर होकर बोलते हैं।

उनकी कथाओं की भावानुवर्तिनी भाषा व विषयानुकूल शैली की प्रवाहसमता, सरलता, व्यावहारिकता, स्वाभाविकता, सम्प्रेषणीयता सराहनीय है।

बिश्वाल का दूसरा कथा–संग्रह 'बुभुक्षा' है जो 25 लघु कथाओं का संकलन है। बुभुक्षा की कहानियों में चलते–फिरते जीवन के सजीव चित्र हैं। इसमें पढ़ने वाले छात्र, रेस्टोरेंट में चाय पीते पर्यटक, रिक्शा चालक, ट्रेन व बस में यात्रा करते सामान्य पात्र तथा उन पात्रों के अभावों व अन्तर्व्यथाओं को सहज सरल भाषा व कम शब्दों में कह देना उनकी विशेषता है। तीसरा संग्रह 'जगन्नाथचरितम्' है जो अन्य तीनों कथा–संग्रहों से भिन्न है। इसकी कथाएं समरसता, जाति, वर्गधर्म और भाषाई समता, मानवतावाद का संदेश देती हैं। 'जिजीविषा' आपका चतुर्थ संग्रह, जो 25 कथाओं का संकलन है, अन्य तीनों कथा–संग्रहों से प्रौढ़ है।

अपनी साहित्यिक उपलब्धि के लिए उन्हें उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान (बाणभट्ट, विविध पुरस्कार आदि), दिल्ली संस्कृत अकादमी (पण्डितराज जगन्नाथ, गिरिधरलाल–गद्यरचना पुरस्कार, अखिल भारतीय मौलिक रचना–पुरस्कार आदि), हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद (संस्कृत– महामहोपाध्याय–सम्मान), भाऊराव देवरस सेवान्यास, लखनऊ (भाउराव देवरस सम्मान), भारतीय भाषा परिषद्, कोलकाता (भारतीय भाषापरिषत् सम्मान),

उपेन्द्रभन्ज फाउंडेशन, भुवनेश्वर (उपेन्द्रभज्ज सम्मान), के0के0 वुमेन्स कालेज, बालेशोर (संस्कृतप्रतिभा सम्मान) समस्यापूर्ति पुरस्कार आदि अनेक सुप्रतिष्ठित साहित्यिक, सांस्कृतिक संस्थाओं के द्वारा 20 से अधिक बार पुरस्कृत किया जा चुका है।

6.2 कथावस्तु

'बुभुक्षा' जिसके आधार पर इस कथासंग्रह का नामकरण किया गया, भीख मांगने वाली एक अंधी बालिका की कहानी है। इसी के पास बैठा एक पंगु युवक उस बालिका के भिक्षापात्र से पैसे चुराते लेखक के द्वारा पकड़ जाता है। अपनी बूढ़ी मां, पत्नी व दो वर्ष के बच्चें के लिए भोजन जुटा पाने की विवशता उसे इस कृत्य के लिए विवश करती है। सच ही तो है ''बुभुक्षितः किन्न करोति पापम्'।।

'बुभुक्षा' व 'नीरवस्वनः' दोनों कथासंग्रहों के विषय में डॉ0 उमेशदत्त भट्ट लिखते हैं: ''समाज के दलितों, शोषितों तथा उत्पीड़ितों की करुणा ने डॉ0 बनमाली के हृदय को अपना घरौंदा बनाया है जो कथा के रूप में साकार हुआ है। पात्रों के जीवन की ये बहुमुखी झांकियां ही परोक्ष रूप से डा0 बिश्वाल का जीवन—दर्शन भी उजागर करती हैं। इनके ये सभी पात्र यह भी सिद्ध करते हैं कि बनमाली जी ने व्यथा को ही अपनी कथाओं का उत्स स्वीकार किया है। कल्पनाओं में गढ़े गये डा0 बिश्वाल के सभी पात्र भारतीय समाज के यथार्थ पर्याय हैं।

डा. विश्वाल की यह विशेषता है कि वे अपनी कथाओं में समाज के कमजोर व्यक्तियों के जीवन पर प्रकाश डालकर पाठकों को सोचने के लिए मजबूर करते हैं। चाहे बालकों पर अत्याचार हो, वृद्धों की विवशता हो अथवा समाज के कमजोर स्त्रियों पर हो रहे अत्याचार हों, अपनी कथाओं के माध्यम से वे समाज की इन कुरीतियों को बेनकाब करके समाज के ठेकेदारों को चिन्ता में डाल देते हैं। इस दृष्टि से डा0 विश्वाल कथाकार के साथ—साथ एक समाजशास्त्री भी हैं। समाज के वृद्धजन की विवशता तथा उनके प्रति आस्था, दोनों का चित्रण डा. विश्वाल की लघुकथा 'जिजीविषा' में मिलता है। इस कथा की नायिका सेवती अपने यौवन में ही पति को खोकर भी अपना धैर्य नहीं खोती तया श्रम करते हुए अपने पुत्र का पालन—पोषणा कर उसे सक्षम बनाती है।

6.3 हिंदी अनुवाद

बुभुक्षा

बहुदिनेभ्यः सायंकाले, प्रातःकाले च स्वगृहसमीपस्थं शिवमन्दिरं गच्छन् मन्दिरस्य सोपानपार्श्वे काञ्चिद् अन्धबालिकां पश्यन्नासम्। सा तत्र सोपानादधः उपविश्य भिक्षमाणा तिष्ठति स्म। बालिकायाः वयः द्वादशतमं, त्रयोदशतमं वा भवेत्। अतः मन्दिरम् आगछन्तः नैके भक्ताः दयापरवशाः सन्तः तस्यै चतुराणकं, अष्टाणकं वा दत्वा मन्दिरं गच्छन्ति स्म। अथवा केचन प्रत्यावर्तन—समये वा तस्यै किञ्चिद् दत्वा गच्छन्ति स्म।

काफी दिनों से मैं सुबह और शाम अपने ही घर के समीप विद्यमान शिवमंदिर में जाया करता था। आते—जाते समय मैं अक्सर वहाँ पर सीढ़ियों से एक किनारे बैठी एक नेत्रहीन लड़की को देखा करता था। वह वहीं सीढ़ियों के नीचे बैठकर भीख माँगा करती थी। उस अंधी लड़की की उम्र यही कोई बारह या तेरह वर्ष की रही होगी। मंदिर में पूजा करने के लिए आने वाले कई भक्त उस पर दया करके उसे चार—आठ आना देते हुए

मंदिर मैं जाया करते थे। या फिर कोई मंदिर से दर्शन करने के पश्चात् लौटते समय ही उसको कुछ देकर ही घर जाते थे। चाहे मंदिर जाते समय हो या फिर लौटते समय, किन्तु उसको देते सभी थे कुछ न कुछ।

अहमपि यदा यस्मात् कस्मात् कारणात् प्रसन्नो भवामि तदा तस्यै किञ्चिवद् दत्वा एव मन्दिरं गच्छामि। मम यदि कदाचित् परिवर्तनस्य आवश्यकता भवति तर्हि अहं तस्याः एवं बालिकायाः समीपं गत्वा पञ्चरूप्यकाणि, दशरूप्यकाणि वा दत्वा परिवर्तनं च गृहीत्वा आगच्छामि। अतः गच्छता कालेन सा मम परिचिताऽप्यभवत्।

हम भी, जब कभी किसी कारण से प्रसन्नचित्त रहते थे तब कुछ न कुछ उसको देते हुए ही मंदिर में जाते थे। मुझको जब कभी कुछ फुटकर की आवश्यकता होती थी तो हम उसी बालिका के समीप जाते थे और पाँच या दस रुपये उसके कटोरी में रखकर आवश्यक फुटकर लेकर वापस आ जाते थे। इसी तरह से वही मेरी परिचित भी हो गयी थी।

मन्दिर—सोपानस्य अपरस्मिन् पार्श्वे एकः पङ्गु—युवकः उपविश्य भिक्षते। परन्तु दर्शकाः भक्ताः तस्मै न तथा भिक्षां ददति यथा तस्यै बालिकायै। सः दर्शकानामेतादृशं व्यवहारं दृष्ट्वा मनसा तान् अभिक्रुष्यति स्म। तस्यै च बालिकायै मनसा भृशम् इर्ष्यते। तस्य एतादृशं मनोभावं ज्ञात्वा यदा कदा अहं तस्मै अपि अष्टाणकम्, एक—रूप्यकं वा दातुं न विस्मरामि।

उसी मंदिर की ही सीढ़ी के दूसरे किनारे पर बैठकर एक लंगड़ा युवक भी भीख माँगा करता था। किन्तु दर्शक एवं भक्त उस लंगड़े को उतनी उदारता से भिक्षा नहीं देते थे जितनी उदारता वे उस बालिका के प्रति दर्शाते थे। दर्शकों और भक्तों के इस प्रकार के व्यवहार को देखकर वह लंगड़ा बालक मन ही मन उन पर क्रोधित भी होता था। यही नहीं। उस बालिका से भी वह मन ही मन बहुत ईर्ष्या करने लगा। उस बालक के इस प्रकार के मनोभाव को ताड़कर मैं उसको भी कभी कभार रुपया आठ आना देना नहीं भूलता था।

सा अन्धा बालिका एतद् ज्ञातुं न प्रभवति स्म यत् तस्मै पङ्गु—युवकाय किं मिलति किं वा न मिलतीति। परन्तु सः पङ्गु—युवकः सर्वं पश्यन्नासीत्। अतस्तस्य मनसि स्वाभाविकं कष्टं भवति स्म।

उस लंगड़े लड़के को क्या मिलता था क्या नहीं उस लड़की को कुछ भी पता नहीं हो पाता था। अंधी जो ठहरी। किन्तु वह लंगड़ा लड़का तो सब कुछ देखता—ताकता रहता था। अतएव उसको मन ही मन स्वाभाविक कष्ट एवं ईर्ष्या होती थी।

अकस्मात् एकदा अहम् अपश्यं यत् सः पङ्गु—युवकः तस्याः बालिकायाः समीपे एव उपविश्य भिक्षां याचमानोऽस्ति। किं विचिन्त्य सः तत्र उपविष्टः स्याद् इत्यहं निश्चप्रचं न जानामि। सम्भवतः स्थानपरिवर्तनस्य कश्चन लाभः तस्मै मिलिष्यतीति बुद्ध्या सः तत्र उपविष्टवान् स्यात्। परन्तु मम कृते सः महतः विस्मयस्य विषयः आसीत् यत् तथापि दर्शकानां दया तस्यां बालिकायामेव अधिका दृश्यते स्म, न तु तस्मिन् युवके। स्थानपरिवर्तनस्य लाभः तं पङ्गु—युवकं न मिलतीति विज्ञाय मम मनसि तस्योपरि काचिद् दया आगतवती। अतः तस्मै झटित्येव एकरूप्यकं दत्वा अहं मन्दिरं गतवान्। सोऽपि तत् सहर्षं स्वीकृत्य ''ईश्वरः भवतां मङ्गलं विदधातु'' इति आशीर्वादं दत्तवान्।

अचानक एक दिन मैंने देखा कि वह लंगड़ा भी उस लड़की के ही समीप बैठकर भिक्षा माँग रहा है। क्या सोच कर वह वहाँ बैठा है इस विषय में मैं कुछ भी निश्चित रूप से नहीं सोच पाया। हो सकता है कि स्थान–परिवर्तन से कुछ लाभ हो जाय इस आशय से उसने वहाँ बैठने का निश्चय किया हो। कारण चाहे जो भी हो, लेकिन मेरे लिए तो यह एक आश्चर्य का विषय बन गया था। पर उसके बावजूद भी दर्शकों की दया उस अंधी बालिका पर ही अधिक लक्षित होती थी न कि उस लंगड़े युवक पर। इस प्रकार स्थान बदल देने के उपरान्त भी उस लंगड़े युवक को कोई लाभ नहीं मिल पा रहा है, यह सोचकर मेरे मन में उसके प्रति कुछ दया का संचार हो आया। अतएव मैंने झट से उसको एक रुपया निकालकर दिया और मंदिर में दर्शनार्थ चला गया। 'भगवान् आप का भला करें' ऐसी शुभकामना करते हुए उसने सहर्ष मेरे द्वारा दिए गए उस पैसे को रख लिया।

परस्मिन् दिनेऽपि अहं दृष्टवान् यत् सः पङ्गु–युवकः पुनरपि तत्रैव उपविष्टोऽस्ति। परन्तु जनाः तथैव उपेक्षाभावेन तस्मै दानम् अदत्वा बालिकायै दत्तवन्तः आसन्। जनानामेतादृशेन व्यवहारेण क्षुब्धः अहं यद्यपि तस्य कृते सम्वेदनशीलः आसम्, तथापि उभयोर्मध्ये तुलनायां सत्यां तयोः सा बालिका एव मम प्रियतरा आसीत्। तृतीये दिनेऽपि अहं दृष्टवान् यत् सः युवकः तत्रैव उपविशति। तस्य रहस्यं मम बुद्धौ न अस्फुरत्। एतदपि भवेत् यत् सः तत्र उपविश्य स्थानसिद्धिं कल्पयन्नस्ति। अनन्तरं तस्य लाभस्तस्मै मिलिष्यति कदाचित्। एषः तस्य कश्चित् अन्धविश्वासोऽपि भवितुमर्हति। वस्तुतः अस्माकं जीवनं, जीवनपरम्परा च नैकम् अन्धविश्वासमाधृत्य जीवन्त्यस्ति।

दूसरे दिन भी मैंने देखा कि वह लंगड़ा युवक फिर वहीं पर बैठा हुआ है जाते थे। पर उसी जगह बैठी उस अंधी लड़की को पूर्ववत् ही लोग कुछ न कुछ दिया करते थे। लोगों के इस प्रकार के व्यवहार से संवेदनशीलता के कारण मैं बहुत ही दुःखी हो जाता था किन्तु फिर भी उन दोनों में से उस लड़की के प्रति मेरी भी सहानुभूति अपेक्षाकृत कुछ अधिक ही रहती थी। तीसरे दिन जब मैंने देखा कि वह युवक फिर वहीं पर बैठा है। इस प्रकार उसके इस स्थानपरिवर्तन का रहस्य मेरी बुद्धि में किसी भी प्रकार से घुस नहीं पा रहा था। ऐसी भी तो संभव है कि वह यह सोच कर यहाँ बैठ रहा है कि शायद यह स्थान उसके लिए अधिक फलीभूत हो सके। शायद बाद में इसका लाभ उसको मिले ही–मैंने सोचा। उसकी यह सोच कुछ अन्धविश्वासभरी भी हो सकती है। वस्तुतः हमारा जीवन तथा जीवन की तमाम परम्पराएं कई अन्धविश्वासों के ही बल पर तो चल रही हैं।

एवं कियद्दिनानन्तरम् एकदा अहं दशरूप्यकाणि परिवर्तयितुं तस्याः बालिकायाः समीपं गतवान्। तत्तु रिक्शाचालकाय दातव्यम् आसीत्। पूर्ववत् सा बालिका मह्यं तस्याः भिक्षापात्रं दत्वा अवोचत्–''स्वयमेव गृहणातु भवान्'' इति। अहं मिक्षापात्रं दृष्ट्वा आश्चर्यान्वितोऽभवम्। तत्र तु केवलं पञ्च षट् वा रूप्यकाणि आसन्। दशरूप्यकाणां परिवर्तन कथं सम्भविष्यति?

–किं तेऽद्यत्वे आयः न्यूनः भवति वा ?

–आम्। एकसप्ताहात् पश्यन्त्यस्मि यत् आयः पूर्वापेक्षया अर्धादपि न्यूनः भवति। अतः रुग्णायाः मातुः कृते औषधमपि स्वीकर्तुं न शक्नोमि।

ऐसे ही कुछ दिनों के बाद मुझे फुटकर की जरुरत पड़ी। मैं दस रूपये का फुटकर लेने उस अंधी लड़की के पास जा पहुँचा। यह फुटकर मुझे रिक्शावाले को देने थे और फुटकर मेरे पास थे नहीं। पूर्ववत् वह लड़की मेरी तरफ अपना भिक्षा–पात्र बढ़ाते हुए बोली–'आप खुद ही इसमें से लीजिए'। उसके भिक्षा–पात्र को देखकर मैं आश्चर्य–चकित सा रह गया। उसमें मात्र पाँच या छः रुपए ही थे।

ऐसे में दश रुपए का फुटकर हो पाना कैसे संभव था?

–'क्यों? आज तुम्हारी आय बहुत थोड़ी हुई है क्या?

'हां। लगभग एक सप्ताह से देख रही हूँ कि पहले की अपेक्षा आधे से भी कम आय हो रही है। इसीलिए बीमार माँ के लिए दवाई भी नहीं खरीद पा रही हूँ।

अत्र कि रहस्यं भवेदिति अहं चिन्तयन् आसम्। तदानीं सः पङ्गु–युवकोऽवदत्–

–''मम पार्श्वे दशरूप्यकाणां परिवर्तनम् अस्ति। भवान् परिवर्तनं स्वीकर्तुं शक्नोति। अहं तस्मात् युवकात् दशरूप्यकाणां परिवर्तनं गृहीत्वां रिक्शाचालकाय दत्वा गृहं प्रत्यागतवान्। परन्तु मम मनसि सन्देहस्य छाया खेलन्ती आसीत्। पूर्व तस्याः बालिकायाः आयः अधिकः भवति स्म। सांप्रतम् तस्य युवकस्य कथम्? जनास्तु इदानीमपि तस्यै बालिकायै अधिकां सहानुभूतिं दर्शयन्तो दृश्यन्ते। अत्र किम् रहस्यम्।

'आखिर इसका रहस्य क्या हो सकता है'–मैं सोचने लगा। तभी वह लंगड़ा युवक तपाक से बोला–''मेरे पास दस रुपये का फुटकर है। आप फुटकर ले सकते हैं।'' मैंने उस युवक से सकते हैं। मैंने उस युवक से दस रुपए का फुटकर ले कर रिक्शा चालक को उसका किराया दिया और घर चला गया। मैं वहाँ से चला तो गया, किन्तु सन्देह की छाया मेरे मन में सतत खेलती रही। पहले तो उस अंधी लड़की की आय ज्यादा हुआ करती थी। और अब उस युवक की कैसे अधिक होती है? जब कि लोगों की सहानुभूति अब भी उस अंधी लड़की के ही प्रति अधिक दीख पड़ती है। आखिर इसका राज क्या है?

रहस्योन्मोचनाय मम इच्छाऽभवत्। परस्मिन् दिने मन्दिरमागत्य मन्दिरस्य उपरिस्थे प्राङ्गणे आत्मानं संगोप्य उपविष्टवान्। अहं तत्र उपविश्य शिवताण्डवस्तोत्रं जपन्नासम्। परन्तु मम दृष्टिः तयोः भिक्षुकयोः उपरि आसीत्। कश्चन बालिकया प्रसारितस्य वस्त्रखण्डस्योपरि एकं रुप्यकं निक्षिप्य गतवान्। रुप्यकं वस्त्रस्योपरि अपतत्। पतने शब्दो न अभवत्। अतः बालिका तत् न उत्थापितवती। परस्मिन् क्षणे सः पङगु–युवकः इतस्ततः दृष्ट्वा तद् रूप्यकमुत्थाप्य स्वपात्रे स्थापितवान्। तद् दृश्यं दृष्ट्वा अहं हतप्रभः अभवम्।

'इस रहस्य पर से पर्दा उठाना ही चाहिए' इस प्रकार की इच्छा मेरे मन को गुदगुदाने लगी। अगले ही दिन मैं मंदिर में आया और उसके परिसर में एक जगह छिपकर बैठ गया। वहीं पर बैठकर शिव–ताण्डव स्तोत्र का पाठ करता रहा। किन्तु मेरी दृष्टि अपलक उन दोनों भिखरियों पर ही टिकी थी। इसी समय कोई भक्त आया और उस अंधी लड़की द्वारा फैलाए गए फटे कपड़े पर एक रुपया डाल कर आगे बढ़ गया। रुपया तो उस वस्त्र पर गिरा, किन्तु उसके गिरने की आवाज न आयी। इसीलिए वह लड़की उसको उठा न सकी। परन्तु अगले ही

क्षण इस लंगड़े युवक ने इधर–उधर कनखियों से देखकर अनुकूल अवसर मिलते ही दस रुपए को उठाकर अपने भिक्षापात्र में रख लिया। लंगड़े युवक की इस हरकत को देखकर मैं हतप्रभ रह गया।

पूर्वं सा बालिका तु एवं कुर्वती आसीत् यत् यदि नाणकस्य पतन–शब्दं शृणोति स्म तर्हि तस्मिन्नेव क्षणे उत्थाप्य पात्रे स्थापयति स्म। परन्तु यदि पतने शब्दः न भवति स्म तर्हि तान् अनन्तरं संगृह्णाति स्म मध्ये मध्ये। तस्य एतादृशं व्यवहारं बहु–कालात् पश्यन्नासीत् सः पङ्गुयुवकः। अतः मनसा योजनां विधाय सः स्थान–परिवर्तनं कृ तवान् आसीत्। साम्प्रतम् एवमाचरन्, स्वयोजनायां सफलः सन् सः लाभान्वितो भवति।

पहले तो उस अंधी लड़की को परेशानी नहीं थी। जब पैसा गिरने की आवाज वह सुनती थी तब उसी क्षण उसको उठाकर अपने भिक्षापात्र में रख लेती थी। अब जब पैसों के गिरने की आवाज नहीं होती थी तब वह लड़की बाद में बीच–बीच में छू–छूर कर पैसों का संग्रह कर लिया करती थी। अंधी लड़की की इस हरकत को वह युवक बहुत समय से देख रहा था। अतः मन में योजना बनाकर, जगह बदल कर बैठने लगा। अब स्थिति यह है कि वह अपनी इस योजना से पूर्ण सफल तथा लाभान्वित हो रहा है।

अस्यैतम् अपराधम् उद्घाट्य दण्डयिष्यामि इति मनसि विचारः आगतः। अतः अहं तयोः अज्ञातः तयोः समीपतरो भूत्वा पृष्ठभागे अतिष्ठम्। अनन्तरं कश्चन एकम् अष्टाणकं निक्षिप्य गतवान्। तस्यापि पतनशब्दः न अभवत्। अतः सा बालिका तदपि न उत्थापितवती। क्षणं दृष्ट्वा सः युवकः तदपि ग्रहीतुं हस्तं प्रसारितवान्। तदानीमेव अहमात्मानं प्रकाश्य तस्य हस्तं धृतवान्। सः मां तस्यां क्रोध–मुद्रायां दृष्ट्वा भीतः सन् मम पादौ धृत्वा रोदितुं प्रारब्धवान्।

'उसके इस अपराध से पर्दा हटाकर मैं अवश्य ही उसको दण्डित करूंगा' इस प्रकार का विचार मेरे मन में उठ खड़ा हुआ। अतएव उसके अनजाने में ही मैं उसके अत्यन्त समीप पहुँच गया और ठीक उसकी पीठ के पीछे जा कर बैठ गया। थोड़ी ही देर के उपरान्त कोई अन्य दाता एक अठन्नी उस अंधी लड़की के सम्मुख गिराकर चला गया। उस अठन्नी के भी गिरने की आवाज नहीं हुई। अतएव लड़की ने उस अठन्नी को भी नहीं उठाया। थोड़ी देर की ताक–झांक के पश्चात् लंगड़े युवक ने उस गिरी हुई अठन्नी को उठाने हेतु हाथ आग बढ़ाया। उसके हाथ बढ़ाते ही अपने को आगे करके मैंनें झट से उसका हाथ पकड़ लिया। मुझको ऐसी क्रोध की मुद्रा में देखकर वह अत्यन्त डर गया और पैर पकड़कर रोने लगा।

–''क्षम्यतां महाशय! मम जीवनं रक्षस्व। घटनामिमां न प्रकाशयतु। तथा सति जनाः मामत्र उपवेष्टुम् अनुमतिं न दास्यन्ति। तेन अहं, मम परिवारस्य जनाश्च बुभुक्षातः मृताः भविष्यन्ति।''

–''तव परिवारे के के सन्ति?'' अहं पृष्टवान्।

–''मम पत्नी, द्विवर्षीयः पुत्रः, मम माता च। अहं तेषां कृते वारद्वयं भोजनमपि दातुं समर्थः न भवामि। एकवारं, वारद्वयं या मम पत्नी अपि अत्र आगत्य उपविष्टवती। जनाः यद्यपि तस्यै धनं ददति स्म, तथापि मम समक्षमेव तस्यै अश्लीलान् इङ्गितान् दर्शयन्ति स्म। यदा कदा किमपि अश्लीलं मन्तव्यमपि ददति स्म। तेन क्षुब्धः सन् अहं ताम् अत्र न आनयामि। माता तु शय्यातः उत्थातुं न शक्नोति। अत्र इयम् अन्धा बालिका मम प्रतिद्वन्द्विनी वर्तते। जनाः

तस्यै अधिकं धनं ददति। मम परिवारः बुभुक्षया म्रियते। तेषाम् आवश्यकतां पूरयितुं न समर्थः अस्मि। पत्न्याः लज्जा–निवारणाय एकं वस्त्रम्, उदर–भरणाय किञ्चिद् अन्नमपि दातुं समर्थः न अस्मि। अतः विवशः सन्, लोभासक्तोऽहम् एवमाचरितवान्। मां मुञ्चतु। अहं श्वःप्रभृति अपरस्मिन् पार्श्वे, स्वस्य स्थाने उपवेक्षामि।

वह गिड़गिड़ा कर बोला–महोदय! कृपया मुझे क्षमा कर दें। मेरे जीवन की रक्षा करें। दया करके इस घटना को आगे किसी से न कहिएगा। यदि आप लोगों से यह बात बता देंगे तो लोग मेरा यहाँ बैठना मुश्किल कर देंगे। यदि ऐसा हुआ तो मैं और मेरा परिवार भूख से मर जाएगा।'

'तुम्हारे परिवार में कौन–कौन लोग हैं'–मैंने पूछा।

'मेरी पत्नी, दो वर्ष का पुत्र तथा मेरी माँ। मैं उनके लिए दो वक्त के भोजन का भी प्रबन्ध नहीं कर सकता। एक या दो बार तो मेरी पत्नी भी यहाँ बैठकर भिक्षा माँग चुकी है। लोग उसको धन तो देते थे, परन्तु मेरे समक्ष ही तरह–तरह से उसको लेकर अश्लील इशारे करते थे। कभी–कभी तो लोग बाग उससे अपनी अश्लील मंशा भी व्यक्त कर देते थे। लोगों की इन अश्लील हरकतों के चलते अब मैं उसे यहाँ ले ही नहीं आता। माँ भी इतनी कमजोर है कि अपने बिस्तर से उठ कर चल फिर ही नहीं पाती। यह अंधी लड़की यहाँ पर मेरी प्रतिद्वन्द्वी है। लोग इसको अधिक धन देते हैं। दूसरी तरफ मेरा परिवार भूख से मर रहा है। उनकी जरूरतों को मैं नहीं पूरा कर पाता हूँ। इज्जत ढ़कने के लिए पत्नी के पास एक ही वस्त्र है। पेट भरने के लिए थोड़ा सा अन्न तो मैं उसे उपलब्ध करा सकूं। अतएव लाचार होकर लालच के कारण मुझे यह सब करनाा पड़ता है। कृपया मुझे छोड़ दीजिए। कल से मैं दूसरे किनारे पर अपनी पुरानी जगह पर ही बैठूंगा।'

तस्य तद् वचनं श्रुत्वा मम तस्योपरि दया आगता। तावत् केचन जनाः तत्रागत्य प्रष्टुं प्रारभन्त–''किं संजातम्'' इति ज्ञातुम्। परन्तु मया न किञ्चित् प्रकटितम्। ''अस्माकं व्यक्तिगतम्'' इति उक्तवा अहं जनान् ततः अपसारितवान्। भाराक्रान्तेन मनसा गृहं प्रत्यागच्छन् अहं चिन्तयन् आसम्–

''बुभुक्षितः किं न करोति पापम्'' इति।

उस लंगड़े युवक की इन बातों को सुनकर मुझको उस पर दया आ गई। तब तक कुछ लोग वहाँ आ कर जिज्ञासापूर्ण दृष्टि से पूछने भी लग गये–'क्या हुआ'। पर मैंने उनसे कुछ भी जाहिर न किया। 'कुछ नहीं। मेरी व्यक्तिगत बात है।' इस प्रकार से लोगों की जिज्ञासा को शान्त कर मैंने लोगों को वहाँ से हटा दिया। इसके बाद बस ऐसे ही विचारों में खोया बड़े बोझिल मन से मैं घर लौट आया और सोचने लगा–भूखे पेट वाला क्या क्या पाप (अपराध) नहीं करता?

6.4 कथा में युगबोध

युग का बोध अर्थात् युगचेतना। यहां युग का तात्पर्य वर्तमान युग से है न कि किसी अन्य युग से। अर्थात् जिस युग में हम जी रहे हैं। वस्तुतः अपने युग के बोध के बिना कोई रचनाकार आधुनिक नहीं हो सकता। संस्कृत–साहित्य की कोई भी विधा अगर आधुनिक है तो उसमें युगबोध अवश्य है। यह युगबोध कभी सामाजिक है

तो कभी सांस्कृतिक। कभी ऐतिहासिक है तो कभी राजनैतिक या फिर कभी आध्यात्मिक है तो कभी दार्शनिक। अर्थात् युगबोध के आकार–प्रकार अनेक हो सकते हैं।

स्वातन्त्र्योत्तर काल में कथा–विधा अभिराज राजेन्द्र मिश्र, आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी, देवर्षि कलानाथ शास्त्री, केशव चन्द्र दाश, प्रभुनाथ द्विवेदी आदि कथाकारों से संवलित होती हुई नित नई ऊंचाईयों को प्राप्त कर रही है। बनमाली बिश्वाल, प्रशस्यमित्र शास्त्री, इच्छाराम द्विवेदी, नारायण दाश, रवीन्द्र कुमार पण्डा, प्रमोद कुमार नायक आदि कथाकारों द्वारा यह विधा निरन्तर यथार्थवादी समान्तर युगबोध को रेखांकित कर रही है। इस युगबोध के मूल में साहित्यिक परिवेश एवं परिस्थितियाँ, परम्परा के प्रति विद्रोह, प्रयोगशीलता की नैसर्गिक प्रवृत्ति तथा कथाकारों की व्यक्तिगत स्थापना की आकाङ्क्षा आदि रहे हैं।

'बुभुक्षा' कथासंग्रह का शीर्षक ही वर्तमान में व्याप्त बेरोजगारी, बालश्रम, रोटी के लिए संघर्ष करते आम आदमी और उससे उत्पन्न अनेकानेक समस्याओं और अत्याचारों को कह देने में सक्षम है। कम शब्दों में अधिक कह देने में बनमाली बिश्वाल की अपनी एक शैली है जो पाठक को कथा के घटनाचक्र के साथ जोड़े रहती है। क्योंकि भागती–दौड़ती व्यस्त जिंदगी में लम्बे–लम्बे कथोपथनों व लच्छेदार भाषा के लिए शायद किसी के पास समय नहीं है। संस्कृत–जगत् में कथाकार के रूप में बनमाली बिश्वाल की लोकप्रियता का यही मूल मंत्र भी है। समाज में उपेक्षित पात्रों की मनःस्थितियों को समझना, अपने इर्द–गिर्द अभावों के दंश झेलते और संवेदनाशून्य समाज से प्रताड़ित होते इन पात्रों की संवेदना को अनुभूत कर शब्द प्रदान करने तथा कथा के कलेवर में बांधने में बनमाली जी सिद्धहस्त हैं।

6.5 बोधप्रश्न

1. प्रोफेसर बिस्वाल के कितने कथा–संग्रह हैं और उनमें प्राप्त कथाओं की संख्या कितनी है?
2. कथा की कथावस्तु के कथ्य एवं लक्ष्य बारे में संक्षेप में लिखिए?
3. कथाकार का जीवन–परिचय एवं उनके सम्मानों, पुरस्कारों के बारे में एक लघु लेख लिखिए?

ROUGH WORK

ROUGH WORK

ROUGH WORK

ROUGH WORK

ROUGH WORK